वीर

बैरिस्टर जमना प्रसाद जैन



स्मृति अंक

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद
(जमनाप्रसाद)
दिल्ली

श्रमण संस्कृति एवं साहित्य का लोकप्रिय पाक्षिक

वीर

बैरिस्टर जमनाप्रसाद जैन स्मृति अंक

●

संपादक मंडल

श्री राजेन्द्रकुमार जैन
डा० हीरालाल जैन
श्री जैनेन्द्रकुमार
श्री अक्षयकुमार जैन
श्री यशपाल जैन
पं० परमेष्ठीदास जैन
पं० बनवारीलाल जैन
श्री हंसकुमार जैन
श्री यादवचंद जैन
श्री गोकुलप्रसाद जैन (संयोजक)

●

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद्
२०४, दरीबा कलाँ, दिल्ली

वर्ष : ३६ अंक : २१

तिथि : शनिवार, आषाढ़ कृष्णा अष्टमी, वीर निर्वाण संवत् २४८९

१५ जून, १९६३

वार्षिक शुल्क ४) इस अंक का मूल्य ३)

श्री विजेन्द्रकुमार जैन द्वारा नया हिन्दुस्तान प्रेस, चांदनी चौक, दिल्ली-६ में मुद्रित तथा वीर कार्यालय, २०४, दरीबा कलां दिल्ली से प्रकाशित ।

आमुख

महा पुरुषों का समाज और राष्ट्र के जीवन में बड़ा महत्व होता है। प्रत्येक समाज और राष्ट्र के जीवन में समय-समय पर इस प्रकार के महापुरुष जन्म लेते रहे हैं जिन्होंने समाज और राष्ट्र की रूढ़िग्रस्त जीवन धाराओं को परिवर्तित कर नवरस, नव जीवन, नव स्फूर्ति और नव चेतना का संचार किया। विश्व का मानव इतिहास इस बात का साक्षी है कि ऐसे महान् व्यक्तित्वों का उसमें कितना गौरवपूर्ण स्थान रहा है। उनका काल और कार्यक्षेत्र परिस्थितियों के अनुकूल भिन्न-भिन्न होते हैं।

बैरिस्टर जमनाप्रसाद ऐसे ही नररत्नों में से थे। उन्होंने स्वयं विषम परिस्थितियों से जूझ कर उनका मुकाबला किया और उन पर विजय पाकर स्वयं अपना मार्ग प्रशस्त किया; तत्पश्चात् समाजोत्थान को अपना जीवन ध्येय बनाकर जीवन भर उसकी पूर्ति और सफलता के लिए तन-मन-धन से लगे रहे और कर्त्तव्य मार्ग पर ही अपने जीवन का उत्सर्ग कर दिया।

भा० दि० जैन परिषद् को सदा से यह गौरव प्राप्त रहा है कि उसके प्राण-प्रतिष्ठापकों, व्याख्याताओं और उन्नायकों में स्वर्गीय बैरिस्टर साहब जैसे वीर, निर्भीक, उत्साही और साहसी पुरुष रहे हैं। परिषद ने जिस महत्कार्य का बीड़ा उठाया, उसी में बैरिस्टर साहब उसके अग्रणी रहे। क्या विवाह समस्या, क्या समाज की बढ़ती हुई आर्थिक विपन्नता की समस्या और तत्सम्बद्ध कारबार, नौकरी आदि की समस्या, क्या समाज के नैतिक विकास, शैक्षणिक विकास आदि की आवश्यकताएँ—इन सभी का बैरिस्टर साहब ने समाधान और मार्ग प्रशस्त करने का सराहनीय प्रयास किया और समाज के गत्यवरोध की अवस्था को दूर कर उसे विकास मार्ग पर अग्रसर किया। इस क्षेत्र में उनकी अगणित और अपरिमेय सेवाएँ हैं जिन पर आगामी पृष्ठों में अधिकारी विद्वानों द्वारा यथेष्ट प्रकाश डाला गया है।

ये महापुरुष समाज के गौरव और कीर्तिस्तम्भ होते हैं और ऐसे नररत्नों की समाज में एक अविच्छिन्न परम्परा चली आई है। ऐसी महान् आत्माओं की महती सेवाओं का समाज, देश और राष्ट्र में यथोचित समादर और सत्कार होता रहा है तथा उन्हें पदवीदानों, अभिनन्दनों आदि से विभूषित किया जाता रहा है। बैरिस्टर साहब की महान् सेवाओं को समुचित रूपेण समादृत करने की दृष्टि से उन्हें उनकी महान प्रतिष्ठा के अनुकूल एक अभिनन्दन-ग्रन्थ समर्पित किए जाने की योजना बनाई जा रही थी कि निष्ठुर विधि की विडम्बना से वह अभिलाषा मन में ही रह गई। अभिनन्दन-ग्रंथ एक स्मृति ग्रंथ के रूप में बदल गया।

जब उनके चिर वियोग में समाज पर छाये भीषण विषाद का उद्वेग किंचित न्यून हुआ और हमने चतुर्दिक दृष्टिपात किया तो पाया कि सामाजिक जीवन का कोई ऐसा महत्व शाली कार्य नहीं है जिस पर स्वर्गीय बैरिस्टर साहब के महान् व्यक्तित्व की छाप न लगी हो। वह महान् विभूति तो हम से सदा के लिए छिन ही चुकी थी, शेष थी उसकी महत्ता, प्रतिष्ठा, गौरव, इतिवृत्ति और महान् कृतित्व जिन सबकी स्मृति को स्थायित्व और अमरत्व प्रदान करने की दृष्टि से भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद के तत्वावधान में जिस स्मृति ग्रंथ की योजना बनाई गई थी, वही ग्रंथ अधिकारी विद्वानों एवं गुणी जनों के समक्ष प्रस्तुत है।

यद्यपि इस ग्रंथ के इस रूप में आने के मार्ग में अनेक दुस्तर बाधायें थीं जिन पर विजय पाकर ही यह कार्य सम्पन्न हो सका है। इन्हीं सब कारणों से इस ग्रंथ के प्रकाशन में इतना अधिक विलम्ब भी हुआ जिसके लिए परिषद को खेद है। इस ग्रंथ में सामग्री-चयन, रूपसज्जा आदि की दृष्टि से जो अनेक कमियां रह गई हैं, आशा है गुणीजन उनकी ओर ध्यान नहीं देंगे।

जिन विद्वानों एवं मनीषियों ने लेख सामग्री आदि से तथा अन्यथा इसके प्रणयन और प्रकाशन में योग दिया है, परिषद उन सबका आभारी है।

आशा है समाज इस प्रयास का समुचित स्वागत करेगा।

अक्षयकुमार जैन
प्रधान मंत्री
अखिल भारतवर्षीय दि० जैन परिषद

— इस अंक में —

शोक-सन्देश एवं श्रद्धांजलियां

बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी के असमय निधन से सारा देश शोक-निमग्न हो गया। देश भर में स्थान-स्थान पर शोक सभायें आयोजित हुईं। चारों ओर से शोक-प्रस्ताव और शोक-सन्देश एवं श्रद्धांजलियां प्राप्त होने लगीं। यह सब सामग्री इतनी प्रचुर मात्रा में है कि उसे इस अंक की सीमित परिधि में बांधना सम्भव नहीं है। जो सन्देश, संस्मरण, श्रद्धांजलियाँ एवं लेख इस अंक में आगामी पृष्ठों में आये हैं जिनके लेखकों के नाम विषय-सूची के अन्तर्गत दिये गये हैं, उनके अतिरिक्त निम्नलिखित महानुभावों की ओर से भी उस अवसर पर शोक सन्देश प्राप्त हुए थे :—

१. राय बहादुर श्री राजकुमार सिंह जैन, इन्दौर।
२. श्री जे० सी० जैन, बम्बई।
३. श्री सी० ए० विद्यार्थी, जबलपुर।
४. ले० कर्नल एल० एच० ग्रुबर्ट, सिकन्दराबाद।
५. श्री नेमीचन्द जैन, कलकत्ता।
६. श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय, डालमिया नगर।
७. श्री मंगलकिरण जैन, सहारनपुर।
८. पं० फूलचंद्र सिद्धान्त शास्त्री, बनारस।
९. श्री लालचंद सेठी, उज्जैन।
१०. श्री जस्टिस एम० बी० नियोगी, नागपुर।
११. श्री राजधरलाल जैन, रेवाड़ी।
१२. श्री देवचंद जैन, ग्वालियर।
१३. श्री श्यामलाल उपाध्याय, हरदा।
१४. श्री कन्छेदी लाल जैन, खनियाधाना, म० प्र०।
१५. श्री एन० के० स्वामी, नागपुर।
१६. सेठ लक्ष्मीचंद जैन, विदिशा।
१७. श्री नन्दकिशोर जैन, एडवोकेट, विदिशा।

गुणाः कुर्वन्ति दूतत्वं,
दूरेऽपि वसतां सताम् ।
केतकी गन्धमाघ्राय,
स्वयमायान्ति षट्पदाः ॥



स्वर्गीय बैरिस्टर जमनाप्रसाद जैन, नागपुर।



बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी व उनकी धर्मपत्नी श्रीमती श्यामाबाई जी

(छिंदवाड़ा : १९४४)

अपनी बात : अपनी कलम से

[पाठकों को यह जानकर बड़ा हर्ष होगा कि श्री जमनाप्रसाद जी ने अपनी आत्मकथा लिखनी प्रारम्भ की थी। उनकी इच्छा थी कि उनके जीवन की वे परिस्थितियाँ जिनमें से उन्हें गुजरना पड़ा था, पाठकों के सामने आयें। निस्सन्देह वे परिस्थितियाँ सार्वजनिक महत्व की हैं और उनसे प्रत्येक व्यक्ति को प्रेरणा मिल सकती है। उनकी उसी अप्रकाशित और अपूर्ण आत्मकथा से कुछ चुने हुए अंश हम यहाँ दे रहे हैं—सम्पादक]

आज ता० १६-११-५६ है। मैं सिकन्दराबाद में अपने द्वितीय पुत्र कैप्टेन राजेन्द्रकुमार का मेहमान हूँ और हृदय रोग से पीड़ित हूँ। मेरी पत्नी श्रीमती श्यामाबाई जैन भी मेरे साथ हैं। उनके गाल ब्लेडर (Gall bladder) में पथरी है और उन्हें आप्रेशन कराने की चिकित्सा विशेषज्ञ ने सलाह दी है। घर के सभी लोगों का बहुत आग्रह है कि मैं अपने संस्मरण कहीं अंकित कर दूं और एक परिवार-पत्रिका सरीखी चीज का श्रीगणेश कर दूं।

हम लोग पिठौरिया के रहने वाले हैं। पिठौरिया तहसील खुरई, जिला सागर, मध्यप्रदेश, में खुरई से खुरुकी के रास्ते पर १० या १२ मील की दूरी पर है। वहां पर एक मकान है जो खंडहर पड़ा है। मेरे आजा (बाबा) का नाम श्री भीकमचंद जी कलरैया था और मेरे पिता का नाम श्रीमान् परमानंद जी कलरैया था। मेरे पिता का जन्म स्थान पिठौरिया ही था। पिठौरिया में दूसरे कलरैया कुटुम्ब भी थे, जैसे श्री हीरालाल कलरैया, मूलचंद जी कलरैया और रतनचन्द जी कलरैया। कलरैया खानदान बहुत बड़ा खानदान है। सागर में श्री हीरालाल जी कलरैया थे। उनके पांचों पुत्र अभी जीवित हैं, जिनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—श्री पन्नालाल जी कलरैया, हुकुमचंद जी कलरैया, भागचंद जी कलरैया, देवकुमार जी कलरैया और श्री हेमन्तकुमार उर्फ कमलकुमार कलरैया।

मेरे लड़के-लड़कियों का आग्रह है कि मैं अपने संस्मरण लिखूं। यों तो खुद के बारे में कहना कुछ असभ्यता सी मालूम होती है, पर पाठकगण मुझे इसलिए माफ करेंगे कि यह सब मैं दूसरों को उत्साह देने के उद्देश्य से लिख रहा हूँ। मेरे स्वयं के अनुभवों से दूसरों को फायदा हो, इस भावना से प्रेरित होकर खुद का प्रसंग लाना जरूरी हो जावेगा।

हम लोग अठसके[1] परवार हैं। हमारी और हमारी बहनों की जब शादी हुई तब आठ सांके मिलाई जाती थीं। अब सांके कम होती जा रही हैं। परवार जाति १२ गोत्रों में विभाजित है और हर एक गोत्र में १२ मूर होते हैं। रिवाज यह था कि यह सब गोत्र और मूर जब बरक[2] जावें यानी परस्पर भिन्न होवें तब शादी होती थी। मेरे लड़के बच्चों के चार मूर अब इस प्रकार हैं।

प्रथम—बारू मूर गोहिल्ल गोत्र (यह बार और गोड़ल्ल से भिन्न है।)

द्वितीय—लड़के के मामा बहुरिया (श्री दौलतराम बाबूलाल ब्या, मुंगावली)

तृतीय—मतारी[3] के मामा खोना (कहां वाले याद नहीं)

चतुर्थ—बाप के मामा डेरिया (सर्वश्री कड़ोरेलाल जी, मुन्नालाल जी, गुलाबचंद जी, ज्ञानचंद जी, जगदलपुर)।

नाना और नानी, आजा और आजी के सांके अब प्राप्त नहीं हैं।

जन्म व माता-पिता

मेरा जन्म ता० १३-११-१९०१, तदनुसार कार्तिक सुदी २ संवत् १९५८ विक्रमी को खुरई में हुआ था। बचपन में ही मेरी माता की मृत्यु हो गई थी। इसलिये मेरा लालन-पालन मेरी फुआ प्यारीबाई ने किया था। मेरी फुआ की लड़की का नाम मुन्नाबाई था। हम सबका लालन-पालन मुलाबाई की मां अर्थात् मेरी फुआ ने ही किया था। वे ही हमारी मां थी और उनका हम लोगों के प्रति बड़ा स्वार्थत्यागमय आचरण रहा है, जिसकी बदौलत हम सब पले और यही कारण था कि मेरे पिता का मेरी फुआ की लड़की मुलाबाई पर इतना अतीव प्रेम था कि कभी किसी प्रकार का भेदभाव मालूम नहीं हुआ।

मेरे पूज्य पिता श्रीमान् परमानन्द जी कलरैया एक साधारण हैसियत के आदमी थे। उन्होंने रायबहादुर श्रीमंत सेठ मोहनलाल जी खुरई वालों के यहाँ ३० वर्ष तक, दीनबहादुर सेठ बल्लभदास जबलपुर वालों के यहाँ ६ वर्ष तक और श्री धरमचंद मोदी सागर वालों के यहाँ ६ वर्ष तक मुनीमी की। वे बहुत ही प्रभावशाली, विद्वान् व लगनशील व्यक्ति थे। बहुत ईमानदार थे। उनके नीचे जो लोग काम करते थे, वे लखपती बन बैठे थे, पर मेरे पिता जी किराये के मकान में ही रहे आये। पिता जी की इसी कर्त्तव्यशीलता और ईमानदारी का मेरे जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा, जिसके फलस्वरूप मुझे इस संसार में अनेकों कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, पर मैं कभी पीछे नहीं हटा।

उनकी सबसे बड़ी इच्छा यह थी कि वह मुझे वकील बनावेंगे। यह ख्वाहिश उनके जीवनकाल में ही पूरी हो गई थी। मैं अपने माता-पिता का एक ही पुत्र था। हां मेरी चार बहिनें थीं। उनमें से तीन की मृत्यु हो गई और चौथी विधवा है, जिनके नाम क्रमशः इस

---

१. जिनके यहां विवाह सम्बन्ध बुन्देलखण्ड की प्रथानुसार आठ सांकों का मिलान करने पर होता है।

२. बच जावें।

३. माता।

प्रकार हैं—मैंदाबाई जो मुंगावली में ब्याही थीं; रजनीबाई जो भोपाल में श्रीमान् सरदारमल जी (जुमेराली) को ब्याही थीं, मथुराबाई जो सनाई में गुलजारीलाल जी को ब्याही थी और कौंसाबाई जो पछार में मोतीलाल जी हकीम को ब्याही थीं। अब केवल कौंसाबाई ही जीवित हैं।

जिस समय मैं १३ वर्ष का था, उसी समय मेरी मां की अचानक मृत्यु हो गई थी। मेरे मामा श्री कड़ोरेलाल जी मेरी मां को जगदलपुर लिवा ले जा रहे थे। रास्ते में उनका सारा जेवर चोरी चला गया था। इससे उनके दिल पर एक गहरा आघात पहुँचा और उनकी मृत्यु हो गई। मेरे पूज्य पिता जी की मृत्यु ६४ वर्ष की अवस्था में मुंगावली में हुई थी।

शिक्षा

बचपन से ही मुझ में पढ़ने की बहुत अधिक लगन थी। मैंने सन् १९१७ में सागर हाई स्कूल से मैट्रिक पास की। सन् १९१९ में इन्दौर के क्रिश्चियन कालेज से इन्टर पास की। इन्टर में मैंने संस्कृत, गणित और इतिहास विषय लिए थे और वहां जैन होस्टल में रहा करता था, जिसका नाम नसिया जी था। सन् १९२१ में होल्कर कालेज, इन्दौर से बी० ए० पास किया। उस समय मैं होल्कर कालेज के होस्टल में रहा करता था। सन् १९२३ में मैंने एम० ए० और एल-एल० बी० की परीक्षाएँ इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से पास कीं। एम० ए० मैंने संस्कृत में किया था। इस समय मैं जैन होस्टल इलाहाबाद में रहता था।

मुझे अपने शिक्षार्थी जीवन-काल में रायपुर की मारवाड़ी सोसायटी से आर्थिक मदद मिली। जैन ट्रस्ट फंड. बम्बई और परवार सभा, सिवनी तथा जैन होस्टल, इन्दौर से भी मुझे आर्थिक सहायता मिली थी। मुझे मेरे मामा श्री करोड़ेलाल जी ने भी थोड़ी आर्थिक मदद दी थी। मैं इन सब का आभारी हूँ। मैंने नौकरी प्राप्त करते ही जितनी आर्थिक मदद मुझे जहां-जहां से मिली थी, सब लौटा दी। मैंने किसी का एक पैसा भी नहीं रखा। मेरी यही इच्छा है कि जो भी विद्यार्थी इस प्रकार की आर्थिक मदद पाता है, वह उसे बराबर लौटा देवे।

मुझे संस्कृत में रिसर्च स्कालरशिप भी मिली थी, पर मैंने वह नहीं ली। फिर सर्विस में रहकर ही मैं अप्रैल १९३२ में इंग्लैंड, बैरिस्टरी पास करने गया और वहां से अगस्त १९३३ में बैरिस्टरी पास करके लौटा।

मैं अपने बच्चों की शिक्षा के बारे में भी बड़ा सख्त था। मैं अपने लड़के-लड़कियों को ऊँची से ऊँची शिक्षा देना चाहता था और मेरी यह ख्वाहिश कुछ अंशों में पूरी भी हुई।

विवाह और संतानें

मेरी शादी सन् १९१९ में, जून मास में, मुंगावली निवासी श्रीमान् लक्ष्मणदास की सबसे छोटी सुपुत्री परमोबाई उर्फ श्यामाबाई से हुई थी और गौना सन् १९२१ में हुआ था। शादी के पहिले मैंने अपनी पत्नी को देखा भी नहीं था और न उन दिनों ऐसा देखने का रिवाज था मेरे पिता ने आकर, घोषणा कर दी कि मैं तुम्हारी सगाई कर आया हूँ। लड़की

देखने में सांवली, दुबली-पतली और मामूली है। सब कोई यही आशा करते थे और मुझे प्रोत्साहित करते रहते थे कि मैं दूसरी शादी कर लूं। कई जगहों की बातचीतें भी आईं, क्योंकि सन् १९२३ में मैं २३ वर्ष की अवस्था में एम० ए०, एल-एल० बी० हो गया था मेरा विवाह १८ वर्ष की अवस्था में हो गया था और मेरी पत्नी श्यामाबाई को इस बात का बड़ा श्रेय है कि उन्होंने अपनी धैर्य, सेवा व त्याग से सब घर का मन मोह लिया था और इतनी बड़ी घर-गृहस्थी इतनी कुशलता से चलाई। उनके इस बर्त्ताव के ही कारण यह गृहस्थी इस तरह बन पाई। पूर्ण श्रेय श्यामाबाई को ही है। वे बहुत बुद्धिमान हैं, उन्होंने बहुत काम किया, उनका स्वभाव बहुत मृदुल है और वे उदार हैं। बस उनमें एक कमी है कि हंस-हंस कर बात नहीं करने से या अपनी सचाई जता-जता कर काम न करने से दूसरों से गलतफहमी हो जाती है। दूसरेयह समझते हैं कि ये हम से नाराज हैं, या हमसे द्वेष करती हैं, पर यह बातनहीं। श्यामाबाई का सारा जीवन ही मेरे रिश्तेदारों और अपने रिश्तेदारों की सेवा करते करते बीता। दूसरे लोगों ने सदा ही उन्हें गलत समझा। मुझसे भी कई बार गलतफहमी होने के मौके आये, महीनों मैंने अनबोला रखा है, पर अब सोचता हूँ कि शायद इसमें मेरी भी भूलें रही हैं।

श्यामाबाई की संतानें बहुत योग्य हैं और सभी बच्चों का प्यार श्यामाबाई के ऊपर है। उनको अपनी मां के ऊपर ज्यादा श्रद्धा है, बनिस्बत मेरे ऊपर। पहले श्यामाबाई बच्चों की बातों में आकर मेरे ऊपर झल्लाया करती थीं, पर अब कुछ दिनों से उन्होंने बच्चों को भी समझाना शुरू कर दिया है, जब से बहुत सी बातों में हमारी बातें सही निकली तब से।

मेरी सास मेरे पास बहुत दिन रहीं। बहुत धर्मात्मा, मेहनती और स्वार्थत्यागिनी रही हैं और वही असर श्यामाबाई पर पड़ा, और हमको सबसे बड़ा फायदा हमारी सास का हमारे साथ रहने का यह हुआ कि मेरी माता नहीं थीं और उन्होंने बहुत कुछ वह कमी पूरी की। मेरी कुल ११ संतानें हुईं, जिनमें से दो लड़के और एक लड़की बचपन में ही मर गये थे। अभी चार लड़के और चार लड़कियां हैं।

मेरा सबसे बड़ा पुत्र नरेन्द्रकुमार जैन है, जो कि खुरई में सन् ८-२-१९२५ को पैदा हुआ था। उसने जबलपुर, बेमेतरा, नासिक, बिलासपुर, नागपुर व बम्बई में शिक्षा प्राप्त की। फौज में कमीशन प्राप्त कर, नैवी में केप्टेन बना। फिर, नौकरी छोड़कर वह क्वेटा गया और वहाँ से इंग्लैंड चला गया। फिर उसकी शादी बिलारी में खंडेलवाल लड़की प्रेमलता जैन से हुई। प्रेमलता जब मेरे यहाँ आई थी, तब केवल एफ० ए० पास थी। मेरे अतीव आग्रह व प्रयत्न से उसने बाकी परीक्षाएँ पास कीं। नरेन्द्रकुमार बहुत यशस्वी लड़का है, पर उस की तबियत हाल में अच्छी नहीं है। अच्छी तबियत होने पर फिर वह अपनी कर्त्तव्यशीलता दिखलावेगा, ऐसा विश्वास है। वह भी खुरई में पैदा हुआ और मैं भी खुरई में पैदा हुआ था।

दूसरे नम्बर की मेरी लड़की श्रीमती राजकुमारी जैन एम० ए०, बी० टी० है जो अभी होशंगाबाद में शिक्षक है। इसका विवाह श्री रतनकुमार जैन, प्रोफेसर, कामर्स कालेज

नागपुर के साथ हुआ है। राजकुमारी के एक लड़की है, इलाकुमारी, बहुत प्यारी लड़की है। राजकुमारी बहुत उद्यम, सेवाभाव, त्यागवृत्ति और धार्मिक भावना वाली लड़की है। इसने मकान पुखराजी कोचर हींगनघाट वालों का खरीद दिया गया है। हम लोगों के लिए राज कुमारी ने बहुत त्याग किया है। यह दमोह में पैदा हुई थी।

तीसरे नम्बर की मेरी पुत्री श्रीमती चन्द्रकुमारी जैन बी. ए. है, जो डाक्टर भागचन्द्र जी जैन को ब्याही है। भागचन्द्र जी डबल डी० एस-सी० हैं। अमेरिका ढाई साल रह कर आये। बी० एस-सी० बनारस यूनिवर्सिटी से किया था। बेंगलोर रिसर्च यूनीवर्सिटी का डिप्लोमा है। इन्जीनियरिंग कालेज जबलपुर में प्रोफेसर थे, फिर डालमियानगर और जयपुर में भी रहे। अब जपला में हैं, करीब २५००) मासिक मिलता है, बहुत होशियार हैं। इनके दो लड़के और एक लड़की हैं विनोद, विनय और मणि। बहुत होनहार बच्चे हैं। चन्द्रकुमारी का स्वभाव बहुत अच्छा है। हंसमुख व चतुर हैं।

चौथे नम्बर की लड़की नन्दनकुमारी है, जो उस समय पैदा हुई थी, जब मैं इंग्लैंड गया था। नंदन कुमारी श्रीमान् डालचन्द जी जैन को ब्याही है—फर्म श्री सेठ भगवानदास जी शोभालाल जी सागर वाले। बड़े धर्मात्मा और दानवीर हैं। लाखों का दान दे चुके हैं, सबके काम आते हैं और सभी के प्रिय हैं। अच्छे स्वभाव वाले हैं। बीड़ी तम्बाकू और पत्ती का रोजगार करते हैं। समैया-तारण पंथी हैं। पर योग मन्दिर मार्गियों को भी खूब देते हैं। इनके ऊपर श्री ब्रह्मचारी गुलाबचन्द जी का विशेष प्रभाव है। यों पूज्य श्री गणेशप्रसाद जी वर्णी ईसरी का भी बहुत प्रभाव है और उनके भक्त हैं। श्री शोभालाल जी के ऊपर श्री कान जी स्वामी जूनागढ़ का बहुत प्रभाव है और वे उनके भक्त हो गये हैं। हमेशा अब यह कहने लगे हैं, कि निश्चय ही मानो, अगर होने वाला है तो होकर रहेगा। इनकी दूसरी धर्म पत्नी का वियोग होने से बहुत विह्वल हैं। नन्दनकुमारी बहुत अच्छे स्वभाव की लड़की है, बहुत उदार है। इसकी एक लड़की नागपुर में ही मर गई थी। अब चार लड़कियाँ और एक लड़का है। मञ्जु, किरण, मणि, कल्पना और सुरेश बहुत छोटे-छोटे हैं। नन्दनकुमारी अपने माता-पिता, भाई-बहिनों, सास-ससुर, पति व सभी रिश्तेदारों की खूब सेवा करती है। कम बोलती है, और घर में सभी इसका आदर करते हैं। जब मैं विलायत में था, तब जबलपुर में पैदा हुई थी, इसलिये पहले इसे लन्दन कहते थे। श्रीमान डालचन्द्र जी बहुत ही अच्छे स्वभाव के व्यक्ति हैं, इतनी छोटी उम्र होने के बावजूद बड़े समझदार हैं और उनके कंधों पर घर की बहुत बड़ी-बड़ी जिम्मेदारियाँ हैं।

पांचवे नम्बर के मेरे पुत्र केप्टेन राजेन्द्र कुमार ई. एम. ई. सिकन्दराबाद में है। बहुत उद्यमशील, माता-पिता-भक्त, कुटुम्ब-वत्सल, स्वार्थ त्यागी और कुटुम्ब की उन्नति चाहने वाले हैं। इनकी शादी श्री हंसकुमार जैन (स्टाफ आफीसर, आर्मी हेडक्वाटर्स, नई देहली) के साथ ११ फरवरी सन् १९५९ में आदर्श सामूहिक-विवाह पद्धति से हुई थी, जिसमें दिल्ली पार्लियामेंट के स्पीकर श्री अनंत शयनम् आयंगर ने आकर उस आयोजन को सुशोभित किया था। बहुत से मिनिस्टर, पार्लियामेंट के मेम्बर, जैन-जाति के नेता, कर्नल ब्रिग्रेडियर और

बड़े २ अफसर आये थे। इस समय चार विवाह एक ही साथ हुए थे। यह अनोखी बात है कि राजेन्द्र कुमार के ससुर का नाम श्री हंसकुमार और उनकी सास का नाम हंसकुमारी और राजेन्द्रकुमार की पत्नी का नाम भी राजकुमारी है। राजकुमारी होशियार और अच्छे स्वभाव वाली नम्र लड़की है। राजकुमारी के सभी रिश्तेदारों का स्वभाव अच्छा है। इस साल बी. ए. में बैठने वाली है। मोटर चलाना सीख लिया है। रायफिल सूटिंग में सिर्फ ३ दिन की ट्रेनिंग में इनाम लिया है। पियानो बजाना सीख रही है। पेन्टिग और सिलाई में भी होशियार है। राजेन्द्र कुमार ने सन् १६५८ में पूरे कुटुंब को (राजकुमारी, चंद्रकुमारी और नंदन कुमारी को छोड़कर)—मुझे, मेरी पत्नी, सब लड़कों, छोटी लड़की, मेरी बहिन और राजकुमारी की लड़की इला को अपनी आस्टिन कार में कन्या कुमारी तक सब जैन तीर्थों व दर्शनीय स्थानों की सुखपूर्वक यात्रा करा दी। ये अमरावली में पैदा हुए थे। इनकी आंकाक्षा तो थी कि विलायत की यात्रा भी मोटर से ही की जावे। राजेन्द्र को उनकी इच्छा के विरुद्ध मैंने ही मिलिट्री एकेडेमी में भरती कराया था।

छठवें नम्बर का पुत्र संतोषकुमार जैन है जो अभी इंजीनियरिंग कालेज नागपुर में पढ़ते हैं। बहुत होशियार हैं। मैट्रिक और एफ. ए. फर्स्ट डिवीजन में पास हुए थे। बहुत होशियार, सत्यवादी, आज्ञाकारी और कर्त्तव्यशील हैं। इनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता है। घरके सब लोगों की सेवा करना चाहते हैं। दूसरों को पढ़ाने का शौक है, यहाँ तक कि परीक्षा के समय अपना पढ़ना छोड़कर दूसरों को पढ़ा देने की हिम्मत इसी की थी। यह जांजगीर, जिला बिलासपुर में पैदा हुए थे।

सांतवें नम्बर की लड़की अशोक कुमारी उर्फ ज्योति, उर्फ बेबी इस समय मैडिकल कालेज में फर्स्टईयर में है। एन. सी. सी. में भी थी। फर्स्ट डिवीजन में मेट्रिक किया था। फिर बी. एस-सी. फर्स्ट ईयर और प्रीप्रोफेसनल साथ-साथ पास किया। यह अकोला में पैदा हुई थी। इसकी इच्छा मेडिकल में भर्ती होने की नहीं थी। होम साइन्स में भर्ती कराने की कोशिश की, सफलता नहीं मिली। फिर भी अनिच्छा रहते हुए प्रयत्नशील है। मेरी राय में कुटुंब व ज्योति के हित में मेडीकल पढ़ना ही हितकारी है। यह बात भविष्य के गर्भ में है। पर हमारा आग्रह है कि ज्योति को मन लगाकर त्याग की भावना से ही मैडिकल में पढ़ते जाना चाहिये। भारतवर्ष तेजी से बदल रहा है। हमारा आदर्श सिर्फ पश्चिम की नकल करना ही रह गया है। पाश्चात्य सभ्यता में ढ़ले बिना हम रहेंगे नहीं, उन्हीं के तौर तरीके हमें अख्तयार करना पड़ेंगे। जीवन में सभी खतरों का सामना करने की तैयारी करके हमें रहना चाहिये। संसार भौतिकतावादी होता जा रहा है, इसे हम रोक नहीं सकेंगे।

आठवें नम्बर का मेरा सबसे छोटा पुत्र रवीन्द्रकुमार जैन है जो अमरावती में पैदा हुआ था। अभी आठवीं कक्षा में एस. एफ. एस. स्कूल में पढ़ता है। पढ़ने में खूब मन लगाता है। इसको क्या बनना है, यह अभी से नहीं कहा जा सकता, पर मेरी ख्वाहिश है कि पूरी और ऊंची से ऊंची शिक्षा इसे दी जावे। अगर मिलिट्री एकेडेमी में न जा सके तो आई. ए. एस. के लिए तैयार कराया जावे। सिविल जीवन में एक का रहना जरुरी है।

सर्विस का जीवन

मैंने सन् १९२३ में एम. ए. और एल-एल. बी. दोनों एक साथ किये थे। उसी वर्ष मेरे मामा जी के ऊपर जगदलपुर में एक मुकद्दमा पड़ा। उसे लड़ने के लिए मुझे बुलाया गया। मैं जगदलपुर बड़ी कठिनाइयों और कष्टों से पहुँचा, विजयानगरम् आदि होते हुए-पैदल साइकिल, बैलगाड़ी, टूटी बस इत्यादि से, पर लगन इतनी थी कि पेशी के दिन पहुँच गया और मुकद्दमा भी जीत लिया। यह मेरा पहला मुकद्दमा था। चार माह जगदलपुर में वकालत की। पहिला एल-एल. बी. वकील था, दो हजार रुपया कमाकर लाया और उसी से छोटी बहिन मथुरा बाई का ब्याह किया। फिर मैंने सन् १९२६ तक खुरई में वकालत की। उसी वर्ष मुझे बहुत बुरी तरह दस्तों की बीमारी हो गई थी। इसके बाद उसी वर्ष खुरई म्यूनिसिपेलिटी का मेम्बर चुना गया और वहां मैंने एक मकान भी खरीद लिता।

फिर जबलपुर में २४-७-१९२६ को १७५) रुपये माह पर इनकमटेक्स आफिस में सर्विस करने लगा। उस समय मैं इतना बीमार था कि जिस दिन मैंने नौकरी ज्याइन की उस दिन मैं बैठने में भी असमर्थ था। मेरे पिताजी मेरे साथ रहे और उस समय श्री के. पी. वर्मा की कृपा से जो कि इनकमटेक्स के आसिस्टेंट कमिश्नर थे, मेरा कार्य हुआ।

फिर २४-७-१९२७ को दमोह में सिविल जज के पद पर नियुक्त हुआ। अप्रैल १९-३२ में इंग्लैंड गया और वहां से अगस्त १९३३ में बैरिस्टरी पास करके लौटा। फिर हरदा, कटनी, जांजगीर, अकोला में रहा। बाद में ऐ. डी. जे. और ए. एस. जे. होकर छिंदवाड़ा आया और फिर १९४६ में अमरावती आया फिर १९४७ में दिसम्बर में नागपुर आया। वहाँ मैं इम्प्रूवमेन्ट ट्रस्ट ट्रिब्यूनलका चेयरमेन हुआ। यहीं से हमारा अधिकारियों से झगड़ा शुरु हुआ।

मैं ठीक ठीक न्याय दिलाना चाहता था। वहाँ के गृहमन्त्री यह नहीं चाहते थे। असेसर हमारे माफिक थे। चीफ मिनिस्टर के लड़के का केस मेरी कोर्ट में था। मेरे ऊपर नाजायज़ दबाव डाले जाने की कोशिश कीगई, पर मैं दबा नहीं। फलतः मुझे दूसरे नम्बर का ऐ० डी० जे० करके जगदलपुर मेरा तबादला करा दिया गया। सन् १९५५ तक मैंने बहुत मुसीबतें झेलीं। मेरे जूनियर डिस्ट्रिक्ट जज हो गये। मेरे ऊपर अयोग्यता का आक्षेप लगाया गया। डिपार्टमेण्टल एनक्वायरी हुई, बहुत चार्ज लगाये गये, पर एक भी साबित नहीं हुआ। मेरा कम्पलसरी रिटायरमेन्ट १९-२-१९५४ को होशंगाबाद से करा दिया गया। मैंने आगे बढ़ना ठीक नहीं समझा क्योंकि मुझे हृदय रोग हो गया था। मैं हृदय रोग से पिछले कई वर्षों से पीड़ित था। परन्तु मुझे सामाजिक सेवा करने का शुरू से ही शौक था। बच्चों की पढ़ाई की चिंता थी। सोचा था वकालत कर लेंगे। एनरोल भी करा लिया, कुछ दिन वकालत भी की, पर विशेष चली नहीं। इस धंधे में अपनी आत्मा के खिलाफ बहुत कुछ करना पड़ता था। ईमानदारी से कोई पैसा देता नहीं था। जज में बहुत योग्यता नहीं होती। पक्षपात होता था फिर मैंने यह पेशा भी छोड़ दिया। इस तरह मेरा यह सर्विस का समय भी। बड़ी कठिनाइयों और कष्टों के साथ समाप्त हुआ। मैं नागपुर यूनिवर्सिटी का भी कई वर्षों तक मेम्बर रहा हूँ।

मैंने सन् १९५६ में सदर वाला मकान खरीदा। ५१०००)रु० गवर्नमेन्ट से मिला था और २१०००) बीमा का मिला था। कुछ लेनदेन कर लिया। लोग पैसे खाने लगे। घबराकर मकान बनाना शुरू कर दिया। बहुत अड़चनें आईं। कारपोरेशन ने और डाक्टर दवीर व भुले फोटोग्राफर ने तो विरोध की कमर ही कस ली।

मैंने कभी स्वप्न में भी यह नहीं सोचा था कि मेरे पास इतनी जायदाद हो जायेगी यों परिस्थिति वश मैं लोभी समझा जाता हूँ पर मैं बहुत मितव्ययी हूँ, वह भी जहाँ तक खुद का संबंध है वहीं तक। जब दूसरे का प्रसंग आता है तो जितना मैंने रिश्तेदारों पर खर्च किया, दूसरों पर शायद ही कोई कर सकता है।

मुझे जायदाद खरीदने और बेंचने का बहुत शौक था। सबसे पहले मैंने अपने जीवन में खुरई में एक मकान खरीदा था। उसके बाद अपनी पत्नी के जेवर बेचकर जबलपुर में एक मकान खरीदा, किंतु कुछ परिस्थितियों से बाध्य होकर उसे बेच दिया। जोखिम उठाने की मुझे आदत सी पड़ गई है, रुपयों को कभी बेकार नहीं पड़ा रहने दिया, ब्याज पर या जायदाद में ही लगाये रखा। जियामेट्रिकल प्रापोरशन से पैसा बढ़ा। शुक्रवारी में भी एक मकान मुझे मेरे दोस्त गोविंदचंद जी ने लिवा दिया था, फिर इस मकान को भी मैंने और बनवाया।

पहले सोना २५) रु० तोले मिलता था। मैंने अपनी पत्नी को बहुत सोना ले दिया था।

खुरई में मैंने छोटे-छोटे तीन मकान व एक छिमलासे में सन् १९२६ तक ले लिये थे। फिर जबलपुर वाला बंगला सन् १९४० में लिया था। नागपुर का मकान १९४२ में लिया और एक अमरावती में सन् १९४६ में। इन सबको बढ़ी हुई कीमतों में बेचा, पैसा परतापचंद माणिकचंद हरदा, मुन्नी बप्पू जबलपुर और हंसकुमार जी खंडवा के पास ब्याज से रखा। कुछ नेशनल बांड ले लिये। कुछ रिजर्व बैंक के शेयर भी ले लिए थे। गरज यह कि रुपया बराबर बढ़ता रहा और मैंने भरपूर प्राविडेन्ट फंड व बीमा भी करा रखा था। नागपुर हाउसिंग सोसायटी से २०,०००) का कर्जा लिया। यह कर्जा सन् १९४८ में मकान बनाने को लिया था। बाद में किराये की आमदनी से व मकान बेचकर चुका भी दिया। शुक्रवारी नागपुर वाला मकान २०,०००) में लिया था। ४०,०००) और लगाये, पर १०००) मासिक से पहले कुछ दिनों तक आमदनी आती रही, बाद में वह मकान मुफ्त में गिर गया।

तीस हजार रुपयों में यह सदर वाला मकान खरीदा और करीब एक लाख और लगाया। लाइफपालिसी पर कर्जा भी लिया। सब कर्जा चुका दिया है। इसमें रहने के अलावा ७००) या ८००) मासिक की आमदनी है।

अभी अकलतरा का मकान है। मेरे मामा की लड़की सुमित्राबाई के लड़के केवलचंद की शादी मैंने कराई, इसको रोजगार में मैंने लगाया, लागत मैंने लगाई और बाद में उसने हमको बहुत धोखा दिया। बड़ी मुश्किलों से यह अकलतरा का मकान हमारे हाथ लगा,

जिसके बाबत कुछ वसूली नहीं हो रही है। इस मकान को अभी बेचना है। एक ओरियेन्टल की लाइफ पालिसी है और पत्नी की ५०००) की पालिसी न्यू एसियाटिक की है। अब मेरा मन वानप्रस्थ आश्रम लेने का है। जिम्मेदारी सिर्फ संतोष, बेबी और रवि को पढ़ाने व उनकी शादी करने की है। डा० नरेन्द्र घर का काम संभाल ले तो मैं वानप्रस्थ आश्रम ले लूं।

रिस्तेदार

मुझे रिश्तेदारों से बड़ा मोह है। कोई माने या न माने मेरे आग्रह व प्रत्यक्ष या परोक्ष मदद से ही सर्वश्री हुकुमचंदजी, भागचंदजी, देवकुमारजी, कमलकुमारजी कलरैया, शिवप्रसाद और बाबूलाल (भांजे) तथा सुरेन्द्रकुमार (भतीजा) आदि पढ़े हैं। मुझे शादियाँ कराने का भी बड़ा शौक रहा। मैंने अपने घर से अपनी तीन लड़कियों और दो लड़कों की शादियों के अलावा पचासों रिश्तेदारों की शादियां अपने घर से की हैं। सुरेन्द्रकुमार की शादी दमोह में श्री रतनलाल कप्तान की लड़की विमला के साथ, सुरेन्द्र की बड़ी बहिन सुशीला की शादी इटारसी निवासी श्रीमान पूरनचंदजी जैन के साथ सुरेन्द्र की छोटी बहिन की शादी टिमरनी निवासी बाबूलाल नौनीतराम के साथ मैंने अपने घर से की। इन तीनों बच्चों को मैंने ही पाला था, कारण कि उनके माता-पिता बचपन में ही मर गये थे। सुरेन्द्र अब इन्जीनियर है। मेरे रिश्ते के भाई वीरेन्द्रकुमार की शादी मैंने छिंदवाड़ा से की, उन्हें रोजगार में लगाया और फिर वे धोखा देकर शादी होने के २ साल बाद चले गये। फिर शिवप्रसाद और बाबूलाल, (दोनों भांजे) मेरे यहां रहकर पढ़े, उनकी शादियां मैंने कीं। शिवप्रसाद की तीनों बहिनें कस्तूरीबाई, शाँतिबाई, और ताराबाई की शादियां भी मैंने करवाईं। ताराबाई के लड़के और लड़की की शादियां भी मेरे यहां नागपुर से हुईं। इस तरह अनेकों शादियां मैंने अपने घर से कीं।

मेरे कोई भाई नहीं था, पर मुझे दूसरों को भाई कहने में बड़ा सुख मालूम होता था। उन्हें खिलाने-पिलाने में मुझे बहुत आनन्द आता था। इन सबका श्रेय मेरी पत्नी श्यामाबाई को है कि वे मेरे रिश्तेदारों की इतनी सेवा करती थीं, उन्हें अपना समझती थीं।

मेरी पत्नी के पिता श्रीमान लक्ष्मण दास जी मुंगावली के रहने वाले थे। मेरी पत्नी तीन बहिनें और दो भाई थे। श्यामाबाई के बड़े भाई श्री मोतीलाल जी क्षयरोग से बहुत पहले ही मर गये थे और छोटे भाई श्री दौलतरामजी को धोखे से किसी ने मार दिया था। केवल मोतीलालजी के एक लड़के श्री बाबूलालजी मुंगावली में हैं, जिनका दूसरा विवाह मैंने नरसिंगपुर कंदेली कराया है। बाबूलालजी की पहली पत्नी से दो संताने हैं, देवेन्द्रकुमार और वीरेन्द्रकुमार। मेरी पत्नी की एक बहन बीना ब्याही थी जो कि अपनी तीन संतानों को छोड़कर बहुत पहले मर गईं थीं। वे ही तीनों संतानें मेरी पत्नी अपने यहां ले आईं और हमारे ही घर उनकी शिक्षा और शादी विवाह हुए। वे हैं सुरेन्द्रकुमार, सुशीलाबाई और शांतिबाई। मेरी पत्नी की बड़ी बहिन और बहनोई रेवाड़ी में हैं। उनके दो लड़के और तीन लड़कियां हैं—बाबूलाल जैन, संभवकुमार जैन, शांतिबाई, प्रेमलता और सुशीलादेवी।

मेरी बुआ की लड़की मुन्नाबाई का मुझ से बहुत अधिक प्रेम था। वे बड़ी ही प्रेमी, कृपालु, उदार और अच्छे स्वभाव की थीं। उन्होंने हम लोगों की काफी मदद समय-समय पर की। उनके दो लड़के और तीन लड़कियां हैं—शिवप्रसाद, धन्नालाल, कस्तूरीबाई, शान्तिबाई और ताराबाई।

मेरी बहन मैंदाबाई के दो पुत्र थे। श्री बाबूलाल जी की अकाल मृत्यु बम्बई में हो गई थी और श्री कुन्दनलाल जी अभी मुंगावली में हैं।

हमारी बहिन कोंसाबाई ही अब जीवित हैं। उनके पति मोतीलाल जी चौधरी नागपुर में इलाज कराने आये थे। यहीं पर मेडिकल कालेज में उनकी मृत्यु हो गई थी। उनकी संतानें बड़ी योग्य हैं। ये पांच भाई हैं और दो बहनें हैं। सबसे बड़े पुत्र श्री ताराचंद जी ललितपुर में डाक्टर हैं। पिता की मृत्यु के बाद ताराचंद जी ने ही अपने भाइयों को पढ़ाया। श्री विमलकुमारजी बीना में डाक्टर हैं। उनसे तीन छोटे भाई सुबोधकुमार, श्रेयांसकुमार और अरविंदकुमार हैं।

समाज सेवा और समाज सुधार

समाज सेवा की तड़प शुरू से ही मेरे हृदय में रही है। बचपन से ही समाज सेवा करने का शौक था। इसलिए मुझे बड़ी-बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। पर मैं अपने जीवन का यह कटु अनुभव लिख रहा हूँ कि परोपकार या दूसरों की सेवा करने में मुझे अतीव आनन्द आता रहा है। सुख निवृत्ति में है, प्रवृत्ति में नहीं है। सुख पाने के लिए सीमा निर्धारित करना आवश्यक है।

जब मै छोटा था तब मैंने कई अनमेल विवाह रोके। अशोक नगर का विवाह रोकने में तो (अशोकनगर में एक बूढ़े सेठ एक छोटी उम्र का लड़की से विवाह कर रहे थे) मेरा कान तक फट गया था, ट्रेन लेट हुई, बड़ी मुसीबतें आई, पर विवाह रोक कर ही माना। इसी तरह से मैंने छोटी छोटी लड़कियों का जो विधवा हो गई थीं, विधवा विवाह चालू करवाया। दहेज प्रथा की चक्की में हमारा समाज बुरी तरह से पिस रहा था। इस दहेज प्रथा को दूर करने के लिए मैंने ही आदर्श विवाह पद्धति की प्रथा निकाली। आदर्श विवाह मेरे द्वारा ही चालू हुए। जबलपुर में शुभचन्द्रजी की सुपुत्री विमला देवी का विवाह श्री देवकुमार जी कलरैया के साथ जिस समय हुआ, उस समय बहुत विघ्न आये थे। पंडित गणेशप्रसादजी वर्णी को अपना मौन व्रत तोड़कर बातचीत करनी पड़ी थी। उसी वक्त मैंने जबलपुर में दिगम्बर जैन परिषद का जलसा श्री साहू शांतिप्रसाद जी के सभापतित्व में कराया था और चार शादियां सामूहिक विवाह पद्धति से कराई थीं और इस पद्धति का श्रीगणेश कराया था। करीब ५,००० आदमियों ने मुझे परिषद के पण्डाल से अलग कर दिया था, तो मैंने शाम को दूसरा पण्डाल बनाकर शादियां सम्पन्न कराई जिसमें १०००० के करीब की उपस्थिति थी और श्री साहूजी ने हर एक जोड़ी को १०१) का टीका किया था और श्री अयोध्याप्रसाद जी गोयलीय डालमियानगर वालों ने कहा था कि यह पद्धति रुकने वाली नहीं है। उन्होंने जनता से बुलवाया, था कि "बोलो—जमनाप्रसाद कलरैया की जय,"

"युग प्रवर्तक की जय" इत्यादि। यह बात गोयलीयजी ने भविष्य वाणी के तरीके से कही थी और उनकी यह वाणी सत्य निकली। यह पद्धति मध्यप्रदेश में तो बहुत ही ज्यादा चालू हो गई हैं। देवगढ़ के रथ में सैकड़ों विवाह हुए। जबलपुर के रथ में विवाह हुए। यू० पी० वालों के आग्रह से मैंने स्वयं अपने द्वितीय पुत्र श्री राजेन्द्रकुमारजी का दिल्ली में आदर्श विवाह किया। उन्हीं के साथ-साथ तीन विवाह और हुए। अब देहली या यू० पी० की तरफ यह प्रथा जड़ पकड़ रही है। मेरे ही आग्रह से मेरे समधी श्रीमान् भगवानदास शोभालाल जी ने इसमें मेरा सहयोग दिया और श्री शोभालालजी ने स्वयं अपने लड़के लड़कियों का आदर्श विवाह किया। अब श्रीमान् शोभालालजी इस आदर्श सामूहिक विवाह पद्धति के सभापति भी हैं। मैंने अपने पचासों रिश्तेदारों की आदर्श शादियां अपने घर से कीं। शादी करवाने का मुझे बड़ा शौक रहा है। हजारों की तादाद में शादियाँ करवाईं। रायबहादुर फतहचन्द गंगराड़े की (जो डी० सी० हो गए थे) दूसरी शादी (कश्मीर वाली) में भी मेरा बहुत हाथ था। वृद्ध विवाह और अनमेल विवाह रोकने में तो बड़ी बड़ी विपत्तियां झेलना पड़ी। सन् १९३१ में कुंजीलालल जी कठरया पछार वालों की शादी के वक्त मुझे बुरी तरह से पीटा गया। फिर सन् १९३३ में बजरंगगढ़ के हीरालाल भूत की लड़की की शादी मुंगावली के मंगलचंद जी भगत के साथ तै हो गई थी। मंगलचंद जी की उम्र ४५ साल की थी। गुना जाकर लड़कों को जबदस्ती पकड़ लाये थे। पुलिस ने मुकदमा चलाया। हमें और हमारे साथियों को गिरफ्तार किया, पर फिर बाद में रिहा हुए।

पहले बिनेकावालों को दर्शन तक नहीं करने देते थे, उनके साथ खाने पीने का व्यव-को दूर की बात थी। स्थितिपालकों से भारी लड़ाइयां लड़नी पड़ती थीं। अमरावती में प्रोफेसर हीरालाल जी जैन के यहां समाज का खाना-पीना मैंने ही शुरू करवाया। अन्तर्जातीय विवाह शुरू करवाये। चबैनी (शादी की) और मरणभोज बन्द करवाने में बड़ा प्रयत्न करना पड़ा। मैं नहीं चाहता हूँ कि मरण भोज में फिजूल खर्च हो। मैं मरणभोज का कट्टर विरोधी हूँ।

मैंने हजारों आदमियों को सर्टीफिकेट देकर, सिफारिश करके कोशिश करके छात्र-वृत्तियां दिलवाईं, नौकरी में लगवाया।

मैंने शादियों में बहुत कम खर्चा किया। हर शादी में मेरा एलान रहता था कि कोई न कोई सामाजिक कार्य होना चाहिए। किसी न किसी संस्था का अधिवेशन होना चाहिए। सब कार्यकर्ता इकट्ठे हुआ करते थे। समाज सुधार का कार्य आगे बढ़ता था। उन दिनों समाज में ऐसा करने के कारण मेरे प्रति बहुत रोश था, पर अब सबके सब इसका अनुकरण करने लगे हैं, यहां तक कि अपने लड़के बच्चों की शादियां जुटाने में मुझे इस प्रवृत्ति के कारण बहुत बड़ी-बड़ी विपत्तियाँ झेलना पड़ीं। उन दिनों यह कायदा था कि बिरादरी में पंडित लोगों को कोई भी पहले पहल अपनी शादी में शामिल होने का निमंत्रण नहीं देता था। यह विश्वास था कि अगर बुलावेंगे तो उस पाप के असर से वर और कन्या को आगे जीवन में पाप का भागी होना पड़ेगा। पर मेरे यहां की शादियों में खास तौर से मैं ऐसे लोगों को

ऐलान करके बुलाता था और मेरे यहां ऐसे सैकड़ों लोग आये। बिनेकावालों को बुलाना शुरू तो मेरे घर से ही हुआ। पं० उत्तमचंद जी वैद्य पिंडरई वालों का मुझे बड़ा सहारा रहा। वह बड़े उत्साही और लगनशील, कर्तव्य शील व्यवित थे। उनके सहयोग से मैंने बहुत से काम किये। अन्तिम समय में वे मेरे पास नागपुर आकर ही मरे।

मैंने सैकड़ों घरेलू मामले आपस में सुलझाये हैं। उन्हें अदालत में जाने से रोका और हजारों रुपये इस तरह बरबाद होने से बचाये हैं। जायदाद के तो बहुत से मामले सुलझाये हैं।

मैं अपने जीवन के कुछ कटु परन्तु कीमती अनुभव लिखना चाहता हूँ।

परोपकार या दूसरों की सेवा करने में मुझे शुरू में ही अतीव आनन्द आता रहा है, क्योंकि मैंने सुख निवृत्ति में ही माना है, प्रवृत्ति में नहीं। यही शिक्षा मैंने अपने बच्चों को भी देने की कोशिश की है। सुख पाने के लिए सीमा निर्धारित करना आवश्यक है। संसार चलाने के लिये पैसा आजकल बहुत आवश्यक हो गया है। यथेष्ट पैसा न होने से बहुत पाप करने पड़ते हैं व दुःख भोगना पड़ता है व अपमान सहने पड़ते हैं। जब एक-एक पैसा संचित करो, तब मुश्किल से बड़ी रकम इकट्ठी कर पाते हैं, इसलिए हर वक्त खर्च करते वक्त एक-एक पैसे का ध्यान रखो। मौका आने पर थैली का मुंह खोलने में संकोच मत करो।

मैंने अपने जीवन में जो सबसे बड़ी गलती की है, वह यह है कि जब मैं नौकरी में था तो उस काम को परिपूर्णता से नहीं किया। उसके साथ-साथ मैं समाज और धर्म की सेवा करने की धुन में था। मुझे अपनी नौकरी के कार्य में पूरी तौर से मन लगाने की भावना नहीं आई। ज्यादा समय मैं सेवा कार्य में लगाता रहा। मेरे दोस्त मुझे समझाते थे। मेरे चीफ जस्टिस्स सर गिलबर्ट स्टोन ने मुझे लिखकर समझाया था। मैंने कुछ दिनों के लिए यह कार्य बन्द भी कर दिया था, पर सेवा की तड़प रही ही आई, इसीलिए जहाँ तक सर्विस का ताल्लुक है, मेरा जीवन असफल रहा। मेरे जूनियर्स और मुझ से कम पढ़े लिखे लोग हाईकोर्ट जज व चीफ जस्टिस हो गये। श्री जी. पी. भट्ट, चीफ जस्टिस, जबलपुर हमेशा कहा करते थे कि उनको सर्विस दिलाने का श्रेय जमनाप्रसाद जैन को है। हीरालालजी डागा (जो सालिसिटर विभाग में हैं) देहली, फूलचंदजी जैन इत्यादि को उनकी इच्छा के विरुद्ध मैंने जबर्दस्ती करके सब जज बनवाया था। श्री कुंदनलालजी बन्दो-बार एम. ए., एल-एल. बी. की जो अब क्लास फर्स्ट, ग्रेड फर्स्ट इन्कम टैक्स आफीसर हैं, पढ़ाने व नौकरी लगाने में मेरा ही हाथ था। नरसिंहपुर व जगदलपुर में अपने घर में रख कर इन्हें वकालत की शिक्षा भी दी थी। श्री नेमीचंद जी जो आजकल श्री रमारानी व साहू शांतिप्रसादजी के प्राइवेट सेक्रेटरी हैं, उन्हें भी मैंने ही नौकरी दिलवाई थी। मोतीलालजी जैन हरदा वालों की आर्थिक स्थिति बड़ी क्षीण हो गई थी। मैंने इन्हें सर्विस में लगाया, फिर इन्होंने होशियारी से काम बढ़ाया और नौकरी छोड़ दी।

इटारसी में सन् १९३३ में अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद का मैं सभापति चुना गया और तब से आज तक लगातार कार्यकारिणी समिति का मेम्बर रहा हूँ। अखिल

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी का भी मेम्बर बहुत सालों से हूँ। रथ चलाने का मैंने बहुत विरोध किया। कई बार फिर जब कहीं कोई न माना तो वहाँ सामूहिक विवाहों का आयोजन किया। रथों के बारे में मेरा यह मत है कि रथ के नाम पर बहुत लोग इकट्ठे हो जाते हैं, पर हम उनकी व्यवस्था नहीं कर पाते हैं और बाद में बीमारी फैलती है। सैकड़ों की चोरी हो जाती है, रास्ते में लूट लिए जाते हैं। इनके नैतिक चरित्र बढ़ाने का कोई प्रबन्ध नहीं किया जाता है। बस सिर्फ मेला हो जाता है और वह भी अव्यवस्थित। अच्छी बात तो यह है कि पंगतें बन्द हो गई हैं।

अब यदि कहीं पर वेदी-प्रतिष्ठा, रथ वगैरह हों तो वे उस समय होना चाहिए जब शादी की तारीखें रखी जा सकें। जहाँ मेले सहज में ही होते हैं, वहीं पर रथ चलाए जावें, जैसे देवगढ़ में या थौबीनजी में हुआ था। बहुत पहिले से ऐलान होना चाहिए। सरकारी सहायता लेना चाहिये व उनसे व्यवस्था कराने में सहयोग होना चाहिए और हरएक ख्याल के लोगों को अपने-अपने विचार फैलाने का मौका देना चाहिये। रथों के समय जैन समाज के अधिवेशन अवश्य हों।

मुझे प्रो० हीरालालजी से विशेष सहयोग प्राप्त रहा। हम लोग इलाहाबाद, अमरावती और नागपुर में साथ-साथ भी रहे व बाकी समय में हर साल इकट्ठे सैकड़ों बातों में योगदान देते रहे। उन्होंने अपभ्रंश साहित्य की बड़ी अपूर्व सेवा की है। उन्हीं की बदौलत धवला ग्रंथ व कारंजा सीरीज का संपादन हो सका। उनके इस कार्य में मैं उनका कार्य निष्पादक रहा आया। पैसे का व बिक्री आदि का या प्रबन्ध का भार बंटाने में भी मेरा उपयोग रहा है।

सन् १९३३ में मेरा संबन्ध श्री सेठ लक्ष्मीचन्द जी सिताबराय भेलसा वालों से हुआ। इटारसी में परिषद में वह आये थे। उनका विचार रथ चलाने का था। मुझे मालूम होने पर मैं उनके पास चार बजे सुबह पहुँचा। समझाया और वह मान गये। उन्होंने धवला छपवाने के लिए ११५००) का दान दिया। उन्हें दानवीर की पदवी दी गई। सन् १९३४ में उन्होंने जैन परिषद् भेलसा में करवाई और ५०,०००) का दान जैन हाई स्कूल खोलने के लिए दिया। फिर स्कालरशिप फंड के लिए १०,०००) का और दान दिया। जैन धर्मशाला व मंदिर भी बनवाये। दान देने के बाद ही श्री राजेन्द्रकुमार पैदा हुये। बड़े सुयोग्य हैं, बी० ए०, एल-एल० बी० पास कर लिया है। बड़े विनयशील हैं। बाबू तख्तमलजी के योग से ही हाई स्कूल कालेज हो गया है और अब एक लाख रुपया साल का बजट होता है। खूब उन्नति हुई। धवला भी पूरा छप गया। सेठजी मकानों को रहन रखकर एक रुपया सैंकड़ा का व्याज बचाकर देते रहे और उसी से यह काम इतना आगे बढ़ा। मैं इनकी संस्थाओं का ट्रस्टी हूँ। सेठजी का मेरे ऊपर अत्यन्त प्रेम है। पुराने ढंग से रहते हुए भी उनके विचार बड़े सुलझे हुये हैं और हर एक अच्छे काम में मदद देते रहे हैं। ५०००) परवार सभा को भी दान दिया है, श्री राजमलजी बड़जात्या भेलसा वालों का भी अप्रत्यक्ष रूप से इन चीजों में हाथ रहा है।

मैं किससे क्या आशा करता हूं ?

मेरे आजा बहुत साधारण परिस्थिति के थे। मेरे पिता की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी, पर थे बड़े प्रतापी और कर्त्तव्यशील। उनके जीवन की यह ख्वाहिश थी कि वे मुझे वकील बनावेंगे। यह उनके जीवन काल में ही पूर्ण हो गई थी। फिर मैंने कुटुम्ब के स्तर को बनाया और उनके बनाए हुए उसूलों पर चलने से मुझे बहुत फायदा हुआ। उनकी जिन्दगी में कभी-कभी मैं उनका पालन नहीं करता था। वह मुझ पर प्रभावकारी नहीं होते थे पर पीछे मैंने महसूस किया कि जो वह कहा करते थे, वही सही था और यदि उनका कहना पूरी तरह से मैं मानता तो मैं ज्यादा उन्नति कर लेता। पर अब तो वह समय निकल गया, पछतावा भर हाथ में रह गया है। मैं अपनी संतान से यह जोर देकर कहता हूँ कि बड़ों का कहना जरूर मानना चाहिये, यद्यपि पहिले उस वक्त यह बात समझ में नहीं भी आती हो तो भी। कारण यह है कि दुनियां के अनुभव बड़ों को ज्यादा रहते हैं। यह बात श्री सेठ भगवानदासजी शोभालालजी सागर वालों के घर में बहुत अच्छी है, पर मेरे घर से यह बात उठती चली जा रही है, कारण कि सभी पढ़े लिखे हैं और हर एक का यह ख्याल है कि वह ज्यादा जानता है और बड़े बूढ़े पुराकालिक हो गये हैं। कुछ हद तक यह बात ठीक भी है पर यह प्रवृत्ति ठीक नहीं है। बड़ों की बात नहीं मानने से नुक्सान ज्यादा है, फायदा कम। हमने भी अपनी प्रवृत्ति नई पीढ़ी की बात मानने की करली है।

अब हम कुछ कटु सत्य कहना चाहते हैं जो हम महसूस करते हैं और जिनकी सत्यता और उपयोगिता बाद में सिद्ध होगी।

राजेन्द्र के प्रति

इनमें बहुत से गुण हैं। सत्य, शौच और त्याग। बहुत बुद्धिमान हैं पर संयम की बहुत कमी है। बहुत भावुक हैं और एकांगी दृष्टिकोण को सही सिद्ध करने के लिए गलत आधार लेकर तर्क व आचरण करते हैं पर हेतु फिर भी निन्दोपरि रहा है। उनके जीवन की मुख्य-मुख्य विपत्तियों पर पुनर्विचार करते हुये लिखना पड़ता है। सन् १९५० के जून में एकेडेमी देहरादून में भर्ती होने के बाद छोड़ने के लिए बड़ा भारी उपद्रव मचाया था। हमारे हितैषियों ने राजेन्द्र से कहा था कि "जज सा० ने बड़े लड़के नरेन्द्र को सेना में भर्ती करके बिगाड़ दिया, अब दूसरे लड़के को बिगाड़ने पर उतारू हैं, इत्यादि। यद्यपि राजेन्द्र की भावना एकेडेमी को छोड़ने की इसलिए थी कि वह हमारे कुटुम्ब की सेवा करे, फिर भी जो कदम वह ले रहे थे, उनके लिए व कुटुम्ब के लिये बहुत अहितकारी था। इस पर बहुत पत्र-व्यवहार हुआ पर मेरे पक्के बने रहने के कारण बड़े भारी खतरे से बचे। सन् १९५९ में इन्होंने शादी के बारे में भी बहुत तूफान मचाया था, इसके कारण पूरे कुटुम्ब को बहुत कष्ट हुआ और खर्चे में पड़ना पड़ा। राजकुमारी मुझ से वायदा करके गई थी कि वह कहीं सगाई पक्की नहीं करेगी, पर फिर भी वह करके आई थी और मुझको यह कह कर चुप कराया गया कि रञ्जन इस मूड में थे कि कुछ भी कर लेते। मुझे उपवास करना पड़ा। मैं गिर पड़ा और हाथ उतर

गया। फिर भी देहली में जो संबंध इन परिस्थितियों में घिर कर हुआ, ठीक ही हुआ। जो होता है, अच्छा होता है। यही विधान होगा और यही हितकारी हो। राजकुमारी (बहू) बी० ए० पास नहीं है। इसका बी० ए० पास होना बहुत आवश्यक है। सब बातें भविष्य के गर्भ में हैं। रञ्जन ने कहीं पढ़ लिया होगा कि शादी के पहिले पत्र-व्यवहार भावी पत्नी से करना हितकर होता है इसका दुष्प्रयोग हमारे ऊपर किया गया।

स्व० बैरिस्टर जमनाप्रसाद : जीवन परिचय

— श्रीमती राजकुमारी जैन —

श्री जमनाप्रसाद जी के पूर्वज मध्यप्रदेश के एक छोटे से ग्राम पिठौरिया के रहने वाले थे, जो खुरई तहसील, सागर जिला में स्थित है और खुरई से खुश्की के रास्ते से १० या १२ मील दूर है। जिस मकान में इनके पूर्वज रहते थे, वह आज भी खण्डहर अवस्था में पड़ा हुआ अपने जीवन की अन्तिम साँसें गिन रहा है। श्री जमनाप्रसाद जी के आजा का नाम श्री भीकमचन्द जी कलरैया था और उनके पिता जी का नाम परमानन्द जी कलरैया था। पिठौरिया में दूसरे कलरैया कुटुम्ब भी थे जैसे कि श्री हीरालाल जी कलरैया, मूलचंद जी कलरैया और रतनचन्द जी कलरैया। कलरैया खानदान बहुत बड़ा खानदान है।

श्री जमनाप्रसाद जी का जन्म खुरई में कार्तिक सुदी २, संवत् १०५८ तदनुसार १३ नवम्बर, सन् १६०१ को हुआ था। चार बहनों के बीच एक ही भाई होने से उनका लालन पालन बड़े लाड़-प्यार से हुआ। बहनों में से अब केवल एक ही बहन कोसाबाई जीवित हैं। बचपन में ही जमनाप्रसाद जी मातृ-स्नेह से वंचित हो गये थे। १३ वर्ष की आयु होने पर अचानक उनकी माताजी की मृत्यु गहरा आघात पहुंचने से हो गई। जमनाप्रसाद जी के मामा श्री करोड़ेलाल जी उन्हें जगदलपुर ले जा रहे थे। रास्ते में रेल में उनका सारा जेवर चोरी चला गया, जिससे उनके दिल पर गहरी चोट लगी और वे असमय में ही सन् १६१३ में चल बसीं।

आपके पिता एक साधारण हैसियत के आदमी थे, पर थे दिल के बड़े उदार। पिता की छत्रछाया में पल कर उन्हें कभी माता का अभाव नहीं खटक पाया। फिर आपकी बुआ भी आपको अपने पुत्र से अधिक प्यार करती थीं। सगी माता के समान ही आपकी फुआ ने आप पर स्नेहदान की वर्षा की। वे १६ वर्ष की ही उम्र में विधवा हो गई थीं और उनके कोई पुत्र नहीं था, केवल एक पुत्री मुलाबाई थी। पर अपनी पुत्री से भी बढ़कर उन्होंने भतीजे को चाहा।

श्री जमनाप्रसाद जी के पिता श्री परमानन्द जी कलरैया बड़े ही विद्वान्, प्रभावशील और लगनशील व्यक्ति थे। आपने दीनबहादुर सेठ बल्लभदास जी जबलपुरवालों के यहाँ ६ वर्ष तक, श्रीमन्त सेठ मोहनलाल जी खुरई के यहाँ २० वर्ष तक मुनीमी की थी। आप



छात्र जीवन में लन्दन में बैरिस्टर साहब अपने इष्ट-मित्रों के साथ।



छात्र जीवन में बैरिस्टर साहब अपने इष्ट-मित्रों के साथ ।

सबसे बड़े मुनीम थे, पर थे बड़े ईमानदार, इसीलिए आपके हाथ के नीचे के अन्य आदमी तो लखपती बन बैठे और आप एक साधारण स्थिति वाले ही बने रहे। आप सदा किराये के ही मकान में रहे आये। बहुत पहले आपके पास खुरई में घर का एक मकान था, पर वह कर्ज में कुर्क कर लिया गया था। सन् १९१२ में आपने बामौरा में रोजगार भी किया था, पर असफल रहे, फिर खुरई में ही रहकर उन्होंने अपने अपना अधिकांश जीवन व्यतीत किया। सेठ साहब मोहनलाल जी ने आपको पेंशन भी दी। आपका सामाजिक जीवन भी बड़ा सुखमय बीता। आपकी समाज में बड़ी इज्जत थी। विद्या प्रेमी भी थे, आपको सैकड़ों, हजारों कवित्त, सवैये, दोहे आदि आते थे। इन्हीं सब गुणों का आपके पुत्र के जीवन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा, जिसके कारण जमनाप्रसाद जी इस संसार में एक निर्भीक, ईमानदार, कर्तव्यशील और पुरुषार्थी व्यक्ति हुए, किन्तु इसके लिए उन्हें अनेकों कठिनाईयों का सामना करना पड़ा, पर वे पीछे नहीं हटे। अन्त में आपके पिता अपने पुत्र की पढ़ाई के कारण खुरई से सागर आ बसे और उन्होंने अपना खुद का पेट काट-काट कर अपने पुत्र को पढ़ाने के लिए पैसे दिए। उन्हें कभी पैसे की कमी महसूस न होने दी। इस तरह उत्साहपूर्वक उन्होंने अपने पुत्र को शिक्षा दिलानी प्रारम्भ की।

शिक्षा

श्री जमनाप्रसाद जी की प्राईमरी शिक्षा खुरई में ही सम्पन्न हो चुकी थी। इसके बाद आपने सागर में शिक्षा प्राप्त की और वहीं से १५ वर्ष की अवस्था में सागर म्यूनिसिपल हाई स्कूल से द्वितीय श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की और कालेज में प्रविष्ट हुए।

बचपन से ही उनमें पढ़ने की लगन बहुत अधिक थी। उनकी बुद्धि बड़ी ही तीव्र थी। सागर से हाई स्कूल पास करने के बाद वे इन्दौर के क्रिश्चियन कालेज में भरती हुए। उस समय आप जैन होस्टल नशिया जी में रहते थे। आपने गणित, संस्कृत और इतिहास विषय लेकर सन् १९१९ में सफलतापूर्वक एफ० ए० पास किया। तत्पश्चात् सन् १९२१ में संस्कृत और अर्थशास्त्र लेकर होल्कर कालेज इन्दौर से बी० ए० पास किया। फिर इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से एम० ए० और एल-एल० बी० की परीक्षाएँ एक साथ पास कीं। एम० ए० आपने संस्कृत भाषा में पास किया था। संस्कृत में आपको १००) माह की रिसर्च स्कालरशिप भी प्रदान की गई, पर आपने उसे अस्वीकार कर दिया। आपके पिता तो अपने पुत्र को एक वकील के रूप में देखना चाहते थे और हुआ भी यही आपने प्रथम श्रेणी में वकालत की परीक्षा पास कर अपने पिता की इस ख्वाहिश को, "कि मेरा बेटा एक बहुत बड़ा वकील बने," उनके जीवनकाल में ही पूर्ण कर दिखाया। कल्पना जब सत्य बन गई तब परमानन्द जी की खुशी का पारावार न रहा।

यह तो ऊपर ही कहा जा चुका है कि आपका जन्म रोज कुंआ खोदने और रोज पानी पीने वाले परिवार में हुआ था, इसलिए आपकी आर्थिक परिस्थिति संतोषजनक नहीं थी। इसी कारण आपको दूसरों से कर्जा या मदद लेकर ही अपनी ऊँची से ऊँची पढ़ाई समाप्त करनी पड़ी। आपने अपने जीवन काल में रायपुर की मारवाड़ी सोसायटी, परवार सभा

सिवनी, जैन होस्टल इन्दौर तथा जैन ट्रस्ट बम्बई से आर्थिक सहायता प्राप्त की थी। उन दिनों कालेज का खर्चा १५) से लेकर २०) मासिक तक में हो जाता था, कारण कि खाने पीने का खर्चा केवल ६) या ७) माह का था और फीस थी ३।।) माहवार। इस तरह आपके शिक्षार्थी काल में आपको बाहर से बराबर आर्थिक सहायता प्राप्त होती रही, किंतु आपने बाद में नौकरी करके जहाँ-जहाँ से जितना-जितना पैसा मिला था, वह सब लौटा दिया। वे लिखते हैं, कि "मैंने अपने शिक्षार्थी जीवन काल में जहाँ-जहाँ से आर्थिक सहायता प्राप्त की, वह सब लौटा दी। मैंने कभी भी किसी का एक पैसा नहीं रखा। मेरी सदा यही इच्छा रही है कि जो भी विद्यार्थी इस प्रकार की आर्थिक मदद पाता है, वह उसे बराबर लौटा देवे।"

आप बचपन में बड़े उपद्रवी थे। ढाई वर्ष की अवस्था में एक दिन नदी में कूद पड़े थे, तब बड़ी कठिनाई के बाद बचाये जा सके। फिर जब आप ६-७ वर्ष के थे, तब अनाज के बोरों के नीचे दब गये थे, तब भी ईश्वर की कृपा से बचे।

आपके विद्यार्थी जीवन काल की २-३ घटनायें बड़ी उल्लेखनीय और साथ ही शिक्षा प्रद भी है। जब आप स्कूल में पढ़ते थे, तब प्रातःकाल जल्दी नींद न खुलने के भय से आप अपनी चोटी (उन दिनों चोटी रखने का रिवाज सा था) को धागे से बांध कर खूँटी में लटका देते थे और जैसे ही करवट लेते, वैसे ही नींद खुल जाती और वे पढ़ने बैठ जाते। एक दिन तो यहां तक हुआ कि वे १ बजे रात्रि को ही जाग कर स्नान करने चल दिये थे और पुलिस वाले का सामना होने से बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा था। इसी लगन के साथ उन्होंने अध्ययन किया। बचपन से ही उन्हें पढ़ने का इतना अधिक शौक था कि वे हर पुस्तक पढ़ने, हर वाचनालय में जाते और प्रत्येक विद्वान की सत्संगति का लाभ उठाते थे। यही प्रमुख कारण था कि वे अपने बच्चों की शिक्षा के बारे में भी बड़े सख्त थे और उन्हें ऊँची-से-ऊँची शिक्षा दिलाना चाहते थे। उन्होंने अपने संस्मरणमें लिखा भी है—"कि मैं अपने लड़के-लड़कियों को ऊँची से ऊंची शिक्षा देना चाहता था और मेरी यह ख्वाहिश कुछ अंशों में पूर्ण भी हुई।"

दूसरी उनके बचपन की उल्लेखनीय घटना यह है कि एक दिन खुरई में रात्रि को घनघोर वर्षा हुई, जिसके कारण पड़ोस की एक बूढ़ी स्त्री घर के नीचे दब गई। जैसे ही इन्होंने उसकी चीख सुनी, वैसे ही ये दौड़े दौड़े वहां पहुँचे और मिट्टी तथा ईंट वगैरह हटा कर उसे निकाला। टाँगा भी ढूंढने पर जब नहीं मिला तो ये उसे अपनी पीठ पर टाँगकर अस्पताल ले गये। यह परोपकार की भावना उनमें जीवन भर रही।

बचपन में ये बहुत दुबले थे, पर इन्दौर आते ही वहां के अखाड़े का पूरा-पूरा उपयोग किया। उस अखाड़े में सरजूप्रसाद नाम का एक पहलवान था, वह इनसे बहुत प्रेम करता था। उसके आग्रह से ये प्रतिदिन २ से ३ मील तक दौड़ने जाते थे और कसरत भी करते थे। इससे आपका शरीर बहुत बलिष्ठ बन गया था।

इन्दौर के जैन होस्टल में रहने के कारण आप पर जैन धर्म के संस्कारों का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा और वहां रहने से इन्हें बड़े २ फायदे भी हुए। आपको जैन धर्म बहुत

अच्छा लगता था और जैन धर्म के संस्कारों पर आपका अटूट विश्वास था। आपने जैन धर्म का भी गूढ़ अध्ययन किया था। आपने अपने संस्मरण में लिखा है, कि "मुझे जैन धर्म बड़ा अच्छा लगा है और मेरी यही इच्छा है कि मेरे बच्चे जैन धर्म के संस्कारों को न छोड़ें और ऐसे वातावरण में रहें, जहाँ जैन धर्म हो।"

बचपन से ही आपके जीवन पर स्वामी सत्यदेव की पुस्तकों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा था। अपने दृढ़ निश्चय के ही कारण वे इंग्लैंड जाने में भी सफल हो सके।

विवाह और संतानें

श्री जमनाप्रसाद जी का विवाह १८ वर्ष की अवस्था में सन् १९१९ के जून मास में मुँगावली (ग्वालियर) निवासी श्री लक्ष्मणदास जी की सुपुत्री परमोबाई से हुआ था। सन् १९२१ में इनका गौना हुआ और ससुराल आने पर इनका नाम परमोबाई से बदलकर श्यामाबाई रक्खा गया। शादी से पहले आपने अपनी पत्नी को देखा भी नहीं था और उन दिनों ऐसा देखने का रिवाज भी नहीं था। सगाई करके जब उनके पिता जी लौटे तब उन्होंने आकर घोषणा कर दी कि वे अपने पुत्र की सगाई कर आये हैं और लड़की देखने में सांवली, दुबली-पतली और मामूली है। जमनाप्रसाद जी की हिम्मत नहीं थी कि वे अपने पिता का विरोध कर सकते। अन्त में बड़ी ही धूम-धाम से उनका विवाह हो गया था। उनकी पत्नी की अवस्था ब्याह के समय ११ वर्ष और गौने के समय १४ वर्ष की थी। ससुराल आने पर सास के अभाव में सारा काम उन्हीं को संभालना पड़ा।

इनके इस विवाह काल की एक घटना बड़ी मजेदार है। श्री जमनाप्रसाद जी उस समय इन्दौर में बी० ए० में पढ़ते थे। छुट्टी के दिनों में वे घर आये थे। ट्रेन में उन्होंने डबल रोटी खरीदकर अपनी पेटी में रखली थी। रात्रि को जब उनके मित्र उनसे मिलने आये, तब उन्होंने अपनी पत्नी से पूछा, कि "मेरी पेटी में जो डबल रोटी थी, वहाँ कहां है"। उन्होंने जवाब दिया, "कि आपकी पेटी में कोई रोटी-ओटी नहीं थी।" उन्होंने फिर से पेटी में खोजने को कहा। दुबारा फिर वही उत्तर मिला, तब तो वे बड़े क्रोधित हुए और हाथ से बतलाया, "कि इतनी मोटी सफेद-सफेद कोई चीज मेरी पेटी में थी या नहीं।" तब उनके हाँ कहने पर उन्होंने पूछा कि वह कहां रक्खी है। उनकी पत्नी ने उत्तर दिया कि "वह साबुन तो मैं नहाने की खोली में रख आई हूँ।"

इसी तरह की एक घटना और है। आपकी पत्नी बड़ी डरपोक थीं। मजाक-मजाक में जमनाप्रसाद जी ने उनका डर छुड़ाने के लिए आपके ऊपर बाजार से खरीदा हुआ एक रबर का सर्प फेंका। वे सचमुच का सर्प समझकर भागीं और गिरीं। सीढ़ियों पर से वे गिर पड़ीं। हल्ला सुनकर जमनाप्रसाद जी के पिता यह समझकर दौड़े-दौड़े आये कि शायद किसी बात पर से गुस्सा होकर लड़के ने बहू को मार दिया है। वे अपने पुत्र पर खूब बिगड़े। बहू के काटो तो खून नहीं, दिवाल में सिमट कर रह गई। जमनाप्रसाद जी अपने पिता से बहुत अधिक डरते थे, इसलिए सच्ची बात न कह सके और चुपचाप पिता का सारा गुस्सा सहन कर लिया।

इसी तरह जमना प्रसाद जी के दिन आनन्द से कटते गये। किन्तु जब वे वकील बन गये तो लोगों ने भड़काया कि आप दूसरा विवाह कर लें, क्योंकि आपकी पत्नी सुन्दर नहीं हैं। सब यह आशा भी करते थे कि जमनाप्रसाद जी दूसरा विवाह कर लेंगे, किन्तु आपने अपने संस्मरण में लिखा है कि "मेरी पत्नी को ही यह श्रेय है कि उन्होंने अपने धैर्य, त्याग व सेवा से सब घर का मन मोह लिया था और इतनी बड़ी घर गृहस्थी इतनी कुशलता से चलाई। उनके इस बर्त्ताव के ही कारण यह गृहस्थी इस तरह की बन पाई, वल्कि इस गृहस्थी को स्वर्ग बनाने का पूर्ण श्रेय श्यामाबाई को ही है।"

आपकी पत्नी का स्वभाव बड़ा ही मृदुल और उदार है। वे बड़ी ही समझदार हैं। किन्तु उनमें केवल एक बात अनोखी है कि वे किसी से ज्यादा हंस-हंस कर बात नहीं करती हैं, इससे दूसरों को गलतफहमी हो जाती है और दूसरे यही समझते हैं कि वे हमसे नाराज हैं और द्वेष करती हैं। पर यह बात नहीं है। उन्होंने अपने जीवन भर अपने कर्त्तव्यों का पूर्ण रीति से पालन किया और इस गृहस्थी को सुचारु रूप से चलाने के लिये कड़ा परिश्रम किया। इसी कारण जमनाप्रसाद जी के सभी रिश्तेदार, भांजे, भांजियाँ, बहनौता आदि आपके ही यहाँ रहे, शिक्षा प्राप्त की और उनके शादी ब्याह भी यहीं से हुये। केवल रिश्तेदार ही आपके यहां रहे हों, सो बात नहीं, दूसरे लोग भी महीनों आपके घर रहे। आपकी पत्नी का सारा जीवन ही जमनाप्रसाद जी के रिश्तेदारों और अपने रिश्तेदारों की सेवा करते-करते बीता है, परन्तु दूसरे लोगों ने उन्हें सदा ही गलत समझा। श्री जमनाप्रसाद जी से भी कई बार गलतफहमी होने के मौके आये, महीनों पति-पत्नी आपस में अनबोले रहे पर बाद में जमनाप्रसाद जी ने महसूस किया कि शायद ऐसा करने में उनकी भी भूलें थीं।

श्री जमनाप्रसाद जी की आठ संतानें हैं। उनके ग्यारह संतानें पैदा हुई थीं, जिनमें से इस समय आठ जीवित हैं, चार पुत्र और चार पुत्रियाँ। जमनाप्रसाद जी ने अपने संस्मरण में लिखा है कि —"श्यामाबाई की संतानें बहुत योग्य हैं और सभी बच्चों का प्यार श्यामाबाई के ऊपर है। उनको अपनी माँ के ऊपर ज्यादा श्रद्धा है, वनिस्बत मेरे ऊपर। पहले श्यामा बाई बच्चों की बातों में आकर मेरे ऊपर झल्लाया करती थीं, पर अब कुछ दिनो से उन्होंने बच्चों को भी समझाना शुरू कर दिया है, जब से बहुत सी बातों में हमारी बातें सही निकली हैं, तब से।"

आपके जीवन पर आपकी पूज्यनीय सास श्रीमती लक्ष्मीबाई का भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ा था। वे बड़ी ही धर्मात्मा, मेहनती और स्वार्थ त्यागी प्रवृत्ति की थीं। तभी तो उनकी पुत्री भी उन जैसी ही निकली। आपकी सास का आपके साथ रहने से एक सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि आपको माता का अभाव नहीं खटका।

आपके जो चार पुत्र और चार पुत्रियां हैं, उन सबमें बड़े श्री नरेन्द्रकुमार जी जैन हैं। उसके बाद उनके तीन पुत्रियां हुई जिनके क्रमशः नाम श्रीमती राजकुमारी, चन्द्रकुमारी और नन्दनकुमारी हैं। राजकुमारी प्रोफेसर रतनकुमार जी जैन, नागपुर को ब्याही हैं। चन्द्रकुमारी डाक्टर बी० सी० जैन, वर्क्स मैनेजर, साहूपुरी (बनारस) को ब्याही है और नन्दन

कुमारी सागर निवासी श्रीमान भगवानदास जी शोभालाल जी जैन बीड़ी वालों के सबसे बड़े सुपुत्र श्री डालचन्द जी को ब्याही हैं। आपके द्वितीय पुत्र कैप्टेन राजेन्द्रकुमार दिल्ली निवासी श्री हंसकुमार जी की सुपुत्री राजकुमारी से ब्याहे। आपके तृतीय पुत्र इस समय नागपुर के इन्जीनियरिंग कालेज के दूसरे साल में अध्ययन कर रहे हैं। फिर उसके बाद आपकी चौथी सुपुत्री इस वर्ष नागपुर के मेडिकल कालेज में एम० बी० बी० एस० की द्वितीय वर्ष की छात्रा है और चौथे सुपुत्र इस वक्त दसवीं कक्षा में अध्ययन कर रहे हैं।

श्री जमना प्रसाद जी को अपने रिस्तेदारों से बड़ा मोह था, इसी लिए तो वे अपने रिश्तेदारों का पालन कर सके, उन्हें शिक्षा दे सके, उन्हें नौकरी पर लगा सके और उनके शादी ब्याह कर सके। उन्होंने अपने संस्मरण में लिखा है कि—"मुझे अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने में सारा श्रेय मेरी पत्नी को ही है। अगर वे खुद न चाहती तो मैं किसी की भी भलाई नहीं कर सकता था। बैरिस्टर साहब के कोई भी सगा भाई नहीं था। वे दूसरों को ही भाई कहकर आत्मसुख का अनुभव कर लेते थे। उन्होंने संस्मरण में लिखा भी है—"मेरे कोई भाई नहीं था, इसलिए मुझे दूसरों को भाई कहने में बड़ा सुख मालूम होता था।" यह है उनकी कुटुम्बवत्सलता का उदाहरण।

समाज के नर-रत्न

मु० श्री गणेशप्रसाद जी वर्णी

श्रीयुत बाबू जमना प्रसाद जी, एम. ए. एल-एल. बी., जज महोदय, जैन समाज के एक प्रमुख नररत्न थे। वे बड़ी ही लगन से समाज सेवा करते थे। गरीबों के उद्धार करने का लक्ष्य प्रथम रखते थे। इस युग में ऐसा कर्मठ, प्रत्युत्पन्न-मति पुरुषार्थी होना दुर्लभ है। परवार जाति के तो आप सुयोग्य कर्णधार ही थे। ये बड़े निर्भीक वक्ता भी थे।

उन्हीं के उपदेश से श्रीमंत सेठ लक्ष्मीचन्द्र भेलसा वालों ने ग्रंथों के उद्धार में अपना द्रव्य लगाया, जिससे कि सिद्धांत ग्रंथों का सम्यक् उद्धार हो गया। इससे सबको अमूल्य ज्ञान लाभ मिला।

समाज में जो व्यर्थ व्यय होते थे, उनको रोकने के आपने बहुत से उपाय किये थे। अब उनके विषय में विशेष क्या लिखें।

लगनशील समाज सेवक

श्री मिश्रीलाल गंगवाल

(वित्त मन्त्री, मध्य प्रदेश)

स्वर्गीय बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी जैन से प्रथम बार मैंने समाज सेवक के रूप में परिचय किया। यों तो उनका प्रारम्भिक शिक्षण इन्दौर में ही हुआ था किन्तु यह मेरे बचपन की घटना रही होगी। वे जैन समाज में प्रचलित असामयिक रिवाजों से सदा निर्भय होकर लड़ते रहे और उनको सुधारने का जीवन भर प्रयत्न करते रहे। स्वर्गीय श्री जमुनाप्रसाद जी अपने विश्वासों के पक्के थे। जिस बात को उठाते थे उसे पूरा करे बगैर आराम नहीं लेते थे। उन्होंने न्यायाधीश के उत्तरदायी पद पर रहते हुए भी जिस लगन और तन्मयता से समाज की सेवा की वह अनूठी ही मानी जावेगी। उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम भाग में जैन समाज में सामूहिक विवाह पद्धति का भारी विरोधात्मक वातावरण में प्रारंभ किया। यह सुधार पद्धति फैलकर सफल हुई। इसने हजारों कुटुम्बियों को त्राण दिया। इसी कारण वे इस पद्धति के जन्मदाता माने जाने लगे। आज भी अगणित कुटुम्ब इस विवाह पद्धति को अपनाकर आर्थिक संकट से त्राण पाते हैं। श्री जमनाप्रसाद जी के मनमें समाज सेवा की एक अद्भुत तड़प थी जिसे उन्होंने मन और मस्तिष्क में जीवन भर पाला पोसा और जीवन के अन्तिम क्षण तक उस तड़फ की चेतना से चेतनावान बने रहे। वे काम करते करते हृदयरोग के प्रकोप से इस नश्वर संसार से चले गये। समाज ने उनके निधन से एक अच्छा लगनशील सेवक खोया। उनकी लगन शीलता और समाज सेवा की भावना नवयुवकों को कर्म प्रेरणा देती रहेगी ऐसा मेरा विश्वास है।

लाया आये, ले चला चले

— महात्मा भगवानदीन —

देवता शब्द भले ही लोगों को सुहावना लगता हो, पर हमें नहीं लगता। हमें बचपन में सिखाया गया था कि देवता मनुष्य जन्म के लिए तरसते हैं क्योंकि मुक्ति के रास्ते में मनुष्य गति ही अन्तिम स्टेशन है। पर सतत्तर वर्ष की इस उम्र में न जाने क्यों हमारा देवताओं की मान्यता पर से विश्वास उठ गया है। अगर ये कारण न होता तो हम जरूर श्री जमना प्रसाद जी को देवता पुरुष मानते। जब देवता ही हमारी नजरों में कुछ न रहे तब उनके नाम के साथ हम उनको कैसे जोड़ें। हम तो उन्हें आदमी या मनुष्य जमना प्रसाद ही कहेंगे। आजकल आदमी मिलते हैं, पर उनमें आदमियत कहाँ होती है? मनुष्य मिलते हैं पर मनुष्यता उनमें ढूंढे नहीं मिलती। जिसमें हमें आदमियत मिलती है उसे देख कर हमारा जी खिल उठता है और हमारे मुंह से आपों आप निकल पड़ता है "आदमी तो ये हैं" बस जब भी हम श्री जमना प्रसाद जी से मिलने थे तो उनका हँसमुख चेहरा देखकर हमारा जी अन्दर ही अन्दर खिल उठता था। उनकी जीवनी हमारे आँखों के सामने खेल जाती थी। जी होता था इन्हें गले का हार बना लिया जाय।

एक कहावत है कि "किसी आदमी को सुखी मत कहो, जब तक तुम ये न देखलो कि उसका अन्त किस तरह होता है।" इस कसौटी पर श्री जमना प्रसाद को उतारते हैं। मुझे ये खबर मिलती है कि श्री जमना प्रसाद इस दुनियाँ को छोड़कर चल बसे तो मुझे ऐतबार ही नहीं होता। क्योंकि मुझे पता लगता था कि इस खबर से १५ मिनिट पहले वो बिलकुल स्वस्थ्य थे। स्वस्थ्य ही नहीं इतने स्वस्थ थे कि काम में लगे हुए थे। फिर मृत्यु की बात पर कैसे ऐतबार किया जाता? खबर देने वाले से पूछ-ताछ की गई कि क्या कोई दुर्घटना हो गई थी! जवाब मिला "नहीं"। जीने से गिर पड़े? जवाब मिला "नहीं"। फिर तुम किस बिना पर कह रहे हो कि मृत्यु हो गई। जवाब मिला उनके घर का फोन कह रहा है। फोन मेरे पास भी था। फौरन गया, बात सच निकली। मरने से पन्द्रह मिनिट पहले वो स्वस्थ थे, लिख रहे थे, पाँच मिनिट पहिले स्वस्थ थे कि अचानक दिल का दौरा हुआ और चल बसे। दौरा तो बहाना था। कहावत—"हिल्ले रिजक बहाने मौत"। यानी रोजी किसी काम से मिलती है और मौत किसी कारण से होती है। ये खबर सुन कर किसी कवि का ये पद याद आ गया—

लाई हयात आये, कज़ा ले चली चले।
अपनी खुशी न आये, न अपनी खुशी चले॥

इसी को हम सीधी बोली में अनुवाद किये देते हैं—

लाया था भाग आये, मौत ले चली चले।
अपनी खुशी न आये, न अपनी खुशी चले॥

गोली से हुई मौत भी इतनी सुखद नहीं हो सकती। भले ही मिनिट दो मिनिट में ही प्राण निकल जाते हों, पर उस समय याद आया हुआ "हे राम" साबित करता है कि मरने वाला कुछ दुःख के साथ मर रहा है। राम दुःख में ही याद आते हैं। भले ही तुलसी दास जी ये लिख जायें—

"कोटि कोटि मुनि जतन कराँहि, अन्त राम कहि आवत नाँहि।"

हमारा तो यही विश्वास है कि जिसे अन्त में राम याद न आयें और खुशी खुशी प्राण दे दे उसी का अन्तर विशुद्ध होता है। फिर बाह्य जीवन उसका कैसा भी क्यों न रहा हो। पर श्री जमना प्रसाद जी का बाह्य जीवन भी सब के लिए नहीं तो बहुतों के लिए आदर्श जीवन था और बना रहेगा। बहुतों के लिए हम यों कह रहे हैं कि उन्होंने दसियों नहीं सैकड़ों काम ऐसे किये जिससे बहुत लोग खुश हैं लेकिन कुछ बहुत नाराज हैं। भला आदमी समझ सकता है, जो बूढ़ा बारह तेरह वर्ष की लड़की को ब्याहने के लिए बारात लिये जा रहा है और जमना प्रसाद की कृपा से बे ब्याहा ही लौटता है। बदनाम होकर लौटता है।

श्री जमना प्रसाद सब-जज भी रह चुके थे और सेशन्स जज भी रह चुके थे। इस कुर्सी पर बैठने वाला अभियुक्त की नजरों में कैसे भला आदमी समझा जा सकता है और अभियुक्त तो मिनिस्टर का लड़का भी हो सकता है, गवर्नर की औरत भी हो सकती है, राष्ट्रपति का पौत्र भी हो सकता है। खुद जमना प्रसाद का पुत्र भी हो सकता है। इसलिए अभियुक्त के रिश्तेदार भी उसे भला आदमी नहीं कह सकते और अपने पुत्र के अभियुक्त होने की हैसियत से जमना प्रसाद खुद भी अपने को भला नहीं कह सकते। ये कथा कोरी कथा नहीं है, सच्ची घटना है कि एक न्यायाधीश को अपने बेटे को फांसी का हुक्म सुनाना पड़ा था और ये काम उसने दिल को पत्थर बनाकर किया था। पर हुक्म सुनाने के बाद जैसे ही वह कचहरी से बाहर निकला कि न्यायाधीश उसके हृदय से भाग निकला और उसकी जगह आ बैठा फांसी के हुक्म सुने अभियुक्त का सदमा, वह तो फिर रोता ही और रोया भी। ये सब कहकर हम ये कहना चाहते हैं कि जमना प्रसाद थे आदमी और आदमियत लिए आदमी। आज के भारत में न्यायाधीश पद पर आसीन होकर किसी की टेढ़ी दृष्टि का शिकार न हो ये कैसे हो सकता है? यही कारण हुआ कि उन्हें आदमियत छोड़ने की जगह असमय में न्यायाधीश का पद छोड़ना पड़ा। पर इससे आदमियत वाले आदमी का क्या बिगड़ता। उसके लिए समाज सुधार का मैदान खाली था, वह उस मैदान में कूद पड़ा और फिर हम ये बात बढ़ाकर नहीं कह रहे हैं कि उन्हें उस काम में गालियां

खानी पड़ी, जूते खाने पड़े, मार खानी पड़ी, पर उस आदमी का चेहरा सिकुड़ा तो, पर मुसकान न छोड़ पाया। किसी के विपरीत बैर को उसका मन स्थान न दे पाया।

याद रहे, वह ईमानदार बाप का बेटा था। ये भी याद रहे, ईमानदारी और अमीरी एक साथ कम ही रहती हैं। इसलिए श्री जमना प्रसाद को पढ़ने लिखने में होशियार होते हुए भी लोगों से उधार लेकर ही अपनी ऊँची पढ़ाई पूरी करनी पड़ी और अपने बाप की स्वेच्छा को ही शान्त करना पड़ा। ये भी याद रहे उसने जो लिया एक एक पैसा चुका दिया। इतना ही नहीं वो अपने पुत्र-पुत्रियों के लिए अपनी आत्म-जीवनी में ये हिदायत कर गया कि उन्हें अपने बाप जैसा ही बनना चाहिये।

श्री जमनाप्रसाद जी घर के खर्च में मितव्ययी थे। पर अपने लिये बेहद कठोर थे। ऐसा मालूम होता है कंजूसी और मालदारी सगी बहनें हैं। पर उनकी किसी को कमी अखरने नहीं पाई। किसी का उस ओर ध्यान तक नहीं गया। कंजूसी में उदारता के फल-फूल खिलते थे। उस कंजूसी ने अगर हमारे लेख के नायक को न घेरा होता तो दसियों नहीं सैकड़ों विद्यार्थी अपढ़ रह जाते। दसियों नहीं सैकड़ों लड़कियों के विवाह में बेहद कठिनाइयाँ होतीं। या उनके पिता ऋणी होकर जीवन बिताते। सैकड़ों हम कलम दबाकर लिख रहे हैं। हजारों ही को उनके धन से या यों कहिए कि उनकी कंजूसी से लाभ पहुँचा। उन्हें समझ कर हमारा जी कह बैठता है कि ऐसे कंजूस समाज जितने भी पैदा करे अच्छे।

यह हम पहले ही कह चुके हैं कि श्री जमनाप्रसाद का जन्म रोज कुआ खोदने और रोजपानी पीने वाले घराने में हुआ था पर श्री जमनाप्रसाद अपने पीछे से दो लाख की सम्पत्ति छोड़ गये हैं। ये एक ऐसी बात है कि जिस पर लोग उंगली उठा सकते हैं। पर हमने श्री जमनाप्रसाद की खुद लिखी हुई आत्म कहानी सुनी, एक एक पैसे का हिसाब दिया है। सरकारी पद छोड़ने के बाद उनसठ हजार सरकार से मिलता है। पच्चीस हजार की इन्शोरेंस पौलिसी पकती है। चौरासी हजार की रकम बनिये के बेटे के हाथ में क्या रंग दिखा सकती है इसे हर कोई जानता है। उन्होंने वैसा ही किया, जमीनें खरीदीं, सोना खरीदा, इसी तरह का और व्यापार किया और इस तरह एक गरीब लखपती बन गया। कहावत है "इन्सान मुरद कबूल खता"। इसी से मिलती जुलती है, 'टु अर इज ह्यूमन" यानी भूल करना आदमी का स्वभाव है। इसलिए जमना प्रसाद से भूलें न हुई हों ये तो नहीं कहा जा सकता। उसने अपनी आत्म कहानी में उन्हें स्वीकार भी किया है। फिर मानवी चादर ऐसे धब्बों से पाक और साफ है जिनसे आदमियत बदनाम होती है या पतित समझी जाती है।

जमनाप्रसाद नामी आदमी को कौन प्यार न करेगा, आदर की दृष्टि से नहीं देखेगा। कौन न चाहेगा कि उस की यादगार बने। पर हम यही चाहते हैं और चाहते रहेंगे कि कोई आगे बढ़कर उस की जगह ले और ऐसा काम करे कि हम उसे भूल जांय।

कर्मठ जन-सेवक

— सेठ छोटेलाल जैन, कलकत्ता —

श्री जमुना प्रसाद जी जैन उन जनसेवकों में से थे जो काफी उच्च पद पर पहुँचने पर भी जनसेवक तो बने ही रहते हैं, साथ ही जनता में मिले भी रहते है। उच्च पद पाने पर बहुत से लोग अपने को जनता में नहीं गिनते। वे अपने को अलग ही ऊँची जाति का मानने लगते हैं। सामन्तवादी युग का प्रभाव इस जनतंत्र के युग में भी बना हुआ है। पर बैरिस्टर जमना प्रसाद जी जज रहने पर भी समाज में मिलकर समाज की हर छोटी बड़ी सेवा में हाथ बटाते रहे। यद्यपि वे जज सा० के नाम से प्रसिद्ध थे परन्तु न्यायालय की चहार-दीवारी के बाहर निकलते ही, समाज में पहुँचते ही, सब के कुटुम्बी बन जाते थे।

वे एक सच्चे सुधारक थे। साम्प्रदायिक या जातीय पक्षपात उनमें नाममात्र को भी न था। अपनी सन्तानों की शादियों में उन्होंने ये सिद्धान्त व्यवहार में उतारे थे। रूढ़ियों की या समाज के कोप की उन्होंने जरा भी परवाह न की थी। इस प्रकार वे वाग्वीर ही नहीं कर्मवीर भी थे।

समाज में सामूहिक विवाहों की जिस प्रथा का सूत्रपात हुआ है, वह उन्हीं की देन है। इससे न केवल विवाहों के अपव्यय रुके हैं, न केवल परेशानियां रुकी हैं किन्तु दहेज आदि की कुप्रथाओं पर भी अंकुश लगा है।

उनकी एक बड़ी विशेषता यह रही है कि वे जीवन भर जवान रहे। बल्कि उल्लास उत्साह, प्रसन्नता आदि की दृष्टि से तो उनमें बालकपन भी अन्त तक रहा है। किसी भी समारोह में वे उल्लास में डूबे हुए इधर-उधर दौड़ते हुए दिखाई देते थे। गंभीर मुद्रा में में शायद ही कभी दिखाई देते हों।

मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में प्राचीन कलापूर्ण मूर्तियों के सिर काट कर बेचने का कुधंदा कई लोग कर रहे थे जिससे हमारी धार्मिक भावनाओं को चोट लगने के साथ-साथ देश की अमूल्य पुरातात्विक और सांस्कृतिक निधि का लोप हो रहा था। उसकी रोक-थाम के लिए यह अत्यन्त आवश्यक प्रतीत हुआ कि उन अपराधियों के दुस्साहस को रोकने के लिए उनको न्यायालय से दंडित करवाया जाय। इसका भार बैरिस्टर सा० को दिया गया और वे इस कार्य को पूरी चेष्टा से संपन्न कर रहे थे। कई अपराधी न्यायालय द्वारा दण्डित भी हो चुके हैं।

बैरिस्टर सा० से बहुत से कार्यों की उम्मीद थी। यों वे खास बीमार भी न थे, पर हृदय रोग ने उनके प्राण ले लिये और समाज का एक निस्पृह सेवक छिन गया।

उनकी सन्तान काफी सुशिक्षित और समर्थ है। आशा है जनसेवा के क्षेत्र में उनकी कमी किसी न किसी अंश में पूरी होगी।

कर्मयोगी बैरिस्टर जमनाप्रसाद

— तनसुखराय जैन, दिल्ली —

सन् १६३ की बात है, जबकि मैं लक्ष्मी इन्शोरेन्स कम्पनी, दिल्ली शाखा में मैनेजर का काम करता था और मेरे आग्रह पर अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद का अधिवेशन देहली में हो रहा था, जिसके स्वागतमन्त्री का भार भी मुझे ही सौंपा गया था। अधिवेशन को सफल बनाने में देहली के नवयुवक जी जान से जुटे हुये थे। उस समय भारतवर्ष के प्रायः सभी स्थानों से परिषद के प्रतिनिधिगण आये हुए थे, जिनका स्वागत करने का अवसर मुझे प्राप्त हुआ। इन महानुभावों मे मेरी दृष्टि एक ऐसे व्यक्ति पर गई, जिसे खाने-पीने की सुध नहीं थी और जो सामाजिक समस्याओं तथा परिषद में आने वाले प्रस्तावों के विषय में व्यस्त था। वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा कर अपनी समस्याओं को हल करने में तथा हर प्रान्त के प्रतिनिधियों से परामर्श करने में ही संलग्न था। प्रतिनिधि भी आइये 'बैरिस्टर साहब' कहकर उनसे सम्मान से मिलते थे। उनके सादे रहन-सहन को देखकर मुझे यह विश्वास नहीं हो रहा था कि ये कोई सचमुच बैरिस्टर साहब हो सकते हैं। मेरी जिज्ञासा बढ़ती गई। मैंने जब उनके विषय में पूछ-ताछ की तो मेरा भ्रम दूर हो ही गया। इतना ही नहीं मुझे उनके जीवन की विचित्र तथा समाज सेवाओं में लगन की कुछ ऐसी घटनायें भी ज्ञात हुई, जिनसे इनका महत्व मेरी दृष्टि में बहुत बढ़ गया।

मैंने सामाजिक विषयों में बाबू जमनाप्रसाद जी से बहुत कुछ चर्चाएं की। ऐसे सुलझे हुए विचारों के बहुत ही कम व्यक्ति दृष्टिगोचर होते हैं। अपने विचारों से दूसरों को प्रभावित करने की इनमें विचित्र शक्ति थी। मेरे जीवन पर इनके व्यक्तित्व की अमिट छाप पड़ी और सन् १६३४ से अन्त तक मेरा उनका सम्बन्ध बराबर बना रहा।

सन १६३६ में मैंने मध्यप्रदेश का दौरा करने का विचार किया। बैरिस्टर साहब से इस विषय में परामर्श किया। उन्होंने मेरे इस प्रोग्राम की सराहना की और गर्मी की छुट्टियों में दौरे का प्रोग्राम रखने के लिए कहा और स्वयं भी अपना पूरा समय देने का वचन दिया। इससे अधिक प्रसन्नता की क्या बात हो सकती थी। गर्मियों का समय निश्चित कर दिया गया।

करीब एक माह तक मध्यप्रदेश के विभिन्न स्थानों का उनके साथ दौरा करने का अवसर मुझे मिला। इस अवसर पर मैंने देखा कि उनमें कार्य करने की अपूर्व क्षमता है। इस दौरे में पंचायतों के झगड़े आपने जिस बुद्धिमानी से तय किये वह अति प्रसंशनीय है। जहां मैं समझता था कि यह मामला कैसे निपटेगा वहीं आप कहते मैं इसको अवश्य निपटा कर जाऊँगा और उसी काम में जुट जाते, खाना पीना भूल जाते, अलग-अलग सबके पास जाकर मिलते, फिर उनको इकट्ठा करने और उस मामले को निपटा कर ही उठते। कभी-कभी रात को दो भी बज जाते थे। एक स्थान पर मन्दिरों के हिसाब की गड़बड़ी थी। लोगों के पास रुपया दबा पड़ा था। वह रुपया देने को तैयार नहीं थे। गहरी खाई पड़ गई थी। मन्दिरों में पूजन प्रक्षाल बन्द होने की नौबत आगई थी। बैरिस्टर साहब ने लोगों को बहुत समझाया किन्तु परिणाम कुछ नहीं हुआ। निराश नहीं हुए और अनशन ठान कर बैठ गये। अब तो वहां की समाज में खलबली मच गई। मामला एक ही रात में तय हो गया। बाद में सब की अन्तरंग कषायें दूर करादीं।

यद्यपि आप जज जैसे प्रभावशाली पद पर उस समय कार्य कर रहे थे किन्तु आपने समाज में उस पद का कभी मान नहीं किया। समाज में सामाजिक कार्यकर्त्ता के रूप में ही जन-साधारण से मिलते-जुलते थे। बिना किसी आग्रह के स्वयं साधारण से साधारण व्यक्ति के घर निःसंकोच जाकर बैठ जाते थे और उनके साथ मिल बैठकर खाते पीते थे। परिषद के इस ग्रीष्म कालीन दौरे के समय बैरिस्टर साहब का हौसला, हिम्मत और निडरता की जो छाप मुझ पर पड़ी वह अमिट थी।

वैसे तो भाई जमनाप्रसाद जी अ० भा० दिगम्बर जैन परिषद के सभी अधिवेशनों में पहुँचते थे। सन् ३६, ३७, ३८, में हुये सतना, खण्डवा और झांसी के अधिवेशनों में बहुत सी जटिल समस्याएं उपस्थित हो गई थीं उन सब को सुलझाना और प्रस्तावों को पास कराना उनकी हिम्मत का काम था। वास्तव में ऐसे ही निस्वार्थ और लगन के सच्चे कार्यकर्त्ताओं ने ही अ० भा० दिगम्बर जैन परिषद को ऊंचा उठाया था। आर्थिक समस्याओं के समय वह प्रायः कहा करते थे कि परिषद में जब तक लगन के सच्चे निस्वार्थी कार्य-कर्त्ता रहेंगे तब तक अर्थ की कमी नहीं आ सकती। संस्था का जीवन कार्य-कर्त्ताओं से है, केवल धन से संस्थाओं का जीवन नहीं रह सकता। जहां बैरिस्टर साहब एक बहादुर जनरल थे, वहां सच्चे और निस्वार्थी, लगन शील सिपाही भी थे।

स्वर्गीय बैरिस्टर साहब के विषय में जितना लिखा जावे थोड़ा है। परिषद के लिए उनकी सेवाओं का कोई लेखा जोखा नही हो सकता। उन्होंने जीवन भर परिषद की सेवा की है। उनकी उपमा नहीं दी जा सकती। उनके अभाव से जो परिषद में जो कमी आई है उसकी पूर्ति होना कठिन है।

कर्मठ समाजसेवी

— श्री महेन्द्र, जगदलपुर —

बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी का जगदलपुर से बहुत ही निकट का संबन्ध रहा। मेरे स्वर्गीय बाबा उनके सगे मामा होते थे। बाबा जी ने जमनाप्रसाद जी के लगन तथा साहस को देखकर उनके अध्ययन के विषय में पूर्ण रूप से दिलचस्पी ली। उनकी आर्थिक स्थिति उस समय इतनी अच्छी नहीं थी कि वे अपना पूर्ण अध्ययन महाविद्यालय में समाप्त कर सकते। बाबा जी ने उनके व्यय की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। जमना प्रसादजी ने अपने मामाके इस प्रेम को व्यर्थ जाने नहीं दिया। लगातार उन्होंने परीक्षायें दी तथा सफलता प्राप्त करते रहे। एम. ए. एल-एल. बी. करने के बाद मेरे बाबा जी ने उन्हें अपने ही स्थान अर्थात् जगदलपुर में बुलाकर वकालत करने को कहा। जमना प्रसाद जी अपना माता की आज्ञा को शिरोधार्य कर तत्काल ही जगदलपुर के लिए रवाना हो पड़े। उस समय जगदलपुर पहुँचना इतना सरल कार्य नहीं था जितना कि आजकल है। रायपुर से जगदलपुर तक लगभग १८४ मील की पूर्ण यात्रा बैलगाड़ी द्वारा करनी पड़ती थी।

जगदलपुर को घेरती हुई इन्द्रावती नामक एक नदी है जिसमें उस समय बहुत ही बाढ़ आई हुई थी। जमनाप्रसादजी ने अपनी इस यात्राको बैलगाड़ी, साइकिल तथा पैदल चल कर पूरा किया और उस भयंकर बाढ़ आई हुई नदी को नाव द्वारा पार किया। उनका इन कठिनाइयों को झेलते हुए जगदलपुर पहुँचना उनके लिए प्रशंसा का विषय हो गया था। मेरे बाबा ने उन्हें पहुँचने के कुछ ही दिन बाद एक सिविल केस दिया जिसकी पैरवी ५००) में तय की गई। यह उनके प्रथम चरण थे अदालत की सीढ़ियों पर, पहले तो बहुत ही घबराए, फिर धीरज तथा शक्ति रखकर उस केस की फाइलें देखीं। उसके बावजूद कुछ पल्ले न पड़ा तो सीधे उन्ही जज के पास गये जिनकी अदालत में उनका केस था। जज ने जमनाप्रसाद जी को आशा दिलाई कि कोई भी कानूनी कठिनाई को वे अपने अवकाश के समय उन्हें समझा दिया करेंगे। जज साहब ने उन्हें वकालत की शुरुआत करने का ढंग भी बताया। इस केस में विजय श्री जमनाप्रसाद जी के हाथ लगी। कुछ ही दिनों में उन्हें तीन चार और बड़े केस मिल गये। इस प्रकार करीब तीन हजार रुपये की आमदनी करके उन्होंने अपनी बहिन के विवाह की चिन्ता की तथा अपने मामा का आशीर्वाद तथा पूर्ण सहयोग पा उस जिम्मेदारी को सफलतापूर्वक निभा सके।

इसके बाद ही उन्हें शासन की ओर से सबजज का ओहदा प्रदान किया गया। जांजगीर में जिस समय वे सबजज थे उसकी मुझे बहुत कुछ याद है। मैं अपने मामाके यहाँ अकलतरा में अपनी प्रायमरी कक्षाके ग्रीष्म कालीन दीर्घ अवकाश बिता रहा था। अचानक एकदिन मामा के घर के सामने एक कार रुकी। उसमें से ३-४ टोपधारी अफसरों के साथ जमना प्रसाद जी उतरे। पहले तो मैं डरकर भीतर भाग गया, परन्तु उन्होंने भीतर से मुझे बुलवा मंगाया और मुझे आना ही पड़ा। उन्होंने मुझ से, कुछ दूर पर एक गांव था वहां चलने के लिये कहा। कार के लालच में मैं तैयार हो गया तथा वहाँ उस गांव जा पहुँचा जहाँ किसी गरीब किसान की एक बड़े मालगुजार से किसी विषय में मुकदमाबाजी हो रही थी। किसान दिनों दिन कर्जीला होता जा रहा था।

जमनाप्रसाद जी ने उस किसान को बहुत समझाया कि अदालत का नाम छोड़ दो। उसमें तुम बर्बाद हो जाओगे। किसान तथा मालगुजार दोनों को वहाँ समझाकर उनमें आपसी समझौता कराकर मालगुजार से कहा कि वे गरीब किसान की कुछ मदद करें। मालगुजार ने समझौता स्वीकार किया तथा किसान की मदद की।

उस समय मैं यही सोच रहा था कि जज साहब कहीं भी जाकर मुकदमा चलाकर फैसला कर सकते हैं। मुझे अपनी भूल का पता कुछ समय पश्चात् लगा। यह घटना बचपन की है जो चिरस्मरणीय रहेगी।

१९४८ में जब उनका स्थानान्तर जगदलपुर ए. डी. जे. के रूप में हुआ, तब मैं उनके अधिक निकट आया तथा उस समय मैं बहुत सी बातें सोचने समझने योग्य हो चुका था। लगभग चार वर्ष के सम्पर्क से मुझे यह सीख मिली कि अपने सुखों का त्याग करके आने वाली पीढ़ी का भविष्य उज्ज्वल बनाना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। उनका मुख्य भोजन खिचड़ी था। हमेशा दूसरों को गरिष्ठ भोजन तथा उसके लिए किये गए अपव्यय के लिये वे मना करते रहे। प्राकृतिक चिकित्सा पर उनको अधिक विश्वास था। प्रातः उठना तथा नियमित रूप से व्यायाम करना उनका प्रतिदिन का प्रथम कार्यक्रम रहा। साधारण से रोगों के लिये वैद्य डाक्टरों के द्वार खटखटाना उन्हें बिल्कुल नापसंद रहा।

जगदलपुर के आस-पास बहुत से दर्शनीय स्थान हैं। वहां के जैन उस समय तक उन रमणीय स्थानों की छटा देखने का सौभाग्य प्राप्त नहीं कर पाये थे। जमनाप्रसादजी ने अपने चार वर्ष की अवधि में प्रत्येक जैनको तथा दूसरे व्यक्तियों को उन स्थानों को देखने के लिये साधन प्रदान किये। कई ऐसी गहरी खाइयाँ तथा गुफायें हैं जिनमें उतरने के लिए व्यक्ति एकाएक साहस नहीं कर सकते। ऐसे खतरे के स्थानों पर जीवन को खतरे में डाल कर स्वयं प्रथम व्यक्ति रहे तथा उसके पश्चात् दूसरे उनका अनुकरण बहुत ही मुश्किल से कर पाये। इसी प्रकार एक दिन चित्रकोट जल-प्रपात के सपेटे में स्वयं आ गये। इस प्रपात में १०० फीट की ऊँचाई से सम्पूर्ण २ फर्लांग चौड़ी नदी ऊपरसे नीचे गिरती है। ऊपर की ओर नदी पार कर रहे थे कि अचानक धार में फँस गये और प्रपात की ओर बहने लगे। मैं उनके धीरज और साहस की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता जबकि मृत्यु साक्षात् मुंह

फैलाये खड़ी है और वे धार काटकर दो चट्टानों के कोण के बीच आ लगे। यह स्थान पानी गिरने के स्थान से करीब ५ या ६ फुट दूर होगा। उस कोण में चट्टानों का सहारा लिये निरन्तर पानी के तेज थपेड़े खाते रहे। उनका सिर केवल पानी के बाहर था शेष अंग पानी में डूबा रहा। श्री केवलचन्द उनके भांजे ने अपना जीवन खतरेमें डालकर उनकी दोनों भुजाओं को पकड़कर ऊपर उठाया। ईश्वर ने उन दोनों के साहस की बात रखते हुये दोनों की रक्षा की। जज साहब का शरीर करीब-करीब ठंडा हो चुका था। विचारों से उनका अधिकार उठ सा गया था। शीघ्रातिशीघ्र आग जलाकर तथा पास के जंगल में रहने वालों को बुलाकर कम्बल का प्रबन्ध करके उनकी चेतना वापस लाई गई।

जज साहब ने केवलचन्द को जो कि आर्थिक दौड़ में संसार में बहुत अधिक पिछड़ गए थे, आर्थिक सहायता दे इस योग्य किया कि वे अपनी कुछ जायदाद बना सकें। कुछ दिनों पश्चात् केवलचन्द के विवाह का भार भी उन्होंने ही सम्हाला तथा उसे एक आदर्श रूप में सम्पन्न भी किया। विवाह की समस्याओं को सुलझानेके लिए वे हमेशा आगे रहा करते थे। गरीब लड़कियों की शादी उन्होंने धनाढ्य परिवारों में कराई। जगदलपुर के श्री मुन्शीलाल की सबसे छोटी पुत्री का विवाह मुंगावली में एक सम्पन्न परिवार में कराया। श्रीमुन्नीलाल जी की स्थिति ऐसी नहीं थी कि वे मुंगावली जाकर लड़के को देखें। जज साहब ने लड़के तथा उनके पिता को जगदलपुर बुलवाकर यह समस्या हल की। जैनियों के बीच फैली हुई खाई को पाटने का कार्य भी उन्होंने साहस पूर्ण ढंग से किया। अन्तर्जातीय विवाह द्वारा उन्होंने सम्पूर्ण जैनों को एक सूत्र में बांधने का सूत्र भी खोज निकाला।

मंडला निवासी अपने भतीजे के विवाह के लिए जगदलपुर आये हुए थे। उनका रहने का पूरा प्रबन्ध जज साहब के बंगले पर ही रहा। जिस क्षण दोनों पक्षों में विवाह की बातचीत पूर्ण रूप से एक दूसरे को मंजूर हुई, उसी समय विवाह के मुहूर्त्त शोधन में पंडित जी ने बताया कि लग्न की तिथि कल सायंकाल है अथवा चार वर्ष पश्चात् विवाह हो सकेगा। पूरे समाज के व्यक्तियों ने चार वर्ष पश्चात् का लग्न मंजूर किया परन्तु जज साहब ने सारे समाज का विरोध करते हुए लग्न की तिथि दूसरे दिन संध्या के समय तय की। उन्होंने चार वर्ष तक विवाह स्थगित नहीं रहने दिया। इसमें कोई भी पक्ष अपने शब्द हार सकता है। लग्न का पूरा कार्य जज साहब को ही करना पड़ा।

समाज के बाहर भी उनके सुधा रूपी पग आगे बढ़ते ही रहे। जायदाद के आपस के झगड़ों को अदालत के क्षेत्र से परे रखकर न्यायपूर्ण हिस्सा प्रत्येक को दिलाया।

ये ऐसे विषम झगड़े थे जिनमें अदालत तथा वकीलों का खर्च लगभग पचास हजार रुपया होता।

इतनी उलझनों में उलझे रहने के पश्चात् भी उनका ध्यान समाज में होनहार बच्चों के भविष्य निर्माण में लगा रहता था। उन्होंने कई बच्चों को अपने पास बंगले में रखा तथा भरसक कोशिशें की कि उनका भविष्य उज्ज्वल हो सके। उनसारे लड़कों में मैं ही अकेला ऐसा रहा जो अपनी शिक्षा की दौड़ में आगे बढ़ता ही रहा। जिस वर्ष मैंने मैट्रिक की

परीक्षा समाप्तकी तथा जीवनकी नई सीढ़ी पर चढ़ने के लिये सहारा ढूंढरहा था। उसी समय मेरे दुर्भाग्य से उनका स्थानान्तर वर्धा हो गया और मैं सचमुच में इस चढ़ाव को सीधा न चढ़कर टेढ़े-मेढ़े रूप में पार कर सका। इंजीनियर बनने का स्वप्न वकील बनने में पूरा हुआ। इतने दूर तथा आठ वर्ष के विछोह के बावजूद भी उन्हें मेरा इतना ध्यान था कि जीवन के अन्तिम समय में पत्र द्वारा उन्होंने मुझे विवाह करने की आज्ञा दी। यह आज्ञा चिरस्मणीय रहेगी।

उनकी कठिन साधना तथा तपस्या का ही यह परिणाम है कि उनके परिवार के सदस्य आज हर क्षेत्र में भरे पूरे हैं। ऐसा मेरा विश्वास है कि उनका नया जीवन और अधिक आदर्श एवं सुधारवादी होगा। ईश्वर उनकी क्षमता दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ाये।

साहसी एवं निष्ठावान नेता

— श्री बाबूलाल डेरिया —

नेता के गुण विरले पुरुषों में ही पाये जाते हैं और वे समय पाकर स्वयं ही प्रकट हो जाते हैं और सम्पूर्णरूप में गुणों का प्रकट होना शायद ही किसी को प्राप्त हो, पर मेरा अपना विश्वास है कि स्वर्गीय बैरिस्टर जमना प्रसाद जी में वे सब गुण थे जो एक नेता में होना चाहिए, और यह सब इतने जोर से मैं क्यों कह रहा हूँ, इसलिए कि जो कुछ उन्होंने कहा उसे पहले अमल में लाकर स्वयं अपने घर से सामाजिक क्रान्ति का नारा लगाया।

मेरा पहिला परिचय तब हुआ जबकि मैं इटारसी (मध्य प्रदेश) में अखिल भारत वर्षीय दिगंबर जैन परिषद के अधिवेशन में स्वयं सेवक बनकर अपने साथियों सहित पहुँचा था। उस समय समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन का नारा उठाने वाले ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद जी का चातुर्मास इटारसी में हुआ था। यह समय सन् ३३ या ३४ का था। चातुर्मास में परिषद के माफिक वातावरण निर्माणकर ब्रह्मचारी जी ने वहाँ परिषद के अधिवेशन की घोषणा करके तमाम प्रगतिशील सुधारवादी क्रान्तिकारी दिगम्बर जैनियों को निमंत्रण दे दिया। उसी समय जमना प्रसाद जी बैरिस्टरी पास करके लंदन से लौटे थे। उन्होंने आग्रह करने पर इसके सभापति पद को स्वीकार कर लिया। खासी अच्छी व्यवस्था रही। देश के सब भागों के प्रतिनिधि शामिल हुए। यहाँ से स्व० जमना प्रसाद जी की चतुर्मुखी प्रतिभा का विकास प्रारम्भ हुआ। इस अधिवेशन में स्वर्गीय चम्पत राय बैरिस्टर भी आये थे। इसमें अनेक प्रकार के राष्ट्रीय, सामाजिक प्रस्ताव आये जो पास हुए। सभापति पद से जो भाषण दिया गया था वह मार्मिक तथा जैन समाज की अन्तरात्मा की आवाज जैसा था। वाणी में स्पष्टता, हृदय में साहस, भावनाओं में पवित्रता, नीति में समन्वय लेकर जब वह व्यक्ति सभापति पद पर बैठकर बोला तो जानने समझने वालों का हृदय भर गया, युवकों में जोश आया; रूढ़ियों के खिलाफ उसने नारा बुलन्द किया।

उसी अधिवेशन में भेलसा (विदिशा) निवासी श्रीमन्त सेठ लखमीचंद जी शिताब राय आये हुए थे। उनकी इच्छा रथ चलाने की थी। श्री जमना प्रसाद जी ने अपने प्रभाव से देश काल पात्र की परिस्थिति में लाकर श्री सेठ साहब को इस बात के लिए तैयार कर लिया कि वे जो रकम रथ चलाने में खर्च करने वाले हैं, उस रकम को साहित्य प्रकाशन में दे देंगे

और उस रकम के दान की घोषणा वहीं पर बड़े समारोह में करा दी। वहीं पर जो पदवी उन्हें रथ चलाने के बाद मिलती, दान समारोह वहीं कराके उसी पदवी स्वरूपउन्हें जैन समाज की ओर से पगड़ी बँधा दी। वह पदवी थी श्रीमन्त सेठ की और रकम दान की थी करीब पच्चीस हजार। उसी रकम का ट्रस्ट बनाकर वह रकम डाक्टर हीरा लाल जैन के सुपुर्द की गई। डाक्टर सा० उस समय एडवर्ड कालेज अमरावती में प्रोफेसर थे। इसी दान की रकम से डाक्टर सा० ने दक्षिण भारत से ताड़ पत्र पर लिखे धवल जयधवल ग्रन्थों को प्राप्त किया। वहां के भट्टारकों से इन ग्रंथों का प्राप्त करना असम्भव प्रतीत होता था। वह सब इन्हीं के प्रयत्नों का फल है जो आज डा० हीरालाल जी द्वारा उल्था किये हुए धवल जयधवल को जो जैन साहित्य की अमूल्य धरोहर है, हम जैन मन्दिरों, चैत्यालयों और स्थानकों में पा रहे है। यह समाज को जमनाप्रसाद जी जैन की पहली देन है जो युग-युग तक उनका स्मरण हमें कराती रहेगी।

बस इटारसी अधिवेशन के बाद ही आप सरकारी सर्विस में सब-जज की पोस्ट पर नियुक्त हो गये। उन दिनों सरकारी सर्विस में होते हुए भी आप अपनी प्रगतिशील भावना को न दबा सके और समाज सेवा में अग्रसर हो कार्य प्रारम्भ कर दिया। अन्तर्जातीय विवाह, कम खर्च की शादियां, विवाहों में कार्यकर्त्ता सम्मेलन, विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति फंड कायम कराना, जहाँ स्वयं रहना उस जिले में कहीं जैन समाज में दो पार्टियां हों तो मेल कराना, मंदिर का हिसाब किताब कराना, समाज के लड़कों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहन देना, पढ़ने के बाद उन्हें सरकारी नौकरियों में अपने विशेष प्रयत्नों से पहुँचा देना—ये काम इनके नित्य क्रिया की भाँति इनके जीवन भर लगे रहे। जहाँ कहीं मालूम हो कि अनमेल या वृद्ध विवाह हो रहे हैं, बस वहाँ बिना बुलाये ही पहुँच जाना, लड़की वालों को समझाना, लड़के वालों को समझाना, डाटना, न माने तो बीच में कूद पड़ना, पुलिस की सहायता लेना, न अपमान का डर और न पिटने कुटने का डर। अनेकों बार ऐसे मौके आये पर सब कुछ हँसते-हँसते सहन कर गये और पीछे मुड़कर जाना ही नहीं। जो काम कोई न करे उसे स्वयं करना, अपने घर से रिश्तेदारों के लड़के लड़कियों के अनेकों अन्तर्जातीय विवाह उन्हें अपने घर ला लाकर किये। रूढ़ि को बड़े साहस पूर्वक तोड़ने और खतरे के बीच में खड़े होने की आप की आदत थी। जब आप काम करने को भिड़ते तो अपनी सर्विस की परवाह नहीं करते। अंग्रेजीराज का जमाना था, खुफिया रिपोर्टें रोज जातीं, पर कोई चिन्ता नहीं थी।

आप अ० डि० जज की पोस्ट से रिटायर हुये, यद्यपि आपकी सर्विस इतनी सीनियर थी कि आपको डि० जज होना चाहिए था और अगर आप डिस्ट्रिक्ट जज होकर पेन्शन लेते तो उसमें काफी अन्तर आता और आपके हाथ के नीचे काम करने वाले जज डि० जज होकर रिटायर हुए। परन्तु इनका रिकार्ड जो खुफिया विभाग ने तैयार करके प्रान्तीय सरकार को दिया था उसका सार यह था कि ये जैन समाज का बहुत खुला काम करते हैं। बस यही एक कारण था जिससे आपको असिस्टेन्ट डि० जज से ही रिटायर होना पड़ा। इसकी चर्चा वे बड़े गौरव से करते थे। इससे जो पेन्शन बंधी उसमें काफी अन्तर आया।

आपको यह ध्यान हमेशा रहता था कि जैन-समाज के नौजवान मिलिटरी में भर्ती क्यों नहीं होते और उसी भावना से प्रेरित हो आपने अपने लड़कों को भौंसला सैनिक कालेज, नासिक में भेजा। पहिला लड़का द्वितीय महायुद्ध से वापिस आकर नेवी में भरती हो वहां से लंदन चला गया। करीब ५ वर्ष में लौटा। दूसरा लड़का मिलिटरी का आफीसर है। आपने दोनों लड़कों की शादियाँ अन्तर्जातीय कीं। स्वयं परवार समाज के होते हुए खण्डेलवाल एवं अग्रवाल समाज में सम्बन्ध किया। लड़कियों के सम्बन्ध भी तारण समाज के लड़कों से किये तथा उन्हें वही सामाजिक दर्जा प्राप्त कराया जो समाज में स्वयं को प्राप्त था।

श्री जमनाप्रसाद जी का निरन्तर यह प्रयत्न रहता था कि दिगम्बर जैन समाज का रोटी बेटी व्यवहार एक ही हो जावे। जहां कहीं भी बुंदेलखण्ड, तारण समाज, विनैकलाल समाज या सनातन जैन समाज या छोटी से छोटी समाज हो या कोई भी सामाजिक, धार्मिक या व्यवहारिक कार्य हो, किसी भी प्रकार समय निकालकर उसमें पहुँच जाना, बिना निमन्त्रण भी पहुँच जाना और अपनी विचारधारा जोरदार तरीकेसे रखना, अड़ जाना, मनवाना, युवकों एवं कार्यकर्ताओं को साथ में करना और लाभ-हानि की सारी जिम्मेवारी अपने ऊपर ले लेना ये इनके विशेष कार्य थे।

कार्यकर्ताओं के प्राण

जहाँ कहीं भी पहुँचते अपने सब साथी संगी कार्यकर्ताओं को याद करके पास बुलाते, घर मिलने जाते, अधिवेशन हो तो उन्हें मंच पर बुलाने, भाषण कराने, समाज सेवा का मन्त्र फूंकने का काम इन्हीं का था। इस प्रकार हृदय से लगाकर ये उनके अपने विश्वासों को दृढ़ करा देते। मैंने स्वयं अनेकों स्थानों पर पर जाकर देखा है, काम किया है परन्तु इस प्रकार का व्यापक दृष्टिकोण वाला कार्यकर्ता नेता मिलता ही नहीं। जिस शहर में भी जायें जहां पर सैकड़ों घर जैन समाज के हों तो भी वहां कार्यकर्ता के नाम पर ढूंढ़ो तो एक सीमित दायरे के भीतर के ही लोग मिलेंगे। अगर उस शहर में दिगम्बर जैन समाज में उप समाज भी हैं तो उनमें भी उनका सम्पर्क नहीं पायेंगे। ऐसा कोई लगनशील सब प्रकार योग्य विशाल हृदय नेता जो कि जैन बन्धु मालूम होते ही उसे अपने गले लगाले, उसका सब हाल जानकर फिर उसे उन्नति के उपाय बताये, मिलना दुर्लभ है। हमारे इस क्षेत्र बुन्देलखण्ड में श्री जमना प्रसाद जज सा० के नाम से प्रसिद्ध रहे हैं। उनका आगमन होते ही सब लोग प्रसन्नता अनुभव करने लगते थे, कार्यकर्ताओं को बल मिल जाता था। किन्तु यह जन्म जात नेता बहुत जल्दी ही हमसे अलग हो गया। मैंने तो उनके द्वारा परिषद के माध्यम से जो आगे काम करने की बात सोची थी, उसका नक्शा ही बदल गया। अब इस क्षेत्र में किससे बात करें। इनकी व्यापक दृष्टि और विशाल हृदय का समाज सेवी व्यक्ति पाना अभी तो असम्भव सा लगता है।

जमना प्रसाद और समाज सेवा

— श्री एस. जो. सिंघई, एडवोकेट, अमरावती —

हम सब लोग जमनाप्रसाद जी को 'बाबूजी' कहकर संबोधन करते थे । वे अपनी जजी के कार्यकाल में दो बार अमरावती आये; एक बार सन् १९३४ में सिविल जज की हैसियत से और दूसरी बार सन् १९४६ में ऐडीशनल डिस्ट्रिक्ट जज की हैसियत से। अमरावती के समाज के सभी स्तर के व्यक्तियों से उनके खूब प्रेम सम्बन्ध रहे, क्योंकि यहाँ पर बहुतायत उन लोगों की थी जो उनके सामाजिक कार्यों में उन्हें उनके विचारानुसार सहयोग देते थे। स्थिति पालक लोग भी यथा संभव उन्हें सहयोग देते थे। अमरावती के जैन समाज ने उन्हें खूब प्यार किया, उनका आदर किया और उनका गौरव बढ़ाया। बाबूजी के दिल में भी अमरावती वालों के बारे में बहुत ही आत्मीयभाव सदैव रहे। यहाँ पर बाबूजी ने जैन परिषदों का आयोजन किया, आपस में मेलमिलाप बढ़ाने के हेतु सहभोज एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम करवाए, विद्यार्थियों को स्कौलरशिपें दिलवाईं, जातिभेद मिटाने और आपसी फूट मिटाने के प्रयत्न किये, आदर्श विवाह करवाये, मृत्यु भोज बन्द करवाये, इस विभाग के मंदिरों और तीर्थों की सुव्यवस्था हेतु प्रयत्न किये और जब तक वे यहाँ रहे सदैव कुछ न कुछ भव्य सामाजिक कार्यक्रम उनकी प्रेरणा से होते रहते थे। उनके यहाँ से चले जाने पर वे सब कार्यक्रम बन्द हो गये। इसलिये यहाँ के समाज पर उनकी अमिट छाप पड़ी हुई है। सिंघई पन्नालाल जी और डा० हीरालाल जी जैन बाबूजी को खूब चाहते थे और उनके हर सामाजिक कार्य में सहयोग देते थे और उन्हें बढ़ावा देते थे। बाबूजी अपने मिलनसारी और प्रेमी और प्रेरक स्वभाव से सबों को आकर्षित करते थे और हरएक से उनकी योग्यता के अनुसार कार्य करवाते थे। वे किसी सम्मेलन या महफिल में जाते तो चंद मिनटों में ही सभी परिचितों से कुछ न कुछ प्रेम की और काम की बात कर लेते थे।

सामाजिक कार्य करने का उन्हें इतना चस्का था कि अपने न्यायाधीश पद की उन्नति के बारे में भी कम सोचते थे। अगर उन्होंने अपने न्यायाधीश पद की उन्नति की तरफ उतना ध्यान दिया होता तो निश्चयतः वे रिटायर होते समय हाईकोर्ट जज होते।

बाबूजी ने साधारण स्थिति में परवरिश पाकर अपने पुरुषार्थ से आर्थिक क्षेत्र में भी खूब तरक्की की। वे समाज के सामान्य से सामान्य व्यक्ति के साथ मिल जुलकर और प्रेम

के साथ काम कर सकते थे तथा दूसरी तरफ साहूजी जैसे उद्योगपति तथा अन्य बड़े-बड़े पदाधिकारी व्यक्तियों और विद्वानों के साथ बैठकर सामाजिक कार्य करते थे। हम यह कह सकते हैं कि बाबूजी ने जैन समाज का साधारण हैसियत का वर्ग और सामंतवादी वर्ग, इन दोनों में परस्पर समन्वय, मिलन और सहयोग करवाने में काफी प्रयत्न किये।

बाबूजी ने रिटायर होने के बाद वकालत करने की कोशिश की मगर दो वर्ष में ही उकता गये। हमने इसका कारण उनसे पूछा तो उन्होंने कहा, "आजकल बड़ी ही कम योग्यता के व्यक्ति भाई भतीजावाद के कारण हाईकोर्ट जज बने हुए हैं। बहुत बार ये लोग परस्पर विरोधी फैसले देते हैं। बहुत बार ऐसा मालूम होता है कि फैसला किसी अन्य अंतःस्थ हेतु से दिया गया है। हमारे जमाने में ऐसा नहीं होता था। ऐसे लोगों के सामने वकीली करने में अब कोई मजा नहीं रहा है। दूसरे, परिचित लोग काम तो करवा लेना चाहत हैं मगर फीस के बदले केवल समाज-सेवा की तारीफ कर देना चाहते हैं। इससे अच्छा तो यही है कि हम अपना आगे का पूरा समय परिषद के कार्य में दें।" यही बात वे अपनी जीवनी की याददाश्त में लिख गये हैं।

बाबूजी के जीवन पर स्वामी सत्यभक्त जी के विचारों का गहरा प्रभाव था। उनकी सर्वजाति समभाव, सर्वधर्मसमभाव और समाज सुधार की सभी गतिविधियों में स्वामी जी के तत्वज्ञान की धारा बहती दिखाई देती थी।

यद्यपि बाबूजी परम सुधारक थे तब भी जैन धर्म पर उनकी अटूट श्रद्धा थी।

बाबूजी की याद में लिखते-लिखते लेखनी थक सकती है मगर वे बातें खत्म नहीं हो सकतीं। जितना लिखो उतना थोड़ा है।

निःस्वार्थ आदर्श जीवन

— श्री डालचन्द जैन —

[स्वर्गीय बैरिस्टर साहब ने समाज की अनेक प्रकार से अनगणित सेवायें की हैं जो उन्हें चिरस्मरणीय बनाये रखेंगी। इस लेख में उनकी कुछ सेवाओं पर प्रकाश डाला गया है]

बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी के जीवन का यह ध्येय था कि आप सामाजिक या आपसी झगड़ों के कोर्ट में जाने के पहले ही उनका पंचायती फैसला करा दिया जाये। आपने एक नहीं हजारों झगड़ों को सुलझाकर लाखों रुपया पानी में बहने से बचाया है। ओरेला (पेन्ड्रा रोड) में आपने श्री रूपचंद जी व श्री चितामन जी के झगड़े तय कराये। चितामन जी व व उनके भतीजे श्री लक्ष्मीचंद जी जैन का पंचायती बंटवारा कराने के साथ-साथ आपने वहां के जैन मन्दिरों का एकीकरण कराके पारस्परिक झगड़ों की सदा के लिए समाप्ति करा दी, तथा मन्दिरों की अतिरिक्त आय का सदुपयोग जैन औषधालय, लायब्रेरी और गरीब विद्यार्थियों की सहायता में करवाया। फिर आपके द्वारा पेन्डरा निवासी श्री रूपचंद जी के ६ लड़कों तथा उनकी मां का भी आपसी बंटवारा हुआ। यहाँ की जनता ने इस बात से आपकी भूरि-भूरि प्रशंसा की और जैन समाज का हजारों रुपया मुकदमेबाजी से बच गया। पेन्डरा का जैन मन्दिर श्री जैन मन्दिर पंचायत को दे दिया गया।

इसी तरह भेलसा में आपके प्रयत्न से ही जैन हाई स्कूल श्रीमंत सेठ लक्ष्मीचंद के द्वारा खोला गया। वह जैन हाई स्कूल आज डिग्री कालेज में परिवर्तित होकर विद्यार्थियों की खूब सेवा कर रहा है। आपके ही प्रयत्नों से धवला ग्रंथों के प्रकाशन के लिए १०,०००) का दान प्राप्त हुआ था।

सागर में आपने ही श्री रामचरण लाल जी चौधरी और सराफ वकील के घरों के झगड़े आपस में तय करवाये। छतरपुर में आपने दस्सावालों को पूजा का अधिकार दिलवाया।

अमरावती में जैन परिषद का आयोजन किया, आपसी भेदभाव मिटाये, मन्दिर और तीर्थों की सुव्यवस्था की, सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम रखे और आदर्श विवाह करके समाज के सामने आदर्श रखा। आपके ही कारण बिनेकावारों का परवारों के साथ खान-पान और विवाह शुरू हुए।

आपने जगह-जगह मरण भोज बंद कराये। भोज के कारण कभी-कभी गरीब व्यक्तियों को कर्ज लेकर भी यह रस्म अदा करनी पड़ती थी। आपने इसका घोर विरोध किया। आप स्वयं कभी भी मरण भोज में नहीं जाते थे और न दूसरों को जाने देते थे।

आपने बहुत से वृद्ध और अनमेल विवाह रोके। इसके लिए लाठी प्रहार सहे, जूते खाये कोर्ट में केस लड़े, पर उन विवाहों को रोक कर ही दम ली। आपने हरदा में जैन बोर्डिंग की समस्याओं को सुलझाया। वहां के आपसी भेदभाव मिटाकर वहां की जैन धर्म-शाला को नया रूप दिया और मन्दिरों की दशा सुधारी।

बिनेकावार जाति के लोगों का न तो समाज में खान-पान था, न बेटी व्यवहार। आपने अमरावती में सबसे पहले प्रो० हीरा लाल जी के यहां सारी जैन समाज के नवयुवकों को आमन्त्रण देकर बुलाया, तब से प्रो० हीरालाल जी के साथ-साथ बिनेकावार जाति के लोग भी अन्य लोगों के साथ खाने-पीने लगे, पूजन करने लगे और अब तो वे अपनी बेटियां भी परवारों में ब्याहने लगे हैं।

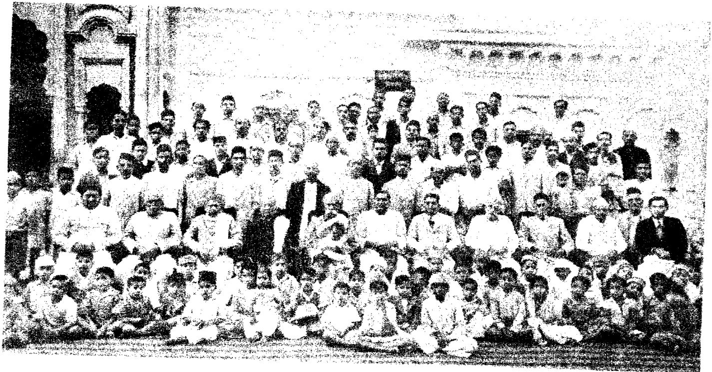
आपने स्वयं अपने लड़के का अन्तर्जातीय विवाह करके समाज में उदाहरण रखा। अब खूब अन्तर्जातीय विवाह हो रहे हैं। फिर उन्होंने आदर्श सामूहिक विवाह पद्धति निकाली और कम से कम ५०० ऐसी आदर्श शादियां करवाईं। देहली में उन्होंने अपने द्वितीय पुत्र केप्टेन राजेन्द्रकुमार का आदर्श विवाह करके यू० पी० वालों के लिए मार्गदर्शक का काम किया।

विधवा विवाह भी आपने शुरू करवाये। उनका कहना था कि छोटी-छोटी उम्र में जो लड़कियाँ विधवा हो जाती हैं उनका फिर से विवाह होना बहुत जरूरी है।

जाति बहिष्कृत लोगों को जाति में शामिल कराया, अन्यथा वे दूसरा धर्म ग्रहण करके उस जाति में शामिल हो जाते।

लोगों से मेल-मिलाप बढ़ाने के लिए आपने हर शहर में सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये और करवाये, जिससे समाज की बिखरी हुई शक्ति एकत्रित होकर जैन समाज के उद्धार कार्यों में लग गई।

यह आप जैसे कर्मठ व्यक्तियों का ही काम था कि जैन कन्वेन्शन में शामिल होकर प्राचीन मूर्तियों के विध्वंस का केस अपने हाथों में लेकर बीमारी हालत में भी तूफानी दौरे किये।



नरसिंहपुर (मध्यप्रदेश) में सन् १९३० में बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी द्वारा आयोजित श्वेताम्बर व दिगम्बर भाइयों के मिलन का दृश्य ।



१९४४ में छिन्दवाड़ा में बैरिस्टर साहब और उनके परिवार के सदस्य।

साहस और उत्साह की मूर्ति

—— श्री साहू श्रेयांस प्रसाद जैन, बम्बई ——

स्वर्गीय श्री जमना प्रसाद जी से मेरा बहुत ही घनिष्ट सम्पर्क था। वह सामाजिक कार्यों में बहुत आनन्द लेते थे और उन्होंने सामाजिक क्षेत्र में जो भी कार्य किए हैं, प्रशंसनीय हैं। उन्होंने समाज में प्रस्तुत बुराइयों को दूर करने का भरसक प्रयत्न किया। विशेषकर शादी व्याह सम्बन्धी दहेज आदि के रिवाजों को दूर करने में उन्होंने भाषण तथा लेखों द्वारा प्रचार किया और कुछ सीमा तक सफलता भी प्राप्त की। उन्होंने "सामूहिक विवाह" की प्रथा का चलन किया जो कि सामाजिक दृष्टि से बहुत ही कार्यशील सिद्ध हुई।

वह जैन समाज के कार्यों में बहुत रुचि रखते थे और उन्होंने जो भी कार्य जैन-समाज के सम्पर्क में आकर किए, वे सब सराहनीय हैं। मुख्यतः उन्होंने मध्य प्रदेश के सामाजिक क्षेत्र में जो कार्य किये वे भूले नहीं जा सकते। दैनिक कार्यों में इतने व्यस्त रहने पर भी वे सामाजिक कार्यों के लिए हमेशा तत्पर रहते थे! उनके द्वारा परिषद् के कार्यों की बहुत ही प्रगति हुई।

यद्यपि आज वह हमारे बीच में नहीं रहे और इस संसार मोह से मुक्ति पा चुके हैं तो भी सामाजिक क्षेत्र में उनके कार्य और अटूट प्रयत्न हमारे और आने वाली संतानों के लिए दीप बनकर मार्ग प्रदर्शन का कार्य करेंगे। यदि हम उनका स्मृति दिवस पूर्णरूप से मनाना चाहते हैं तो हमको चाहिए कि हम उनके बताये हुए सिद्धान्तों पर चलें और उनको कार्य-रूप में लायें।

दृढ़व्रती जमना प्रसाद

— श्री राजेन्द्र कुमार जैन, दिल्ली —

स्वर्गीय बैरिस्टर जमना प्रसाद समाज की उन अनुपम विभूतियों में से थे जो एक विशिष्ट मिशन लेकर आते हैं और समाज पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं। वे एक बड़े ही सामर्थ्यशाली और सांस्कृतिक व्यक्ति थे। उनमें वह आत्मबल और आत्मतेज था जो अन्याय और अत्याचार के खिलाफ विद्रोह करने के लिए ललकारता है और उसे कुचले बिना चैन से नहीं बैठने देता। वे परिषद के प्राणप्रतिष्ठापकों, उन्नायकों और उन प्रमुख स्तम्भों में से थे जिनका जीवन स्वयं परिषद की सुधारवादी प्रवृत्ति का इतिहास रहा है और जिनकी बहुमुखी प्रतिभा और शक्ति सम्पन्नता से परिषद का समस्त जीवन ओतप्रोत रहा है। मेरा उनसे विशिष्ट सम्पर्क परिषद के इटारसी अधिवेशन के अवसर पर हुआ था और तब से आजीवन परिषद की समस्त योजनाओं में मेरा उनका साथ रहा।

बैरिस्टर जमना प्रसाद प्रमुखतः समाज सुधारक थे। जिस समय वे सर्वतः समाज सुधार के क्षेत्र में उतरे उस समय तक ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद जी, महात्मा भगवानदीन जी, बैरिस्टर चम्पतराय जी आदि अपने सतत प्रयत्नों से अनुकूल पृष्ठभूमि तैयार कर चुके थे। सबसे पहिले उन्होंने जातीय संगठन का बीड़ा उठाया और समस्त जैन समाज को सामाजिक स्तर पर एक सूत्र में पिरोने की आयोजना की। उनके इस संगठन का आधार था जातिगत समानता। उन्हें अपने इस मिशन में पर्याप्त सफलता मिली।

वे समाज में फैली कुरीतियों और रूढ़िवाद के घोर विरोधी थे और इसी कारण इन पर उन्होंने प्रचण्ड प्रहार किए। सतत प्रयास के पश्चात् उन्हें इस कार्य में आशातीत सफलता भी मिली।

विवाह-संस्था में उन्होंने अनेक सुधार किये। वे अनमेल और बालवृद्ध विवाह के कट्टर विरोधी थे और अनेक अवसरों पर उन्होंने अपनी जान को भी खतरे में डाल कर स्वयं ऐसे विवाहों को रोका। वे स्त्री शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। जीवन के अन्तिम समय में उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन भी किया था। उन्होंने समाज में फैली दहेज की कुप्रथा को रोकने और विवाहों के अवसरों पर होने वाले अपव्यय के निवारण के लिए आदर्श विवाह

का शुभारम्भ किया और इन आदर्श विवाहों को जातीय और अन्तर्जातीय स्तर पर सामूहिक रूप से सम्पन्न होने का विधान किया। आज समाज में प्रत्येक सामाजिक और धार्मिक अवसर पर जो आदर्श विवाहों की धूम रहती है यह उन्हीं के सत्प्रयत्नों का परिणाम है।

शिक्षा के क्षेत्र में जमना प्रसाद जी ने बड़ा कार्य किया। उन्होंने स्थान-स्थान पर स्कूल कालेज और छात्रावास खोले जाने की प्रेरणा की और जैन छात्रों को आधुनिक लौकिक शिक्षा दी जाने की बात पर बल दिया। साथ ही उन्होंने नैतिक और धार्मिक शिक्षा पर भी जोर दिया ताकि छात्र सदाचारी और अच्छे नागरिक बन सकें। समाज में अनेक ऐसे सुयोग्य विद्यार्थी थे जो गरीबी के कारण शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ थे। ऐसे छात्रों के लिए उन्होंने व्यापक स्तर पर छात्र-वृत्तियों का प्रबन्ध कराया। आज समाज में हजारों की संख्या में ऐसे विद्यार्थी हैं जो इस प्रकार की आर्थिक सहायता से उच्च शिक्षा प्राप्त कर उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रहे हैं। इस कार्य को वे समाज का उत्तरदायित्व मानते थे।

उनके सत्प्रयत्न से समाज को अनेक कुरीतियों से छुटकारा मिला। जैन समाज में एक बुरी प्रथा मृत्यु भोज की थी जिसका गरीबों पर बड़ा भार पड़ता था और कई बार तो उन्हें मकान और जेवर बेच कर यह कार्य सम्पन्न कराना पड़ता था। उन्होंने परिषद के तत्वाधान में पिकेटिंग करके और लोगों का हृदय परिवर्तन करके इस कुप्रथा का अन्त कराया। गजरथ प्रथा भी एक अपव्ययकारी कुप्रथा थी जिसमें बड़ी धनराशि का विनाश होता था। इसे बन्द करने और इसमें खर्च होने वाली धन राशि को अन्य समाजोपयोगी कार्यों, शिक्षा-प्रसार आदि में लगाने के लिए उन्होंने लोगों को प्रेरणा दी। प्राचीन जैन तीर्थों की मूर्तियों के संरक्षण के लिए उन्होंने संग्रहालयों की योजना कराई ताकि हमारे प्राचीन तीर्थों की और जैन संस्कृति की सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध हो जाये।

वे एक कर्मठ जनसेवक, कर्मयोगी, दृढ़प्रतिज्ञ, समाज सेवी, साहसी एवं निष्ठावान समाज सुधारक थे। उनका अपना सारा जीवन समाज सेवा और समाज सुधार में बीता। उन्होंने जैनों को वास्तव में एक संगठित समाज की कल्पना दी और उसे साकार करने में अपना सारा जीवन लगा दिया।

उन्होंने अपने जीवन में समाज के लिए इतना कुछ किया है कि उनके सभी सत्कार्य उन्हें चिरस्मरणीय बनाए रखने के लिए पर्याप्त हैं। आज वे हमारे बीच नहीं हैं और उनके अकस्मात् निधन से सामज को जो महान क्षति हुई है, उसकी पूर्ति होना असंभव है।

बैरिस्टर जमनाप्रसाद : कुछ संस्मरण

— डा० ताराचन्द चौधरी, ललितपुर —

[प्रस्तुत लेख में बैरिस्टर साहब के भानजे डा० ताराचन्द जी ने बैरिस्टर साहब के जीवन से सम्बन्धित कतिपय रोचक प्रसंगों पर बड़ी मार्मिक शैली में प्रकाश डाला है जिनसे उनके जीवन और स्वभाव का अध्ययन करने में पर्याप्त सहायता मिलती है —सम्पादक]

(१)

सन् १६३४—सीटी ट्रेन की की···की···की···। तीन-चार दफा ट्रेन ने पछार (आजका अशोक नगर, मध्यभारत) की स्टेशन पर रुक २ कर चलने के लिये आवाज की, लेकिन ट्रेन चली नहीं। मैंने मां से पूछा कि मां ! ट्रेन आज सीटी देकर भी चल क्यों नहीं रही है। मां का चेहरा यकायक शोक में डूब गया। कहने लगीं—शायद बेटा स्टेशन पर झगड़ा हो गया। आज तुम्हारे मामाजी और पिताजी एक बारात लौटाने गये हैं। लगभग ५ मिनिट बाद ट्रेन एक लम्बी आवाज करती हुई रवाना हो जाती है। १५ मिनिट बाद घर पर मामाजी, पिताजी और अन्य २०-२५ आदमियों का समूह आ जाता है। मामाजी और पिताजी का बदन लहुलुहान है। कपड़े फटे हुये और आंखों से खून टपक रहा है। परिस्थिति से परिचय प्राप्त करने में असमर्थ हूँ। हिम्मत नहीं होती है कि मालूम कर सकूं कि क्या हुआ था। कुछ देर बाद मुझे बुलाया जाता है और पानी देने को कहा जाता है। तब अन्य लोगों से पता लगता है कि उस दिन पछार के एक धनी मानी व्यक्ति श्री कुंजलाल जी (आयु लगभग ५० वर्ष) की बारात जा रही थी। जज साहब को और पिताजी को यह बात असहनीय थी। अन्य लोगों से मिलकर स्टेशन पर बारात हर प्रकार से रोकने की योजना बनाई गई। ट्रेन आने के पहिले सेठजी के पैरों में मामाजी ने सिर रख दिया और हर प्रकार हृदय परिवर्तन का प्रयत्न किया, लेकिन निष्फल ? ट्रेन आ गई, बारात डिब्बों में चढ़ने लगी। फिर तो वह उठा-पटक हुई कि आज तक उस घटना को पछार में लोग बड़े उत्साह से याद करते हैं।

(२)

दो वर्ष बाद इसी प्रकार एक धनी सेठ अपनी बारात मुंगावली से लेकर गुना गये। मामाजी और पिताजी (स्वर्गीय वैद्य मोतीलाल जी चौधरी) को मालूम था। योजना बना और मामाजी गाड़ी से गुना रवाना हो गये। वहाँ पर शादी को रोकने की बहुत कोशिश की, लेकिन बेकार रही। उल्टे इन लोगों के खिलाफ रिपोर्ट पुलिस में देकर दोनों को हवालात में बन्द करवा दिया गया। फिर क्या था गुना में नवयुवकों और समाज-सुधारकों में बेचैनी फैल गई और आखिर वह सम्बन्ध नहीं हो सका और विजय इन लोगों की रही।

(३)

मामाजी का पत्र आया है। लिखा है कल १ बजे की गाड़ी से मैं गुना जा रहा हूँ। सौ० कौसाबाई को स्टेशन पर ले आना और अगर नहीं आ सकें तो सायंकाल स्टेशन पर तैयार रखना, मैं घर पर बहिन से मिल लूंगा। मां की स्थिति स्टेशन तक जाने की नहीं है। हम लोग स्टेशन पर सायंकल लेकर जाते हैं। ट्रेन आती है। बहिन की हालत पूछते हैं। फिर गार्ड से २ मिनट का समय मांगते हैं और सायकल पर चढ़कर बहिन से मिल कर स्टेशन पर आ जाते हैं।

(४)

सन् १९४३—बैलगाड़ी से मुंगावली से चन्देरी (२३ मील) जज सा० और प्रो० हीरालाल जी आये हैं। शरीर थक कर चूर हो रहा है। गर्द और गुबार से भरे हुए हैं, लेकिन चन्देरी आये है। प्रो० हीरालाल जी लाख मना करें, लेकिन उनको भी चन्देरी के दर्शनीय स्थान देखने तो जाना ही पड़ेगा। आखिर प्रो० साहब को साथ ले कर काफी ऊँचा पहाड़ चढ़ कर जाते हैं और वहीं स्नान करते हैं। बाल स्वभाव, चपलता और शरारत उनकी आंखों में तैरती है और वे स्वयं जल में तैरते हैं। फिर-इधर-उधर घूमने जाते हैं। दिन में प्रो० साहब को समाज की ओर से मानपत्र देने की योजना बनवा कर कार्यान्वित करवाते हैं।

(५)

सन् १९४५—जून की लपलपाती तेज दोपहरी और सांय-सांय चलती, बदन को झुलसाती लू। मामाजी मुझसे कह रहे हैं—बेटा, स्टेशन चलो। मैं उनके साथ स्टेशन जा रहा हूँ। मामा जी मिलिट्री के खाकी रंग का पैण्ट और बुशशर्ट पहने हैं और मिलिट्री के डिसीपिलिन की तारीफ कर रहे हैं और मुझे उपदेश दे रहे हैं। मामाजी मुझसे टिकिट लाने को कहते हैं। मैंने पूछा कि इण्टर का लाना है? मामा जवाब देते हैं—बेटा, समाज के काम से मुझे सतना जाना है। मैं अपना अधिक पैसा तो खर्च करने योग्य नहीं हूँ। हां, समय अवश्य दे सकता हूँ, इसलिये थर्ड क्लास का टिकिट ही लाना।

(६)

मामाजी के बड़े लड़के की बारात जा रही है। इटारसी से ४-६ मित्र और रिश्तेदार साथ हो गये हैं। कुछ भेलसा (वर्तमान विदिशा) से, कुछ बीना से और कुछ झांसी से इस,

प्रकार बराबर मित्र और रिश्तेदार आते जाते हैं—कोई चिंता नहीं, कोई परेशानी नहीं। आगरा में चैकिंग होती है। टिकिट कम पड़ते हैं, भुगतान किया जाता है।

(७)

परिषद के काम से लखनऊ जाना है। मामाजी और उनके अन्य साथी हैं—रास्ते में टिकिट चैकर से कुछ कहा-सुनी होती है और हाथापाई होती है। वह रिपोर्ट करता है। पुलिस आ जाती है और अन्य लोगों के बीच-बचाव से स्थिति सम्भलती है।

(८)

आज मामा जी ललितपुर आए हैं। उनसे शायद ही कोई ऐसा सुसंस्कृत परिवार बचेगा जहाँ वे न जायें—हर आदमी के यहाँपर स्वतः जाना, सुख-दुख की बात करना, समाज और व्यक्ति की चर्चा करना और उन्मुक्तता से हँसना उनके जीवन का अविभाज्य अंग था।

(९)

आज मामा जी ललितपुर आये हैं—पिता जी को देखने के लिए। लेकिन शहर में किसी धनीमानी व्यक्ति के यहां ठहरे हैं क्योंकि मेरा घर शहर से १ मील दूर है और उनको मेरे यहां पर शहर के अन्य आदमियों से मिलने में सुविधा नहीं होगी। लेकिन मुझे विशेष-रूप से यह बात अखर जाती है। सवेरे मैं उनका निमंत्रण करने जाता हूँ और जीवन में पहिली और अन्तिम बार उनके सामने मुंह खोलता हूँ और पूंजीवादी वर्ग की जो विशेषतायें उनमें हैं, उनको उधेड़ता हूँ। वे क्रोध में लाल हो जाते हैं। लेकिन दो घंटे बाद स्वतः ही डिस्पेंसरी में आते हैं और मुझे अपने साथ चलने को कहते हैं। मैं कुछ अवहेलना से और कुछ क्रोधवश अपने रोगियों में फँसे रहने का अभिनय करता हूँ। वे इस बात को ताड़ जाते हैं और भविष्य में फिर कभी मेरे घर के अलावा अन्यत्र नहीं ठहरते हैं।

(१०)

सन् १९५५—सवेरे एक्सप्रेस (८ बजे) से मामा जी बीना गये हैं। १० बजे तार आता है कि मैं पिता जी को बीना भेज दूं, ताकि उन्हें वे अपने साथ नागपुर वायु-परिवर्तन के लिए ले जा सकें। ११ बजे मेल से उनका संदेशवाहक पिता जी को लेने स्वतः आ जाता है और मजबूर होकर मुझे पिता जी को भेजना पड़ता है। हालांकि दुर्भाग्य से फिर पिता जी नागपुर से लौट कर नहीं आ सके और उनका वहीं स्वर्गवास हो गया, लेकिन मामाजी की लगन जहां लगी, हमेशा उसे पूरा करने का प्रयास किया।

(११)

सन् १९५६—अक्टूबर मास में मामा जी दिल्ली से आए हैं। साथ में कोई सज्जन दिल्ली से उनके साथ आए हैं। आजकल मामाजी ने देवगढ़ आदि क्षेत्रों की मूर्तियों की चोरी का मामला अपने हाथ में ले लिया है। उसी के सम्मेलन या मीटिंग आदि में सम्मिलित होकर लौटे हैं। दिल्ली से चलते ही ट्रेन में दिल का दौरा पड़ा। बड़ी जोरदार कै हुई।

पसीने से सारा शरीर तर हो गया। चेहरा पत्थर के समान कठोर हो गया है। छाती दोनों हाथों से दबाए हुये हैं। राम-राम करके दौरा शांत हुआ। लोगों ने वापस दिल्ली जाने का आग्रह किया, लेकिन बेकार। मामा जी को तो खनियाधाना पहुँच कर वहाँ की चोरी का अध्ययन करना था। बिना सहारे के चलने में असमर्थ हैं, लेकिन वहाँ पर भी दूसरे के कंधे का सहारा लेकर पहाड़ पर चढ़ते हैं। लौटते समय रास्ते में दूसरा दिल का दौरा पड़ता है। सवेरे मामा ललितपुर आये हैं। मुझे बुलवा लिया है क्योंकि बिना सहारे और बिना छाती दबाये चल नहीं सकते हैं। सबको बुलाया, मूर्ति चोरी पर विचार-गोष्ठी हुई और लो! शाम के तीन बजे हैं मामा जी बीना जाने के लिये मेल पकड़ने को स्टेशन चले। मैंने उनको रोकने की बहुत कोशिश की। हर प्रकार बीमारी का घातक पहलू समझाने का प्रयत्न किया, लेकिन कोई असर नहीं हुआ है और वे मुंगावली और वहां से ऐसी हालत में चन्देरी जाने को निकल गये हैं। यही मेरा और उनका आखिरी साक्षात्कार था।

(१२)

दिसम्बर, १९६०—नागपुर में मित्रों ने सलाह दी है कि अब जज साहब को पूर्ण विश्राम करना चाहिये और सम्भवतः यह किसी परिचित स्थान में रहने पर सम्भव नहीं होगा, क्योंकि मौन या चुपचाप रहना उनकी प्रवृत्ति के परे है। अतः तय होता है कि मामा जी अपने दूसरे लड़के के साथ, जो मिलिट्री में कैप्टन हैं, ठहरेंगे। वहां कोई परिचित नहीं होगा। वातावरण भी बहुत शांत और गम्भीर होगा। मामी का आपरेशन भी मिलिट्री अस्पताल में हो जायेगा। योजना कार्यान्वित की जाती है। लेकिन यह क्या? जज साहब तो रात ९ बजे मिलिट्री आफिसर्स क्लब में ब्रिज खेलते हैं और अन्य प्रकार के खेलों में पूरी दिलचस्पी लेते हैं। कई आफिसरों से दोस्ती हो गई है और उनके मुक्तहास से क्लब की दीवालें गुंजायमान हो उठती हैं। क्लब से लौटने के बाद वे रात्रि में १२ से २ बजे तक अपना अध्ययन करते हैं। सवेरे-शाम अस्पताल के डाक्टरों से दोस्ती करते हैं। उनका २४ घण्टों का समय आराम की जगह व्यस्तता में बीतता है। कोई कह नहीं सकता है कि जज साहब हृदयरोग से पीड़ित हैं।

* * *

आखिर ४ जनवरी, १९६० को अपने परिवार के बीच फिर दौरा पड़ता है और वे महा-प्रयाण कर जाते हैं।

जब तक वे जिये, एक जलते हुए शोले की तरह और एक क्षण में शांत हो गये। ये स्मृतियां मन को कचोटती हैं। अब उनके मुक्तहास, हार्दिक स्नेह और प्रौढ़ सलाह से हम लोग हमेशा के लिये वंचित हो गये हैं।

कर्मवीर जमना प्रसाद

— श्री जैनेन्द्र कुमार, दिल्ली —

बैरिस्टर जमना प्रसाद जी को अभी स्वर्गीय नहीं होना चाहिए था। यों अवस्था भी अधिक नहीं थी पर बैरिस्ट्री और जजी पार करके वे अभी पूरे तौर पर उसमें कूदे थे जो उनकी सच्ची लगन थी। वह अपने को चैन देने वाले नहीं थे। अनायास दूसरों की ओर सबकी ओर बढ़ते थे और उनमें घुलमिल जाते थे। उनकी इस वृत्ति ने उन्हें सफल भी बनाया और अंत में तोड़ भी दिया। इस सामाजिकता से उनका लौकिक व्यक्तित्व पुष्ट हुआ और वे लोकप्रिय भी रहे। लेकिन आन्तरिक स्व कहीं क्षीण भी हुआ और वह अन्तरंग में एकाकी और प्रश्नग्रस्त बनते चले गए। लौकिक उन पर धार्मिक से प्रधान बनकर छाया रहा और जीवन भर प्रवृत्ति-मयता में उन्होंने अपने को विश्राम नहीं दिया। इसी से पीछे उन्हें निवृत्ति की चाह हो आई। किन्तु वह निस्संग एकांत उन्हें नहीं मिल पाया और कर्मक्षेत्र ने जब उन्हें उठाया तब अन्दर से तोड़ भी दिया।

मुझ पर उनके वेग और अदम्यता की गहरी छाप है। वे सीधे अपने उद्दिष्ट की तरफ जाते थे और विवाद में नहीं उलझते थे। प्रकृति ने उन्हें त्वरा दी थी और तदनुकूल आवेश भी। लेकिन उसके कारण जब जब कठिनाई उत्पन्न होती तब तत्काल मुड़ने, झुकने और स्थिति निभा लेने की दक्षता उनमें जग जाती। वे हठी नहीं थे, संकल्पी थे और कुछ उनमें सच्ची लगन की ऐसी विद्युत् थी कि दूसरे को स्पर्श किए और अपना रंग दिए बिना न रहती थी। इस तरह जगह-जगह उन्होंने एक झोंक में तरह-तरह के काम उठाये और उन्हें साध करके दिखाया।

एक चीज पर मुझे अब तक विस्मय है। वह है उनकी रेल में तीसरे दर्जे की यात्रा। भारतवर्ष में तीसरे दर्जे का सफर काफी तपश्चरण है। आदमी औसान भूल जाता है और उसके मन में होता है कि पैसे की सुविधा होती तो यह हत्या वह कभी न मोल लेता। किंतु जमना प्रसाद जी का साहस इस परीक्षा में कभी न झुका। केवल पैसे का प्रश्न न था, उनकी प्रकृति का भी प्रश्न था। उन्हें सामान्य बनने में कठिनाई न होती थी बल्कि उल्टे कुछ रुचि जान पड़ती होगी। ऐसे संकट की विकट घड़ी में जज थे तो क्या, बाहूबल भी

आजमाने में उन्हें दिक्कत न होती थी। वे निरे बौद्धिक न थ, व्यावहारिक और कायिक भी पर्याप्त थे। इसी से उनमें और दूसरे में कोई स्तरगत अन्तर नहीं पड़ता था और वे समाज के सभी स्तरों और वर्गों में आसानी से घुलमिल जाते थे।

समाज काफी कटा-फटा आज मालूम होता है। श्रेणीगत स्तल है और वहां विशिष्ट सामान्य जैसे भेद हैं। फिर दूसरे तरह के जात-बिरादरी, पन्थ-आम्नाय के विभागीय भेद भी हैं। ऐसी अवस्था में वह व्यक्ति कीमती होता है जो उन सब में आरपार एक से आत्मीयभाव से तैरता चला जाता है। जमनाप्रसाद कुछ ऐसे ही चलनशील और प्रवाही व्यक्तियों में से थे और समाज उनको लेकर और आस-पास आकर एक जुट होने में सहायता पा सकता था किन्तु नहीं, वैसा नहीं हो पाया और जमना प्रसाद जी हम से बीच में ही छिन गये। धनी-निर्धन, पण्डित-अपढ़, सुधारक और नीति पालक, शहरी-देहाती सामाजिक रीति से वह इन सब में समरस हो जाते थे। आशय यह नहीं कि विचार में या उसकी दृढ़ता से वह कोरे थे। उस सम्बन्ध में उनका पराक्रम विदित ही है। लेकिन व्यक्तित्व विचार से या प्रण से आबद्ध नहीं था। मुझे उस व्यक्तित्व की याद आती है और सोचता हूँ कि काश वह जैन समाज के लिए आज के दिन सुलभ हो सकता।

मेरे छात्र जीवन के साथी

— श्री कोमलचंद जैनी एडवोकेट, इन्दौर —

सन् १६१६ में हम दोनों कालेज में अध्ययन करते थे तथा श्री. स. से. सरूपचन्द हुकमचंद दि. जैन बोर्डिंग हाउस, इंदौर में एक ही कमरे में निवास व अध्ययन करते थे। उनको व्यायाम का छुटपन से ही शौक था। उनमें समाज सेवा करने की छात्र जीवन से ही प्रबल इच्छा थी। वे चाहते थे कि दिगम्बर जैन समाज की उप-जातियों की भावात्मक एकता के लिये बुंदेलखंड प्रांत को प्रथम कार्य क्षेत्र बनाया जाय।

उस समय इंदौर में बुंदेलखंड प्रांत की सभी उपजातियों के गृहस्थ रहते थे। परवार समाज के ज्यादह घर थे और गोलापूर्व व गोल-लारे जाति के कम थे। इन तीनों जातियों के भाइयों में एकता लाने के लिये उन्होंने बुंदेलखंड-भ्रातृ-समिति की स्थापना की। उसके सभापति बदामीलाल जी तथा मंत्री वे स्वयं थे। इस समिति के प्रयत्नों से इन तीनों जातियों के गृहस्थों में बड़ा भाई-चारा बढ़ा। हर एक के सुख-दुख में बिना कोई भेद-भाव का विचार किये सब शरीक होते थे। बाहर से जब कोई बुंदेलखंड प्रांत के जैनी भाई आते, उनमें इस समिति के उद्देश्यों का प्रचार करते। आपस में भाई-चारा बढ़ाने के लिये सामूहिक भोजन, नौका-विहार वगैरह के कार्यक्रम बनाया करते थे।

भाई जमनाप्रसाद जी कलरैया में एक बड़ी विशेषता यह थी कि उनसे अन्याय होते देख चुपचाप बैठे रहना असह्य हो जाता था। अन्याय होते देख एकदम उनका खून खौल उठता था व उस समय उस अन्याय के विरोध स्वरूप या प्रतिकार स्वरूप फौरन कुछ-न-कुछ वे कर ही डालते थे। बोर्डिंग के जीवन में एक समय उनसे यह नहीं देखा गया कि जो पलंग विद्यार्थियों के है उनमें से अच्छे २ पलंग सुपरिटेंडेंट ले जावें व टूटे पलंगों पर विद्यार्थी सोवें। इस विषय को लेकर उनकी व सुपरिटेंडेंट साहब की बहुत तकरार हुई व जब उनकी नहीं चली तो उन्होंने विरोध स्वरूप सुपरिटेंडेंट साहब के कमरे में मट्टी फेंकी—इसके फलस्वरूप उन्हें बोर्डिंग से पृथक् होना पड़ा किंतु उसकी इन्होंने कोई परवाह नहीं की।

इस घटना के बाद वे अलग रहे व उन्होंने एम. ए. एल-एल. बी. तक का अध्ययन होल्कर कालेज, इंदौर से किया। इसके बाद वे गवर्नमेंट सर्विस में पहले इंनकमटेक्स डिपार्टमेंट में

आफीसर के रूप से व बाद में ज्यूडीशियल डिपार्टमेंट में सिविल जज के रूप में मध्यप्रदेश रहे। उन्होंने अपने ही पैरों पर खड़े होकर बिना किसी की सहायता के लंदन में अध्ययन कर बैरिस्टरी परीक्षा पास की।

वहां से आकर बैरिस्टर साहब ने कुछ समय तो वकालत की व बाद में डिस्ट्रिक्ट एंड सेशंसजज के ऊंचे पद पर सर्विस करते हुये पेंशन प्राप्त की। उनकी प्रतिभा व समाज सेवा की लगन से प्रभावित हो दि. जैन समाज ने उन्हें दि. जैन परिषद के इटारसी में हुवे अधिवेशन का सभापति बनाया। इंदौर में भी वे इसी घटना के कुछ वर्ष बाद की महावीर जयन्ती के समारोह का नेतृत्व करने आमंत्रित किये गये थे।

सर्विस के समय उन्हें अवकाश कम मिल पाने पर भी जब कभी उन्हें मौका मिलता, समाज सेवा का कार्य वे किया ही करते थे। पेंशन मिलने पर उनका विचार सारा जीवन समाज सेवा में ही व्यतीत करने का था। इस आर्थिक संकट के समय विवाहों में फजूलखर्ची की प्रथा उन्हें बड़ी अखरती थी। इसके प्रतिकार के लिये सामूहिक विवाह का रिवाज फैलाने के लिये उन्होंने अथक प्रयत्न किये व इसके लिये उनके कार्य जैन समाज के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य हैं।

विद्यार्थी जीवन में उनमें जो फक्कड़पन व वत्सलता थी वही उनमें आखिर तक रही। जहां उन्हें पुराना मित्र मिला कि पहले उसे वे अपनी बाहों में लेकर गले से लगाते थे व हर्ष से गद्गद् हो जाते थे।

कलरैया जी का स्मरण आते ही उनके उदात्त विचार व सत्कार्यों की याद आ जाती है व यह याद अपना कर्त्तव्य करने की प्रेरणा देती है।

क्रान्ति के अणुबम

— श्री हंसकुमार जैन, दिल्ली —

जो फूल उपवन में खिलता है, वह धूल में अवश्य झरता है। पर उपवन के कुछ पुष्प झरते-झरते ही अपना ऐसा सौरभ बिखेरते हैं, जिससे समाज, मानवता और राष्ट्र युग-युगान्तर तक सुरभित रहता है। स्व० बेरिस्टर जमनाप्रसाद जी ऐसे ही महान् व्यक्तियों में से थे, जिन्होंने अपनी जीवन-साधनों से समाज व राष्ट्र का परमहित किया है।

प्रारम्भ में बेरिस्टर जमनाप्रसाद जी साधारण व्यक्ति थे पर जीवन के संघर्ष, समाज की निननीय-स्थिति तथा विशेष परिस्थितियों ने आपको सामाजिक क्रान्ति का पथिक बना दिया। समाज में फैली रूढ़ियों, कुप्रथाओं और बुराइयों को निशंक हो आपने अपने पैरोंतले खूब रौंदा। समाज-सुधार के कार्य में वे वीर नैपोलियन बोनापार्ट के समान निडर होकर कूद पड़ते थे। उन्होंने इसके लिये धनिकों, शक्तिशालियों, विद्वानों और त्यागियों तक की परवाह नहीं की। जिस समाज-सुधार के लिये आपने अपना कदम उठाया कभी पीछे नहीं हटाया। आगे बढ़ते ही गये, अन्त में पूरा करके ही छोड़ा।

हमारी सम्मति में बेरिस्टर साहब जैन समाज में क्रान्ति के अणुबम थे। यह अणुबम जिस बुराई और कुप्रथा पर पड़ा, उसी का कचूमर निकाल दिया।

बुंदेलखंड व मध्यभारत में सिघई व सवाई-सिघई बनने के लिये प्रतिष्ठाओं और गजरथों के चलाने की बाढ़ सी आई हुई थी। इस बाढ़ में जैन समाज का करोड़ों रुपया पानी की तरह व्यर्थ जाता था। स्व० बैरिस्टर साहिब ने इसके विरुद्ध अपनी जबरदस्त आवाज उठाई, प्रतिष्ठा कराने वालों को समझाया, न मानने पर सत्याग्रह किया और सफलता प्राप्त की। दस्साओं के धार्मिक अधिकारों के लिये आपने जीवन-संघर्ष किया। पंचों व पंचायतों को समझाया कि धर्मसेवन का अधिकार मानव-मात्र को है। आपके इन प्रयत्नों का फल है कि दस्सा बंधु आज मन्दिरों में दर्शन व पूजन कर रहे हैं।

बैरिस्टर साहिब क्रांतिकारी होने पर भी बड़े विवेकी व दूरदर्शी थे। वे समाज में क्रान्ति या परिवर्तन चाहते थे जिससे गरीब और मध्यम स्थिति के जनों को राहत मिले। आपके परिवार की एक कन्या का संबंध सेठ भगवानदास शोभालाल के सुपुत्र से निश्चित हो

गया। पुत्र विवाह के अवसर पर सेठ जी बड़ा व्यय करने को थे। स्पेशल ट्रेन से बरात जाने का आयोजन किया गया था किन्तु उनके प्रयत्न से सेठ साहब आदर्श रूप में विवाह करने को तैयार हो गए, जिससे समाज के सम्मुख एक अनुकरणीय उदाहरण उपस्थित हो गया। हजार रुपये रेल आदि में जाते, बैरिस्टर साहब इस व्यय के पक्ष में न थे। सेठ साहिब से समाज के सम्मुख एक आदर्श रखने के लिए विनती की और जैन आदर्श विवाह ही हुआ। घटना एक साधारण सी थी, किन्तु व्यापार-हृदय सेठ जी पर इसका यह प्रभाव पड़ा कि यदि इसी प्रकार के आदर्श विवाह समाज में होने लगें, तो समाज के निर्धन व मध्यम स्थिति वाले जनों का विवाह के नाम पर होने वाला व्यर्थ व्यय रुक जाय। बस यहीं से जैन समाज में आदर्श विवाह का बीजारोपण होता है। सेठ जी तथा बैरिस्टर साहब के प्रयत्न से केवल बुन्देलखंड में हजारों आदर्श सामूहिक विवाह हो चुके है और होते जायेंगे। यही सेठ शोभालाल जी परिषद की आदर्श सामूहिक विवाह समिति के आज अध्यक्ष हैं। परिषद उत्तर भारत तथा अन्य प्रान्तों में भी आदर्श सामूहिक विवाहों को प्रचलन बढ़ाने के लिये प्रयत्नशील है। इसका श्रेय स्व० बैरिस्टर साहिब को ही है, जिनकी सूझ-बूझ से जैन समाज में यह पद्धति प्रवर्तित हुई है।

स्व० बैरिस्टर साहब अपनी धुन व लगन के पक्के थे। वे जो निश्चित कर लेते थे, उससे कभी हटते नहीं थे। परिषद के जबलपुर अधिवेशन में इन्होंने आदर्श सामूहिक विवाहों के कराने का आयोजन किया, किन्तु जबलपुर की जैन समाज के कुछ महानुभाव इसके विरुद्ध थे। इस आयोजन के लिये उनको स्थान तक नहीं दिया गया! बैरिस्टर साहिब की इच्छा थी कि परिषद अधिवेशन के समय इनको कराया जाय, जिससे इनकी उपयोगिता परिषद के उत्साही कार्यकर्ताओं को मालूम हो सके, किन्तु ऐसा न हो सका। बैरिस्टर साहब इससे बिल्कुल भी विचलित न हुए। संध्या समय निश्चित समय पर उन्होंने आदर्श सामूहिक विवाहों का कार्यक्रम प्रारम्भ किया। जनता की अपार भीड़ देखने को उमड़ पड़ी, इन वहनों की सादगी, धार्मिकता और अल्प-व्यय आदि को देखकर सभी प्रसन्न हुए। परिषद के कार्यकर्ताओं को प्रतिभासित होने लगा कि आदर्श सामूहिक विवाह में वे सब तत्त्व-निहित हैं, जो समाज की वैवाहिक समस्या के तय करने को जरूरी है। इसके लिये इन्होंने तन-मन और धन लगाया है। सेठ शोभालाल जी आज परिषद की आदर्श सामूहिक विवाह समिति के अध्यक्ष है। अन्य प्रान्तों में भी अब आदर्श विवाहों का चलन होता जाता है। इसकी सूझ-बूझ का प्रमुख श्रेय विवेकी नेता स्व० बैरिस्टर जमुनाप्रसाद जी को ही है।

स्व० बैरिस्टर साहिब ने समाज सुधारों के लिए अपने व्यक्तित स्वार्थ की परवाह नहीं की, अपनी सरकारी नौकरी तक की उपेक्षा की। कितने ही बार समाज-सुधारों, पारस्परिक प्रेम-संगठन बढ़ाने आदि के लिए आपने अन्य प्रान्तों का दौरा किया। इन दौरों में आपने जैन बन्धुओं पारस्परिक के मुकदमे निबटाये और जैन युवकों को समाज सेना के लिए प्रेरित किया।

परिषद के जबलपुर अधिवेशन में इन्होंने ४ आदर्श सामूहिक विवाहों के कराने का आयोजन किया किंतु जबलपुर की जैन समाज इसके विरुद्ध थो। परिषद के अध्यक्ष श्रीमान साहू शांति प्रसाद जी ने वर-वधू के जोड़ों को शुभाशीर्वाद दिया और जैन समाज से अपील की कि इस पद्धति को अपनाये।

समाज सुधारों की संलग्नता और समाज सेवा की व्यस्तता इनके अनेक कार्यों में बाधक बनी। परन्तु इसकी उन्होंने रत्तीभर भी परवाह नहीं की।

बैरिस्टर साहब के विषय में मैंने अपने मित्रों से तथा समाचार पत्रों द्वारा कुछ जानकारी प्राप्त कर ली थी, किंतु मेरा उनका सर्वप्रथम साक्षात्कार परिषद के देवगढ़ अधिवेशन में हुआ था। परिषद की संयोजक कमेटी में कुछ प्रस्तावों पर मैंने उनके उग्र विचार सुने तथा परिषद के पहले साहसिक सुधार कार्यों तथा इनके कार्य संचालकों की यशस्वी-जीवन गाथायें सुनी। उनके टेंटों में परिषद के कार्यकर्ता बहुत समय तक उनके विचारों को सुनते थे। आयु के कारण वे सरकारी नौकरी से अवकाश प्राप्त कर चुके थे। फिर भी उनके भावों व विचारों में नव युवकों जैसी स्पिरिट थी। वे नवयुवकों के जन्मजात नेता थे और आमरण उनका नेतृत्व करते रहे। मैंने देखा कि बैरिस्टर साहिब सरीखे यदि ३-४ समाजसेवी जैन समाज में और हों तो इसके नव-निर्माण में विलम्ब नहीं हो सकता। मुझ पर उनका बड़ा प्रभाव पड़ा।

मृत्यु से कुछ पूर्व उनका कार्यक्रम विधिवत समाज सेवा और सामाजिक क्रांति का था। मुझे आशा थी कि इससे जैन समाज का बड़ा हित होगा, किन्तु दैव को यह मंजूर न था।

उग्र सुधारक जमनाप्रसाद

— डा० कामताप्रसाद जैन, अलीगंज —

भाई जमुनाप्रसाद जी जज जैसे उच्च राजकीय पद पर आसीन होते हुए भी समाज-सुधार की उत्कट भावना से ओत-प्रोत थे—जहाँ मौका होता वहाँ ही वह भावना सक्रिय रूप में प्रकट हो जाती। कभी-कभी तो इसके लिए आपको पुलिस के चक्र में भी पड़ना पड़ा था। सारांश यह कि वह एक धुन के पक्के समाजसुधारक थे।

शायद जबलपुर के जैन परिषद अधिवेशन में मैंने उनके उग्र सुधारक रूप को देखा था? वहाँ उन्होंने पहले-पहल अन्तर्जातीय सामूहिक विवाह का आयोजन किया था। सारा परवार जैन समाज इस नये काम से चिढ़ रहा था—बड़ा विरोध था; परन्तु भाई जमुना-प्रसाद चट्टान की तरह सुदृढ़ थे। इसी का परिणाम था कि उनका यह आयोजन सफल हुआ और ऐसा सफल हुआ कि समाज में सामूहिक विवाह की परम्परा ही चल पड़ी। यह इनका जीवित स्मारक है।

जब वह परिषद के सभापति हुए तब ही शायद उन्होंने भारतव्यापी दौरा किया था। वह आगरा प्रदेश में भी आए थे। परिषद के आगरा प्रदेश के ऑनरेरी संयोजक होने का सौभाग्य उस समय हमें प्राप्त था—इसीलिए हमको ही उनके स्वागतादि का प्रबन्ध यहाँ-वहाँ करना पड़ा था। आगरा, एटा, फर्रुखाबाद, मैनपुरी, इटावा आदि जिलों में उनका दौरा हुआ था। जहाँ-जहाँ जाते वहाँ की विषमता को दूर करके समाज को एकता के सूत्र में बांध देते।

एटा में दो भाइयों की आपसी मुकदमेबाजी को आपने अनशन करके मिटाया। अलीगंज में सभी जैनों को पूजा का समान अवसर दिला कर वैषम्य को हटाया। फर्रुखा-बाद में दस्सा-बीसा का प्रश्न विकट रूप धारण किए हुए था। स्व० श्री अर्हन्त शास्त्र जी वैद्य दस्सा पूजा का विरोध कर रहे थे और वह वहां के प्रमुख व्यक्ति थे। जमनाप्रसाद जी ने उनके भाई श्री श्रेयांसशरण जी को दस्सा पूजा के अनुकूल बना करके उस समस्या को हल करने में सफलता पाई। सारांश यह कि वह जहाँ भी सम्भव होता समाज को संगठित बनाने के लिए कुछ उठा न रखते थे।

उनके अन्तिम दर्शन मुझे सन् १९५५ में द्रोणगिरि सम्मेलन में हुये थे। डा० हाजि-मे नाकामुरा के भाषण का उत्तर जब मैं अंग्रेजी व हिन्दी में देकर बैठा तो वह चुपके से आकर पीठ थपथपा कर बोले—"शाबास, खूब प्रचार कर रहे हो।"

ऐसे लगन के पक्के समाज सुधारक थे वह। आज उन जैसी लगन का कोई युवक नहीं दीखता।

लोक नायक जमना प्रसाद

— महात्मा भगवानदीन —

श्री जमनाप्रसाद जी के अवसान की बात जब कान पर पड़ी तो विश्वास न हुआ। क्योंकि जो सुबह घूमता फिरे उसके शाम को चल देने पर कौन विश्वास कर सकता है? अजी नहीं! जो पौने तीन बजे दिन में टाईप कर रहा हो उसे तो पन्द्रह मिनट के बाद तीन बजे दुनिया छोड़कर चल देने की बात पर उसके पास बैठे हुए भी विश्वास नहीं करेंगे। पर श्री जमनाप्रसाद के साथ हुआ ये ही।

मैंने सुना। जी में आया इसे अनसुना कर दिया जाय। मन ही तो है। उसमें आ गया कि मरने की खबर उड़ी है तो जीने की गारण्टी हो गई। कहावत चली आई है कि जिसकी एक बार मरने की झूठी खबर उड़ जाय, उसकी दस बरस उम्र बढ़ जाती है। पर खबर थी कि कमबख्त झूठी न बन सकी, सच्ची ही रही। फोन ने उसे जैसे ही पक्का किया कि आँख से आंसू ढलक पड़े अन्दर से आपों-आप आवाज निकल पड़ी 'हैं'?

जमनाप्रसाद देवता नहीं थे। देवता होते तो निकम्मे होते। देवताओं का जिसने भी, जो भी, चित्र खींचा है उससे उनका निकम्मापन ही साबित होता है। फिर मैं क्यों न कहूँ कि ये अच्छा ही हुआ कि वे देवता पुरुष न थे। उनमें क्रोध, माया, मान, लोभ सब थे। पर वे ऐसे नहीं थे, जो उन्हें आपे से बाहर कर दें, या जो उन्हें कर्तव्य से च्युत कर दें, या जो उन्हें अपनी शक्ति का ध्यान भुला दें। वे सब इतनी मात्रा में थे, जो आदमी के लिये, हां आदमी के लिये, नितान्त आवश्यक है। उतनी मात्रा से केवल पत्थर की मूरत बच सकती है। निर्वाणोन्मुख पवित्रतम आत्मा भी उतने गुणों के, लोग भले ही उसे अवगुण कहें, बिना इस संसार में निवास नहीं कर सकता।

यही कारण है कि श्री जमनाप्रसाद जी ने ऊँची से ऊँची तालीम पाई। पर वह उन पर सवार न हो पाई। उनकी तालीम ने 'विद्या विवादाय की शक्ति' को झूठा सिद्ध कर दिया। 'विद्या विनयं ददाति' इस उक्ति को सिद्ध कर दिया।

श्री जमनाप्रसाद जी ने ऊँचे दर्जे की कानूनी तालीम हासिल की। हिन्दुस्तान से एल०एल० बी० की डिग्री ली और लन्दन से बैरिस्ट्री की; पर कानून का पेशा जिसके लिये बदनाम है, उस बदनामी के वे शिकार न हुए। अकेले थे, अगर उनके जैसे दो-चार भी और होते तो इस पेशे की बदनामी का टीका अगर पुछ न जाता तो हल्का जरूर

पड़ जाता। अलबत्ता गांधी जी ने इस शैतानी पेशे को देवताई पेशा बनाने की कोशिश की। पर वे तो एकदम देश की वकालत में जा घुसे और देश की आजादी के लिये लड़ते-लड़ते जूझ गये। हमारे श्री जमनाप्रसाद जी भी देश के लिये तो नहीं पर देश के छोटे से भाग के लिये समय बेसमय वह सब करते रहे जो आदमी की हैसियत से उन्हें करना चाहिए था।

कानून जानना इस बात का प्रमाण नहीं है कि उसका जानकार न्याय का माहिर है। न्याय का माहिर भी अगर कोई हो तो ये नहीं कहा जा सकता कि वह न्याय प्रिय भी है, न्याय भक्त भी है। जुरिसप्रुडैन्स यानि न्याय ज्ञान बिलकुल दूसरी चीज है और न्याय में शराबोर होना दूसरी चीज है। श्री जमनाप्रसाद जी न्याय विज्ञान के कितने ज्ञाता थे ये हम नहीं जानते। बैरिस्टर और वकील के नाते उन्हें ये ज्ञान होना ही चाहिये, ये भी हम जानते है, पर ये सब न्याय में सहायक नहीं होते। हमने तो जो उन्हें पास से देखा और जो हमने सुना उससे हम कह सकते हैं कि वे न्यायाधीश के आसन पर बैठकर अपने-पराये में भेद करना भूल जाते थे। बरसों ही वे इस आसन पर आसीन रहे और अपने इस गुण या अवगुण के कारण वे बहुतों की नजर में चढ़े या उतरे। पर वे स्वयं अप्रभावित रहे। अपने कर्तव्य में तनिक भी ढीले न पड़े। जिस तरह अहिंसक की कसौटी ही यही है कि उसका अन्त हिंसा से हो, यानि कोई उसकी हिंसा कर दे। ठीक इसी तरह न्यायाधीश की कसौटी ही यही है कि उसका अन्त अन्याय से हो और सुनते हैं इनका भी अन्त इसी तरह हुआ।

ऊँची तालीम और ऊँचे न्याय ज्ञान का अगर सुधार परिणाम न हो तब यह समझना चाहिये कि तालीम पच पाई न न्याय ज्ञान आत्मसात हो पाया, क्योंकि रूढ़ियां समाज में फैला हुआ अन्याय ही तो है। समाज में फैला हुआ अज्ञान जितना बड़ा अन्याय है, उससे बड़ा और कौन हो सकता है। उस अन्याय को देवता भले ही बरदाश्त कर लें, साधु और महात्मा भी बरदाश्त कर लें, पर आदमी बरदाश्त नहीं कर सकता। हाँ आदमी ! पर आदमी ही तो नहीं मिलते। कोई हिन्दू मिलता है तो कोई मुसलमान, कोई पारसी तो कोई ईसाई, कोई सिक्ख तो कोई जैन, कोई कुछ तो कोई कुछ। पर हमारे जमनाप्रसाद पहले आदमी थे पीछे कुछ और। और आदमी भी ऐसे जिनकी विद्या और जिनका ज्ञान उन्हें दबा कर नहीं बैठ गये थे, उन्हें खिला रहे थे, विकसा रहे थे। फिर भला वे समाज की रूढ़ियों और समाज के अज्ञान को कैसे सहन कर सकते थे। उन्होंने अपना तन-मन-धन सब इन रूढ़ियों को नष्ट करने में लगा दिया। अज्ञानान्धकार भगाने के लिये जो उनसे बन पड़ा, वे जीते जी करते रहे। उन्होंने किन-किन बुराइयों के महल ढाये ये लम्बी कथा है। उन्होंने किन-किन भलाइयों के महल चिने इससे सारा समाज वाकिफ है। उन सबका बखान यहाँ फिजूल है। यहां तो हमें ये देखना है कि वे सुधारक की कसौटी पर ठीक उतरे या नहीं। वे सुधारक, सुधारक ही नहीं यानि जिसे समाज के मनचले दो एक बार सुधारे नहीं, यानि उसका कुछ बिगाड़े नहीं, यानि उसको पीटे नहीं। और इस कसौटी पर भी हमारे लेख

का नायक चौबीस टंच का सोना उतरा है, यानि एक से ज्यादा बार पिटा भी। पर जिस तरह सोना तपाने पर चमकता है इसी तरह मारपीट की आग हमारे सोने जैसे खरे नायक को क्षण भर के लिये पिघला तो सकी, पर चमक के साथ। यानि यह कि हमारा नायक दुगुने जोर से काम में लग गया।

श्री जमनाप्रसाद मुँह में चांदी का चम्मच लेकर पैदा नहीं हुये थे। रुई के फोए से ही घुटी चूसी थी। ये भी ठीक है कि उनके जन्म के समय उनके पिता के मुंह से न संस्कृत के श्लोक निकले थे, न मां ने ही कोई संस्कृत का स्तवन पाठ किया था। मामूली लोक गीत गाये गये थे और मामूली प्रान्तीय आशीर्वाद घर में गूंजे थे। पर इससे क्या होता है। श्रमशील माँ और व्यवहार कुशल बाप की औलाद अवसर पाकर किस मैदान में क्या नहीं कर दिखा सकती और हमारे नायक के साथ यही हुआ। यहाँ यह कहना अनुचित न होगा कि हम जाति-पांति के बड़े विरोधी है पर इससे हम इन्कार नहीं कर सकते कि हमने किसी-किसी जाति में विशेष गुण पाये हैं। परवार जाति भी एक ऐसी ही जाति है। इस जाति की लड़कियों के बारे में हमारे मन पर ये बात जम गई है कि जिस घराने में इस जाति की लड़कियां जायेंगी वह घराना बीमारी, गरीबी और मूर्खता से जरूर बचा रहेगा। इस जाति की लड़कियाँ बहुत सबेरे ही उठती हैं, दिन भर खूब मेहनत करती हैं और जल्दी ही सो जाती है। इन पर अंग्रेजी की ये कहावत बिलकुल चरितार्थ होती है। 'जल्दी उठो और जल्दी सोओ तो सुखी, धनी और विदुषी होओ।' हां, तो ऐसी माँ का पुत्र और ऐसे बाप का बेटा अवसर पाने पर खिल उठा। जल्दी-जल्दी स्कूल की पैंड़ी लांघी, कालेज की पैड़ी पार की, कानून की पैड़ी तक पहुँच गया, और किसी तरह भी लंदन जाकर बैरिस्ट्री का डिप्लोमा ले आया। "होन हार बिरवान के होत चीकने पात।" इसकी योग्यता का पता पालने में ही लग गया था। श्रम और भाग्य जब मिल जायें तो क्या गुल नहीं खिला सकते। चरित्रवान को क्या कुछ नसीब नहीं हो सकता। आखिर एक दिन हमारे नायक को जजी मिल गई। वहाँ ये हीरा शान पर चढ़ा और दुगुना चमका। जजी छोड़ी या जजी छूटी जिसके बारे में हम ऊपर इशारा कर चुके हैं, तो इनका सुधार का काम और चमक उठा। समाज सेवा में और भी ज्यादा समय लगने लगा मतलब यह कि समय इनके साथ अपने ढंग से खेलता रहा और ये अपने कर्तव्य के साथ अपने ढंग से खेलते रहे।

श्री जमनाप्रसाद बेशक जैन थे, पर जैनी नहीं थे, बेशक परवार थे, पर परवार होने का उन्हें अभिमान न था। उन्हें करोड़पति तो नही कहा जा सकता, पर धनाढ्य जरूर थे। पर उनके चेहरे से ये भांपना कि ये धनाढ्य हैं कठिन ही था। वे विद्वान थे पर उनसे बातें करते हुए आप पर उनकी विद्वत्ता की छाप नहीं पड़ पायेगी। सचमुच आदमी वही है, जो दुनिया के सब झमेलों में फंसे, पर रहे अछूता। और ये सब गुण हमारे नायक में मौजूद थे। तभी तो उनके चेहरे पर हरदम हँसी खेलती रहती थी। हम उनकी सहधर्मिणी से मिले हैं। वे भी हमें उन्हीं जैसी जचीं। हम यह नहीं कह सकते कि उन्होंने हमारे नायक को अपने रंग में रंगा या हमारे नायक ने उनको अपने रंग में।

किसी आदमी को उस समय तक सुखी मत कहो जब तक उसका अन्त न देखला ये अंग्रेजी की एक कहावत है। इस कहावत के अनुसार जमनाप्रसाद का हँसते-हँसते अन्त होता है। न खुद रोते-तड़फते हैं न किसी को रोने का अवसर देते हैं।

सचमुच ये जीवन है जो अनुकरणीय हो सकता है और ऐसे पुरुष के जीवन को उसके पुत्र-पुत्रियाँ जरूर अपनायेंगीं और उनकी मृत्यु के कारण जो समाज में कमी हुई हैं उस कमी का अनुभव समाज को न होने देगीं।

सुप्रसिद्ध समाज सुधारक

श्री भगतराम जैन, दिल्ली

बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी रिटायर्ड शेसन जज, सुप्रसिद्ध समाज सुधारक व समाज के कर्मठ नेता थे। वे जो भी कार्य अपने हाथ में लेते थे रात दिन उसके लिए एक कर देते थे। सामूहिक विवाह प्रथा जैन समाज में चलाने का श्रेय इन्हीं को है। आप अखिल भारतवर्षीय दि० जैन परिषद के स्तम्भ थे। आप अपने विचारों के पक्के थे, मध्यप्रदेश के नेता तो थे ही परन्तु साथ ही उनको भारतवर्ष में समस्त जैन समाज बड़ी श्रद्धा से देखता था। मेरा उनसे १२ वर्ष पूर्व से परिषद के नाते सम्बन्ध रहा है। उनमें समाज के प्रति बड़ा दर्द था और नवयुवकों की तरह कार्य करने की लग्न थी। सन् १९५४ में नौ गांव (मध्यप्रदेश) में दस्सा पूजन अधिकार केस में बैरिस्टर साहब को व मुझे भी गवाही में जाने का अवसर प्राप्त होता था। जिन भाइयों ने दस्सा भाइयों को पूजन करने से वंचित किया था और जिनके कारण कोर्टमें केस गयाथा, वे एक धनी व प्रभावशाली व्यक्ति थे और बैरिस्टर साहब के सहपाठी भी थे। उन्होंने अपने पूर्ण प्रयत्न से यह चाहा कि इस केस में बैरिस्टर साहब गवाही देने न आयें। जिस सड़क से बैरिस्टर साहब को आना था ४ मील दूर उस पर आप स्वयं अपने अन्य साथियों के साथ खड़े हो गये और बैरिस्टर साहब की कार को वहां पर रोक कर उनसे हर तरह से चाहा कि वे वापस चले जायें। परन्तु बैरिस्टर साहब पर इन बातों का कोई भी असर न हुआ और वह उन के साथ ही नौगांव आये और उन्हीं के यहां पर ठहरे और हम सब को यह सारा वृतांत सुनाया। दूसरे दिन प्रातः कोर्ट में सबसे प्रथम बैरिस्टर साहब की गवाही हुई। इनसे उनके वकील ने लगभग डेढ़ घंटे तक जिरह की कि किसी तरीके से कोई ऐसी चीज यह कह दें जिससे कि हमें कोई लाभ प्राप्त हो सके, परन्तु उसे निराशा ही मिली। यह उनकी नैतिक दृढ़ता की एक झांकी ही है। न जाने उनके जीवन में ऐसी कितनी झांकियां और अवसर आये होंगे।

उनके निधन से मध्यप्रदेश को तो क्षति पहुँची ही है परन्तु समस्त जैन समाज को भी वे सदैव स्मरण रहेंगे। उनके आने की सूचना जहाँ भी प्राप्त होती थी उस स्थान के जैनी भाई अपने निजी झगड़े आदि उनके सामने प्रस्तुत कर देते थे और जहां तक भी बनता था कोर्ट में जाने के बजाय वे उन्हें वहीं पर समाप्त करा देते थे जिसके कारण समाज के हजारों रुपये का फिजूल व्यय बच जाता था।

भगवान से हार्दिक प्रार्थना है कि उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

कर्मवीर साहसी नेता

— रामलाल जैन पंचरत्न —

स्व० बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी डिस्ट्रिक्ट जज, बार एटला, नागपुर का स्वर्गारोहण जैन समाज के लिए बड़ा दुखद हुआ। एकाएक हृदयगति रुकने से वे हमसे बिछुड़ गये। उन्होंने अपने जीवन में क्रांति पैदा की, युवकों में खून का संचार कर आगे बढ़ना सिखाया, समाज को जीवन दान दिया और रूढ़िवाद के विरोध में मान अपमान की पर्वाह नहीं की। वे आगे बढ़ना जानते थे। वे जब कभी भाषण में सत्साहस और कर्तव्य पालन में नैपोलियन का उल्लेख किया करते थे। उन्होंने समाज में नये युग का प्रचार किया, विरोध को खुली चुनौती दी, आदर्श सामूहिक विवाह का मार्ग खोला और उसके पथ प्रदर्शक बने जिसके कारण सारा समाज उनका कृतज्ञ है। इटारसी परिषद अधिवेशन का नेतृत्व हमारे श्रद्धेय बैरिस्टर सा० ने ही किया था और ११ हजार रु० का दान सेठ लक्ष्मीचन्द जी से कराकर अलभ्य जय धवला का उद्धार कराया था। आज हर जैन मन्दिरों में उसकी प्रति मौजूद है। बैरिस्टर सा० के सतत प्रयत्न से भेलसा, खंडवा, सतना, देवगढ़, जबलपुर, इटारसी आदि स्थानों में सफलतापूर्वक परिषद के अधिवेशन हुए। मध्यप्रदेश के जैनियों में उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी।

उनका व्यक्तित्व महान था। इतने बड़े डिस्ट्रिक्ट एण्ड सेशन जज होकर भी अभिमान स्पर्श नहीं कर पाया था। वे सरल, भद्र, दयार्द्र प्रकृति के होते हुए भी उन्होंने कई सौ योग्य छात्रों को वजीफा दिलाकर योग्य पदों पर काम पर लगाया था और कितनी ही विधवाओं के भरण पोषण का वे प्रबन्ध करते थे। ऐसे कर्मठ कार्यकर्ता, जमनाप्रसाद अथक परिश्रमी अपनी धुन के पक्के, सच्चे प्रचारक, पारस्परिक वैमनस्य को दूरकर समस्त विश्व को गले लगाने वाले अग्रणी पुरुष थे। एक एक गुण के लिखने के लिए २६२ कालम चाहिए। बैरिस्टर सा० ने अपना जीवन चरित्र लिखा है। मुझे उनके सम्पर्क में रहने का पर्याप्त समय मिला है। इसलिए उनके स्वभाव गुण व कार्य का जानना कठिन नहीं है। अन्तर्जातीय विवाह का आदर्श उन्होंने स्वयं रक्खा व सैकड़ों व्याह कराये। मरणभोज प्रथा को मालवा से उठा देने का श्रेय हमारे बैरिस्टर सा०को है। परिषद डेपुटेशन के समय आप भी इन्दौर गये थे। मैं भी था। सेठ सा०हुकमचन्द जी से दिल खोलकर बातें हुई थीं। बैरिस्टर सा० का प्रभाव सेठजी पर काफी पड़ा। समाज से ऐसे व्यक्ति का उठ जाना बड़े कष्ट की बात है। वे मुझे बहुत चाहते थे। पत्रों में परिषद

के पंडितजी के नाम से संबोधन करते थे। वे गुणग्राही थे। समाज में स्व० बैरिस्टर चंपतराय जी, श्री जुगमन्दिर दास जी व शीतल प्रसाद जी आदि महान व्यक्तियों के निधन की पूर्ति अब तक कर ही नहीं पाये थे कि और दुखद क्षति के समाचार सुनने पड़े। उक्त आत्माओं ने अपने जीवन को धर्म प्रचार, सेवा और जैन साहित्य निर्माण में बिताया और जीवन भर अपनी लेखनी को विराम नहीं लेने दिया। यद्यपि उक्त आत्मायें आज हमारे बीच में नहीं हैं तदपि उनकी अमूल्य देन रचनाएं, महती सेवायें हमें मार्ग दिखाती हैं। उनके जीवन से हमें व हमारी सन्तति को प्रेरणा मिलेगी। स्व० बैरिस्टर जमना प्रसाद जी तो सर्वगुण सम्पन्न थे।

जब मैं अवध प्रान्त में परिषद की ओर से काम कर रहा था तब जिनेन्द्रचंद जी ने बैरिस्टर सा० को बुलाया था। वे लखनऊ आकर अवध परिषद के कार्य को देखकर बड़े प्रभावित हुए। जगह जगह दौरा किया। ४-५ मील पैदल चल पड़ते थे। जहाँ कहीं वैमनस्य पाया निमिष मात्र में दूर कर दिया। जहां कहीं काम में यह दृष्टि में आया कि कठिनता पड़ेगी सत्याग्रह कर दिया। कानपुर में करना पड़ा था। वहाँ के अधिवेशन की सफलता का बहुत कुछ श्रेय आपको ही है। आप एक सैनिक के रूपमें यत्र तत्र दीख पड़ते थे। लखनऊ में मानपत्र दिया गया तो कहने लगे—मानपत्र लेने से मान आता है, ये तो सेनापति को दे देना चाहिए, न कि सैनिक को। अवध से विदा होते समय कह गये थे कि मैं यहां से कुछ लेकर जा रहा हूँ और उसका प्रतिफल जबलपुर अधिवेशन की सफलता होगा। पंडित जी आप तैयार रहें, आपको मैंने परख लिया है। आपकी कार्यक्षमता पर मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है। यही हुआ। जबलपुर जाकर बैरिस्टर सा० ने जैन समाज को एकत्रित कर वक्तव्य दिया कि वर्तमान जैन समाज रसातल को जा रही है, रक्षा न की गई तो पछताना पड़ेगा। इस प्रांत में परिषद अधिवेशन की नितांत आवश्यकता है। चोटी के विद्वानों के भाषण, महापुरुषों के दर्शन और सुधार के भाव जाग्रत होंगे। परिषद का नाम और फिर अधिवेशन की बात सुनकर लोग चौंक पड़े। बोले—बैरिस्टर सा० आप हमारी समाज के मान्य व्यक्ति हैं। राज्य में उच्च पद पर आरूढ़ हैं। इस विषय में हम आपकी बात मानने को तैयार नहीं हैं। आपने वहीं सत्याग्रह की घोषणा कर दी। वे लोग चिन्ता में पड़ गये। आखिर सबजज सा० को मरने नहीं देना चाहते थे। सोचा—निमन्त्रण से हम लोग चन्दा नहीं देंगे, काम नहीं करेंगे। जज सा० तो छिंदवाड़ा चले ही जायेंगे, तब ठीक है। स्वीकृति तो दे दी। अधिवेशन में सैकड़ों कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। महान कीर्ति के साथ सफलता पूर्वक साहूजी के नेतृत्व में अधिवेशन हो गया। वहाँ से आदर्श विवाह का श्रीगणेश हुआ जो आज इस प्रान्त का विशेष कार्य बन गया। एक बार बीना स्टेशन पर अनमेल एवं वृद्ध विवाह रोकने के लिये ट्रेन के खड़ी होनेपर दूल्हा को उतार दिया। गाड़ी में पिटने पर भी दूल्हा को जाने न दिया। जीवन भर क्रांति की सेवा करते करते हमसे जुदा हो गये। उनके स्मारक की आवश्यकता पर समाज ध्यान दे।

जागृति का अग्रदूत

श्री तख्तमल जैन

मेरा और स्वर्गीय जमुनाप्रसाद जी का लगभग २५ वर्ष से बहुत घनिष्ट संबंध रहा है। किसी भी घनिष्ट मित्र के संबंध में कुछ लिखना बड़ा कठिन होता है। विशेषकर स्वर्गीय जमुनाप्रसाद जी जैसे कर्मठ सामाजिक कार्यकर्त्ता के संबंध में। मुझे अनेक बार सामाजिक प्रश्नों के संबंध में निकट से उनसे चर्चा करने का अवसर मिला है। उनकी कार्यशैली का भी प्रत्यक्ष अनुभव हुआ है। उनके दिल में समाज सुधार के लिए बड़ी बेचैनी थी और उन्होंने समाज-सुधार के लिए सक्रिय कदम उठाते समय कभी इस बात की चिंता नहीं की कि समाज उन सुधारों को अपनाने की स्थिति में पहुँच चुका है अथवा नहीं। इसके कारण कभी-कभी उनको बहुत शारीरिक एवं मानसिक कष्ट उठाना पड़ा, पर उन्होंने कभी हिम्मत नहीं हारी और मान-अपमान की ओर ध्यान न देकर अपना संपूर्ण जीवन समाज सुधार में होम दिया जिससे उन्हें आर्थिक कठिनाइयों का भी सामना करना पड़ा, किन्तु वे समाज में जागृति की लहर उत्पन्न कर गए हैं। उस लहर को आगे बढ़ाना हम सबका कर्त्तव्य होना चाहिए।

विदिशा नगर निवासी तो उनको कभी भूल नहीं सकते। उन्होंने वहाँ अशासकीय प्रयत्न द्वारा हाई स्कूल स्थापित करने का श्रीगणेश किया था जिसके फलस्वरूप आज विदिशा में शिशु मंदिर से लगाकर स्नातकोत्तर महाविद्यालय और यांत्रिक महाविद्यालय की स्थापना हो चुकी है। विदिशा के अनेक सामाजिक और धार्मिक ट्रस्टों के वे ट्रस्टी रहे हैं और उन्होंने हर ट्रस्ट में पूर्ण दिलचस्पी लेकर उसको सफल बनाया है।

यहाँ की संस्थाओं को उनके मार्गदर्शन एवं सहयोग की कमी सदैव अखरती रहेगी।

आदर्श पुरुष जमनाप्रसाद

— श्री भागचन्द्र जैन, सागर —

स्वर्गीय बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी मेरे बाल मित्रों में से थे, अगर यह लिखूं तो अतिशयोक्ति न होगी, क्योंकि जब जमनाप्रसाद जी बहुत छोटे थे तब आपके पिता श्री परमानन्द जी कलरैया, बीना के पास आगासौद में सेठ गोकुलदास के यहां मुनीमी करते थे और मेरे पिता के ही मकान में रहते थे। इसलिए, यद्यपि मैं उनसे उम्र में बड़ा था तो भी हम लोग एक साथ ही खेले कूदे और एक ही स्कूल से प्राइमरी शिक्षा पास की। तत्पश्चात् हम लोगों के जीवन की धाराएँ अलग-अलग हो गई।

उच्च अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करके वे जज के पद पर आसीन हो गये और मैं सागर में पढ़ लिखकर मुनीम बना। इसके बाद बीच-बीच में मुलाकात होती रही। किन्तु वह बचपन की मित्रता फिर रिश्तेदारी में पूर्ण रूप से परिणत हो गई जबकि जमनाप्रसाद की त्रितीया पुत्री नन्दन कुमारी का संबंध मेरी पत्नी के भाई श्री भगवानदास जी बीड़ीवालों के सबसे बड़े सुपुत्र श्री डालचन्द के साथ हो गया। अब तो जब भी हम लोग मिलते, आपस में पुरानी बातों की चर्चा होती।

जमनाप्रसाद जी बड़े ही मिलनसार वृत्ति के थे। एक बार जो भी उनसे मिल लेता वह उनका बन बैठता। वे हंस-मुख भी बहुत अधिक थे। उनका हंसना आप दूर से सुन सकते थे।

उन्होंने जितने भी समाज में सुधार किये हैं उतने सब सुधार एक व्यक्ति एक साथ नहीं कर सकता। आपके हृदय के भीतर जो समाज सेवा की लगन थी, ये सब सुधार उसी के ज्वलंत प्रमाण हैं। समाज उनका सदा ऋणी रहेगा। वे धार्मिक प्रवृत्ति के भी बहुत अधिक थे। उनका जो असामयिक निधन हुआ है उसकी पूर्ति होना असंभव है। भगवान उनकी आत्मा को शांति दे।

प्राचीन मूर्त्तियों के विध्वंस का केस

— श्री गोकुल प्रसाद जैन —

[प्राचीन मूर्ति विध्वंसकेस की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी ने कितनी लगनशीलता और अथक परिश्रम से उक्त केस की पैरवी की थी और अभियुक्तों को दंड दिलाया था :]

दिल्ली में ३ और ४ अक्टूबर सन् १९६१ को साहू शांतिप्रसाद जी जैन की अध्यक्षता में जैन कन्वेंशन हुआ। मध्यप्रदेश व उत्तर प्रदेश में जैन मूर्तियों का जो विध्वंस हुआ था, उसी के फलस्वरूप यह जैन कन्वेंशन दिल्ली में बुलाया गया था। जबलपुर, देवगढ़, गोलाकोट, बूढ़ी चंदेरी, खनियाधाना, चांदपुर, जहाजपुर व दूधई आदि स्थानों में सैकड़ों भव्य मूर्त्तियों के सिर काट डाले गये थे और विदेशों में इनका निर्यात किया जा रहा था। इस घृणित कार्य को रोकने के लिये ही यह जैन कन्वेंशन हुआ था जिसके संयोजक लाला राजेन्द्रकुमारजी थे।

इन्हीं के निमंत्रण पर स्वस्थ न होने पर भी बैरिस्टर साहब दिल्ली पधारे थे। लाला राजेन्द्रकुमार जी का १० सितम्बर, १९५९ का पत्र पाकर बैरिस्टर साहब २ अक्टूबर को रवाना होकर ३ अक्टूबर के दिन दिल्ली पहुँचे। भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा और अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद अनेक मतभेदों के कारण एक नहीं हो रही थीं। बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी ने प्रयत्न करके दोनों को एक कराने का प्रयास किया। इस समय वे अनशन करने पर भी उतारू हो गये और दोनों संस्थाओं के एकीकरण का निश्चय कराया।

कन्वेंशन समाप्त होने के पश्चात् उन्होंने मूर्त्तियों के ध्वंस का केस सब सदस्यों के आग्रह से अपने हाथों में ले लिया। फिर अपने स्वास्थ्य की परवाह न करते हुए मूर्तियों के केस का निरीक्षण करने के लिए जगह-जगह गये। सबसे पहले वे दिल्ली में ही ६ अक्टूबर को भूतपूर्व केन्द्रीय खाद्य मंत्री श्री अजितप्रसाद जी जैन से मिले। साथ ही साथ श्री तख्तमल जैन तथा अन्य सज्जनों और अफसरों से मिले। ७ अक्टूबर को श्री हंसकुमार जैन के साथ श्री एस. डी. जैन (खुफिया विभाग के अधिकारी) से मिले। ८ अक्टूबर को बैरिस्टर साहब पछार होते हुए खनियाधाना पहुँचे, जहां वे इन्सपेक्टर और तहसीलदार, पछार से मिले। तत्पश्चात् शाम को गोलाकोट और गुलार के घटनास्थल पर गये। ९ अक्टूबर को सुबह

८ बजे से लेकर रात के ८ बजे तक सब जैनियों की एक सभा बुलाई और विचार विमर्श किया तथा वहाँ की पूरी तरह से जांच पड़ताल की। १० अक्टूबर को वे फिर शिवपुरी आये। वहाँ वे तहसीलदार, डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस, कलेक्टर आदि अफसरों से मिले। सब अफसर इस बात पर तैयार हुए कि खुफिया पुलिस की मदद ली जाये। शाम को सब प्रभावशाली जैनी व्यक्तियों से मिले और उन्हें इस कार्य के लिए प्रेरणा दी। ११ अक्टूबर को ललितपुर, ८ बजे रात को पहुँचे। फिर वे १४० मील मोटर द्वारा और ३ घण्टे रेल द्वारा पछार, खनियाधाना, चंदेरी व मुगावली गये। वहाँ पर एक सभा हुई, जिसमें कि चंदेरी और गोलाकोट के जैनी भी थे। वहाँ विचार-विमर्श हुआ।

बैरिस्टर साहब की राय थी कि इस केस को भारतीय दंड विधान की धारा ४१३ के अधीन दायर कर सकते है। इस धारा का आशय है चोरी की सम्पत्ति का क्रय-विक्रय करना। उनकी राय थी कि इस केस को सेशन्स सुपुर्द करना ही पड़ेगा और देवगढ़ केस के तीनों अभियुक्तों को गिरफ्तार कराना पड़ेगा। बहुत से कागजात, लेखा या हिसाब और कैशमीमो के बिलों को जप्त करना पड़ेगा। पत्र व्यवहार की फाइल भी जप्त होना चाहिये। चार पेटियां, जिनमें कि ६५ सिर हैं, जज के सामने खुलाना चाहिए, अन्यथा अभियुक्त यह कह सकेगा कि उनमें अदल बदल हो गई है। भोपाल के डायरेक्टर को शीघ्र ही खनियाधाना जाना चाहिए ताकि सिरों को धड़ों से जोड़ने का कार्य शीघ्र हो सके।

उनका मत था कि ललितपुर, चंदेरी, खवियाधाना में म्यूजियम होना चाहिए। एक ही तरह की बहुत सी मूर्तियां हैं। हर जगह एक-एक सैट हो सकता है और चौथा सैट दिल्ली में हो सकता है। दिल्ली के जैनियों को भी कोई एक जगह म्यूजियम के लिए निश्चित करके म्यूजियम अधिकारियों से सम्पर्क स्थापित करना चाहिये।

बाकी के सिर और कागजात जप्त करने के लिए फौरन कदम उठाना चाहिए। शिवपुरी के डिप्टी सुपरिन्टेन्डेंट पुलिस जमानत के हुकुम के खिलाफ रिवीजन दायर करने वाले हैं। अभियुक्त बतरा का भाग्य अभियुक्त रामगोपाल के बयान पर निर्भर है। चंदेरी, खनियाधाना और ललितपुर के अधिकारियों के बीच में परस्पर अनुचित स्पर्धा है, परन्तु सारी बातों का खर्चा खनियाधाना के आदमियों के ऊपर है जो कि बहुत गरीब है और जिन्हें बाहर से किसी भी प्रकार की मदद नहीं मिल रही है। भ्रष्टाचार के कारण यह केस बिगड़ने की बहुत सम्भावना है। दिल्ली में ३६ और बम्बई भी ८० पेकेट्स पड़े हैं।

इसके बाद बैरिस्टर साहब इन मूर्तियों के सिलसिले में सागर, भेलसा और भोपाल गये, जहां बहुत से अधिकारियों से मिले। वे भेलसा के आसपास भी गये, जहाँ मूर्तियाँ और खुदे हुए लेख यहाँ वहाँ पड़े थे।

हमारा लोकप्रिय आदर्श नेता

— सिंघई मुन्नालाल जैन —

श्री जमनाप्रसादजी से मेरा प्रथम परिचय जबलपुर में सन् '२९ में जैन बोर्डिंग में हुआ था। उस समय आप जबलपुर सब-जज होकर आये थे। सन् ३० में कुछ समय बाद जैन बोर्डिंग में कुछ रूढ़िवादियों ने भाई नन्हेंलाल के विषय को लेकर २ पार्टियाँ पंडित एवं बाबू-पार्टी के नाम से बनाकर एक वितंडावाद खड़ा कर दिया और उस विद्यार्थी को बोर्डिंग से अलग कर दिया। वह आपकी शरण में गया और अपना सारा किस्सा सुनाया। आपने उसे शरण दी और बोर्डिंग में पहुँचकर जानकारी प्राप्त की। कुछ लोगों को क्रोध आया और उन्होंने बुरा बर्ताव करने की कोशिश की। भाई मोतीलाल जी और मैंने किसी तरह उन्हें वहाँ से निकाल कर बंगले पर भेजा। कुछ समय बाद हम लोगों को भी बोर्डिंग छोड़ने का आदेश मिला। वातावरण काफी खराब हो गया था, परन्तु शहर के विद्वानों ने दौड़ धूप करके समझौता करके भाई नन्हेंलाल को और हम लोगों को पुनः बोर्डिंग में स्थान दिया। कुछ ही दिनों बाद आप इंग्लैड बैरिस्टरी के लिए गए। आप फ्रांस वगैरह भी गये और वहां के समाचार चित्र आदि भेजते रहे। बार-एट-ला होने के बाद आप भारत आये और बेमतरा में सब जज की जगह पर काम करने लगे। आल इण्डिया दिगम्बर जैन परिषद् ने आपको इटारसी अधिवेशन के लिए अध्यक्ष चुना। आपको यह मालूम हुआ कि श्री सितावराय जी लखमीचन्द जी भेलसा वाले रथ चलवा कर श्रीमन्त बनने के इच्छुक हैं। आप भेलसा पहुँचे और समाज, जैन मंदिर एवं विद्या के महत्व को समझाया और यह सलाह दी कि जो रकम आप रथ चलाने में खर्च करेंगे उसके बदले में आप विद्यादान में वह रकम लगा देंगे तो समाज में अनगिनती विद्वान् पैदा हो जावेंगे जिससे धर्म की रक्षा होगी और धन का सदुपयोग होगा। इसके उपलक्ष में आपको समाज श्रीमन्त सेठ की पदवी से विभूषित करेगी। सेठ सा. को जज सा. की बात बहुत पसंद आई और उन्होंने मुक्त हाथों से दान देकर शक्कर बाई ट्रस्ट फंड की स्थापना की।

इटारसी परिषद में जब श्री जमनाप्रसाद ने यह घोषणा की तब समाज को यह पता लगा कि झुकाने वाला चाहिये, झुकने वाले बहुत मिल जाते हैं।

बेमतरा से आप कुछ ही दिनों बाद अमरावती बदल कर पहुँच गये। वहाँ पर भी समाज में कई प्रकार के सुधार किए और उसी दरम्यान में सिंघई पन्नालाल जी के एक मात्र

सुपुत्र की जो शाही ठाट-बाट से ३०-४० हजार खर्च की स्कीम से शादी होने वाली थी उसका आपने विरोध किया परन्तु दोनों समधी न माने और बड़े पैमाने पर शादी हुई जिसमें समाज के बड़े-बड़े विद्वान् सम्मिलित हुए। आपको समाज की यह हालत देखकर बड़ा दुख हुआ। १ वर्ष के भीतर ही सिंघई पन्नालाल जी की बहू का स्वर्गवास हो गया। सिंघई पन्नालाल जी के पुत्र की शादी की चर्चा आपकी भानजी की तरफ चली और आपने सिंघई जी के सामने प्रस्ताव रखा कि आपने हजारों की शादी के आनन्द और मुसीबत का अनुभव यों कर ही लिया, अब अगर आप आदर्श शादी के प्रस्ताव को मंजूर करें तो मैं इस शादी के कार्य के लिए अपनी मंजूरी प्रदान कर सकता हूँ। उस समय मैं भी वहाँ उपस्थित था और मैंने अपने बहिनोई से भी इस आदर्श विवाह की प्रणाली चालू करने के लिये प्रार्थना की और सिंघई जी ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी। आदर्श शादी के समय अमरावती बन्सी बाग में आप अपनी भानजी को खुरई से लेकर आये। इसी समय आपने दि० जैन परिषद् बरार का अधिवेशन, कवि सम्मेलन, मुशायरा और आदर्श विवाहों के प्रोग्राम बनाये। इस अनूठे कार्यक्रम को देखने के लिए शहर के विद्वान, व्यापारी एवं जन-साधारण बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित हुए। सब लोग इस आदर्श कार्य की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा कर रहे थे।

विवाह के महत्व पर जब एक ब्राह्मण पंडित बोल रहे थे तब वे कह उठे थे कि जिस जमना के प्रसाद से अनन्तानन्त जीव पार उतर जाते हैं, उन जमना के प्रसाद से भी अनेक पार उतरेंगे। आपने महावीर जयंती को सार्वजनिक ढंग से मनाने की आयोजना रखी और इतर समाज को भगवान् महावीर के सन्देश को उन्हीं के मुंह से कहलवाने की प्रथा को चालू करवाया।

सन् ३५ में आप जज होकर हरदा आये। वहाँ की समाज में भयंकर फूट थी और वहाँ की संस्थाएँ बैठ गयीं थीं। परन्तु आपने समाज को समझाया कि बिखरी हुई शक्ति होने से पतन हो जावेगा और संगठित होकर रहोगे तो जो आप लोग चाहेंगे वह सब करके मैं बता दूंगा। समाज को सद्बुद्धि आई और लोगों ने मनमुटाव को भुलाकर बिखरी हुई रकम को एकत्रित आपके सुपुर्द कर दी। आपने स्थानीय धर्मशाला को जो ढह रही थी, अपने अंग्रेज इंजीनियर के सहयोग से कम खर्च में बढ़िया सुधार दिया और इसे काफी आमदनी का जरिया बना दिया। इसके अलावा कई मकानों की, जैन पाठशाला की एवं जैन मंदिर के कार्य संचालन की पूर्ण व्यवस्था करा दी जिसके लिए हरदा जैन समाज आपकी बहुत आभारी रहेगी।

इस समय मुझे भी आपके साथ करीब सवा वर्ष रहने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ। इस समय जो घटना विशेष हुई वह इस प्रकार की थी कि एक दिन मैं बुखार से घबरा रहा था और कुछ बेहोशी में था तो क्या देखता हूँ कि श्री जमनाप्रसाद जी मेरे शरीर में चम्पी कर रहे हैं। जब मैंने कहा कि आप कष्ट न करें तो आप तपाक से कह उठे कि कोई कष्ट न होगा।

धर्मशाला की जगह का झगड़ा एक दिन आ पड़ा तो पड़ौसी भाई जज साहब के पास आये और कहने लगे कि साहब मुझे जगह की रकम चाहिये। आपने कुरता फैला दिया कि मैं समाज की ओर से आपसे ही इसकी भीख मांग रहा हूँ। वे चुप रहे और कहने लगे कि और चाहिये हो तो ले सकते हैं। अब मेरे मुंह में ताकत नहीं कि आपसे रुपयों की मांग करूँ।

श्री जज सा० ने अपने इस छोटे से जीवन में जो आदर्श कार्य किये उन पर आज कल के नवयुवकों, अधिकारियों एवं सुधारकों को चलना चाहिये। आज समाज के इस क्रांतिकारी पुरुष को शत्-शत् प्रणाम करता हुआ आह्वान करता हूँ उनकी दिव्य आत्मा पुनः हम लोगों के बीच आकर हमें जागृत करती रहे।

बैरिस्टर जमनाप्रसाद की सुधार-योजना

— प्रो० रतन कुमार नायक —

बीसवीं सदी का पूर्वार्द्ध भारतवर्ष के लिए कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। सामाजिक दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ में हिन्दुत्व के नवोत्थान की गंगा का जो पुण्य-प्रवाह राजा राममोहन राय ने प्रवाहित किया था वह महात्मा गांधी के समय तक आकर हिन्दुत्व के संगठन का गंगा सागर बन जाता है और स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद उसमें पुनर्निर्माण की व्यस्तता का नया मोड़ पैदा हो जाता है।

हिन्दुत्व के इस सुधारवादी आन्दोलन में जैन-जागरण का इतिहास भी समाया हुआ है। जैन समाज के सुधारवादी आन्दोलन में भी वे सभी प्रवृत्तियां दृष्टिगोचर होती हैं जो समूचे हिन्दू समाज के सुधार-कार्यों में पाई जाती हैं। हां, यह बात अवश्य है कि समूचे हिन्दू समाज की तुलना में जैन समाज का सुधार कार्यक्रम अपेक्षाकृत देरी से प्रारम्भ हुआ। इस विलम्ब के मुख्य कारणों में पाश्चात्य शिक्षा संस्कृति का जैन समाज पर अपेक्षाकृत देरी से प्रभाव तथा जैन समाज की परम्परागत व्यवसाय-निष्ठा और राज्यनिष्ठा प्रमुख माने जा सकते हैं। फिर भी, बीसवीं सदी में जैसे-जैसे समय बीतता गया यह अन्तर्विरोध भी धीरे-धीरे समाप्त होता गया।

जैन-जागरण की इस शृंखला में स्वर्गीय बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी जैन का एक विशेष योगदान है। वे एक बड़े ही सामर्थ्यवान् सामाजिक और सांस्कृतिक व्यक्ति थे। उनमें वह गर्वीलापन और आत्मतेज था जो मनुष्यों को अन्याय के विरुद्ध बगावत करने के लिए ललकारता है और नई समाज-रचना के लिए अत्याचारों तथा बुराइयों पर प्रचण्ड वेग से आक्रमण करता है। पौराणिक जैनत्व के तमोयुग में जब जैन समाज भटकते-भटकते श्रान्त होकर लाचार और निरुपाय हो गया था तथा सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के धरातल पर खड़ा समग्र हिन्दुत्व जब जन जागृति का समर-नाद बन कर क्रांति-वेग से ललकार रहा था तब जो व्यक्ति नये क्रांतिकारी तत्वज्ञान की मसाल लेकर जैनत्व का मार्ग-दर्शन करने आ पहुँचे उनमें स्वर्गीय बैरिस्टर साहिब का एक मुख्य स्थान है।

जमना प्रसाद जी प्रमुखतः सरकारी कर्मचारी और समाज सुधारक थे। वे इस समय हमारे इतने नजदीक हैं कि उनके समाज-सुधार संबंधी कार्यक्रम का सही-सही मूल्यांकन

करना शायद कठिन है। फिर भी ऐतिहासिक क्रम को ध्यान में रखते हुए उनके योगदान का निश्चय अवश्य किया जा सकता है।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं सदी के प्रथम चरण में भारतवर्ष में जो विचार-क्रांति हो रही थी और सांस्कृतिक स्तर पर हिन्दुत्व जो साधना कर रहा था उसी के नानाविध प्रयोग जैन समाज की लेबोरेटरी में जमनाप्रसाद जी ने किये। ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद जी, महात्मा भगवानदीन जी तथा अन्य अनेक सुधारक व्यक्तियों ने अपने-अपने ढंग से जैनत्व की साफ-सफाई करके इन प्रयोगों के लिए उपयुक्त जमीन तैयार कर दी थी। तर्क और पाण्डित्य के जरिये उन्होंने जैनत्व को वरेण्य तो सिद्ध कर दिया था, किन्तु उसकी प्रत्यक्ष अनुभूति होनी अभी बाकी थी। जैनत्व और जैन समाज की पुनः स्थापना करके जैनियों की श्रद्धा और भक्ति को जगाये रखना तथा उनमें आत्मगौरव की भावना को प्रेरित करके उन्हें अपनी संस्कृति, इतिहास और आध्यात्मिक परम्पराओं के योग्य उत्तराधिकारी बनाना, ये दो समस्याएँ बीसवीं सदी के प्रथम चरण में जैन-समाज की प्रमुख समस्याएँ थीं। इन समस्याओं का समाधानकारक हल ढूंढ निकालने के लिए प्रयत्न करने वाले व्यक्तियों में जमनाप्रसाद जी का नाम अग्रपंक्ति में आता है।

जमना प्रसाद जी के समाज-सुधार सम्बन्धी कार्यक्रम की पांच प्रमुख भूमिकायें हैं।

१. जातीय संगठन;
२. कुरीतियों, अन्धविश्वासों और स्वेच्छाचारी जातिमद के विरुद्ध समाज को सचेत करना।
३. अनमेल विवाह का विरोध;
४. स्त्री-शिक्षा का प्रचार; और
५. विधवा विवाह का समर्थन।

इन पांचों ही भूमिकाओं का सूत्रपात एक साथ नहीं हुआ। कालक्रम से इनमें विस्तार होता गया और विधवा विवाह का समर्थन तो खुले तौर पर उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम दिनों में ही किया था।

जातीय संगठन के सम्बन्ध में उनकी मान्यता यह थी कि जो जमाना अब आ रहा है, उसे देखते हुए जातीय संगठन का आधार केवल लोकशक्ति-समूह ही हो सकता है। लोक शक्ति-समूह के रूप में जैनत्व की व्याख्या करने के लिए यह आवश्यक है कि जैन समाज के आपसी मतभेद दूर हों, उपजातियों का विलीनीकरण होकर एक अखंड जैन समाज का विकास हो और जैन धर्म के दायरे में सभी सम्प्रदायों की मान्यताओं को समान दर्जा मिले। जाति-गत-साम्य स्थापना उनके जातीय संगठन का मूल आधार था।

कुरीतियों, अन्धविश्वासों और स्वेच्छाचारी जातिमद के विरुद्ध समाज को सचेत करने के सम्बन्ध में उनकी नीति प्रचण्ड आक्रमणकारी की नीति थी। उनका कहना था कि प्रचण्ड वज्राघात करके ही पौराणिकता, आडम्बरप्रियता, रूढ़िवादिता और गतानुगतिका को परास्त किया जा सकता है। योरोपीय तत्वज्ञान से प्रभावित मुक्त-चिंतक भारतीय नवयुवकों में जब

स्वधर्म विद्रोह की भावनाएं बल पकड़ रही हों तो परम्परावादी प्रवृत्तियों के पोषण से सर्वनाश की आशंका है। स्वधर्म निष्ठा बनाए रखने के लिए धर्म-संशोधन की आवश्यकता है और यह कार्य जितनी तेज रफ्तार से पूरा किया जा सके सामाजिक ह्रास को उतने ही वेग से रोका जा सकता है।

अनमेल विवाह का विरोध और स्त्री-शिक्षा का प्रचार इन दो कार्यक्रमों में उनका मुख्य उद्देश्य स्त्री-पुरुष संबंधों में वैयक्तिक समानता, सामाजिक व आर्थिक न्याय और सुखी पारिवारिक जीवन की स्थापना करना था। इन दोनों ही उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उन्होंने समय-समय पर अपनी जान को भी जोखिम में डाला और कितने ही बेमेल विवाहों को रोका।

विधवा विवाह का खुलेआम समर्थन उन्होंने भारतवर्ष के स्वतन्त्र हो जाने पर और विशेषरूप से नये हिन्दू कानून के पास हो जाने पर ही किया था। यह उनके समाज-सुधार सम्बन्धी कार्यक्रम की अन्तिम कड़ी थी। इससे यह भी सिद्ध होता है कि एक ओर वे जहाँ स्त्री जाति की दुरवस्था का हर तरह से अन्त करने के लिये उत्सुक थे, वहां दूसरी ओर वे समाज-सुधार कार्यक्रम को कानूनी और कानून को समाज-अनुगामी बनाने के लिये भी लालयित थे।

इसके अतिरिक्त, जिन सांस्कृतिक कार्यों में उनकी विशेष अभिरुचि थी, उनमें दो बातें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं : एक तो जैन संस्कृति के विकीर्णीकरण की भावना और दूसरे गढ़नकारी शिक्षा के अर्जन पर जोर।

उनका कहना था कि धर्म-परिवर्तन करके धर्मानुयायियों की संख्या बढ़ाने के दिन अब लद चुके। उसी प्रकार, जैनों को भी समझ लेना चाहिये कि जैनधर्म पर उनके एकाधिकार के दिन अब समाप्त हो चुके। साथ ही संसार को आज जैन सिद्धान्तों की जितनी आवश्यकता है उतनी पहले कभी नहीं रही। यह ठीक है कि जैन समाज जैन-संस्कृति का थातीदार है किन्तु अब समय आ गया है जब उसे अपनी संस्कृति समूचे विश्व में विकीर्ण कर देना चाहिये। जैन समाज ने अभी तक जैन-संस्कृति के भंडार पर ताला लगाये रख कर उसे जनसाधारण के पास तक जाने से रोक रखा है। फलस्वरूप विश्व धर्म और विश्वव्यापी संगठित मानव समाज के निर्माण का कार्य पूरा नहीं हो सका है। अनुदार बन कर जीते रह सकने का जमाना अब नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि जैन समाज के पास अनेकान्तवादी संस्कृति का जो कोष है, उसे वह बोधगम्य प्रचार के जरिये सर्वसाधारण में बिखेर दे।

गढ़नकारी शिक्षा के अर्जन के संबंध में श्री जमनाप्रसाद जी का मत था कि आजकल नवयुवकों को मिलने वाली शिक्षा में चरित्रोत्कर्ष करने की क्षमता नहीं है। जैन समाज के संदर्भ में उनका कथन था कि संस्कृत पाठशालाओं में दी जाने वाली शिक्षा, विद्यार्थियों को अतीत के प्रति अनावश्यक श्रद्धालु, धर्मभीरु और समाजभीरु बना देती है जबकि कालिजों में दी जाने वाली शिक्षा उन्हें धर्म-पराङ्मुख, समाज-निरपेक्ष और स्वार्थी बनाने में सहायता देती है। आवश्यकता इस बात की है कि धार्मिक और अर्थकरी दोनों ही तरह की शिक्षा विद्यार्थियों को दी जाय जिससे वे सुयोग्य नागरिक बन कर समाज-सेवा और देश-सेवा करते हुए सफल जिन्दगी व्यतीत कर सकें। इस कार्य में वे सुयोग्य विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति देने जैसी

सुविधाओं के सम्बन्ध में समाज के उत्तरदायित्व को मानते थे; साथ ही उनका यह भी आग्रह था कि विद्यार्थियों को समाज के प्रति अपना कर्तव्य पालन करने के लिए न केवल आगे चलकर ये छात्रवृत्तियाँ वापस करना चाहिये वरन् समाज-सेवा का व्रत भी लेना चाहिये।

उपर्युक्त कार्यक्रम को पूरा करने के लिये वे सुविधानुसार पाँच साधनों का इस्तेमाल करते थे; समय-समय पर देश के विभिन्न भागों का दौरा करना और लोगों की परिस्थितियों का अध्ययन करना, सभा-सम्मेलनों में भाग लेना, आदर्श-विवाहों का आयोजन करना, पत्र-व्यवहार करके अनुकूल वातावरण तैयार करना और गण्यमान्य व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करके समाज-विकास कार्यों को गतिशीलता प्रदान करना। जैसा कि सभी जानते हैं जमनाप्रसाद जी जीवकोपार्जन की दृष्टि से एक सुप्रतिष्ठित सरकारी कर्मचारी थे और लगन की दृष्टि से उत्कृट समाज-सुधारक। उन दिनों जबकि विदेशी हुकूमत देश में थी, समूचा शासन-तन्त्र धार्मिक और सामाजिक मामलों में पूरी तरह उदासीन ही नहीं वरन् सामाजिक विभाजन की नीति पर आधारित था और सरकारी कर्मचारियों पर नाना प्रकार के प्रतिबन्ध थे, बैरिस्टर साहब का समाज-सेवा का व्रत अंगीकार करना सचमुच ही एक आश्चर्यजनक घटना है। यह उनके साहस और उग्र सेवावृत्ति का ही परिचायक है। इसके लिये उन्हें कई बार हुकूमत से संघर्ष भी मोल लेने पड़े। फिर भी, दौरों के लिये वे समय कम ही निकाल पाते थे, समाज सुधार के कामों में वे अन्य साधनों का उपयोग ही अधिक करते थे। उनकी पद-प्रतिष्ठा भी उनके समाज-सुधार में विशेष रूप से सहायक सिद्ध होती थी।

जहाँ तक उनकी कार्य प्रणाली का सम्बन्ध है वे त्याग भावना, संन्यास वृत्ति, सेवा-भाव और धर्मनिष्ठा पर अधिक जोर देते थे। अपने विचारों को सिद्ध करने के लिये तर्क का आश्रय तो लेते थे पर पाण्डित्य पर उनका अधिक विश्वास नहीं था। ग्रंथ-प्रामाण्य की अपेक्षा अनुभव प्रामाण्य और बुद्धि-प्रामाण्य की श्रेष्ठता पर जोर देते थे। अपने उन्मुक्त हास्य और सरल स्वभाव का भी उपयोग वे दूसरों के गले अपनी बात उतारने के लिये करते थे। विरोधियों के साथ अधिक बहस-मुबाहिसे में न पड़ कर सीधे-सीधे अपने विचार को कार्य रूप में परिणत करना उनकी कार्य-पद्धति की एक प्रमुख विशेषता थी। उनका कहना था कि बचाव किस तरह किया जाय इस पर वाद-विवाद में समय बरबाद करते रहने की अपेक्षा एक डूबते हुए आदमी को कूद कर बचाने की प्रवृत्ति ही अधिक श्रेयस्कर है। इसी कारण उन्हें सामयिक सुधारकों के तरीके, विचार करने के ढंग और नियतकालिक आडम्बर-पूर्ण रस्में पसंद नहीं थे। व्यवसायी सुधारकों के सम्बन्ध में उनका एक बड़ा आरोप यह था कि उनमें सचाई और साहस दोनों का अभाव है। ठोस कार्य करने की जगह वे बातें ही अधिक बनाते हैं।

जहाँ तक उनकी विचारधारा के विकास का सवाल है, यह कई तत्वों के सम्मिश्रण का फल था। एक तो उनके जीवन का पूर्वार्द्ध जिस काल में व्यतीत हुआ वह राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से अत्यंत कोलाहल का काल था। दूसरे, निर्धनता की स्थिति में उनका विद्यार्थी जीवन व्यतीत हुआ। तीसरे, संस्कृत साहित्य में एम. ए. तथा एल-एल.

बी. तक शिक्षा भारतवर्ष में और बैरिस्टरी की शिक्षा इंग्लैण्ड में प्राप्त की। चौथे, विलायत यात्रा के फलस्वरूप पाश्चात्य जीवनदर्शन का प्रत्यक्ष लाभ मिला। पांचवे, न्याय-पालन पद्धति के पेशे को अपनाया। इन सब बातों का मिला-जुला परिणाम यह हुआ कि पश्चिमी विज्ञानवाद, पौराणिक कुसंस्कारों की कटु आलोचना, सामाजिक प्रथाओं को बिलकुल बदल डालने की प्रक्रिया, समाज को कर्म-प्रवण बनाने के लिये प्रवृत्तिपरक अनेकान्तवाद का निरूपण, धार्मिक जकड़बन्दी, गद्दीनशीन संन्यासियों और व्यावसायिक पाखंडवाद पर प्रचण्ड हमला और समाजपरक असन्तोष, ये सभी बातें उनकी विचारधारा में एक साथ पाई जाती थीं। एक परिणाम यह भी हुआ कि उनकी चिन्ताधारा एकांगी नहीं थी। कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व वे कई दृष्टियों से विचार करते थे। उनका कहना भी था कि केवल एक घोड़े की सवारी करके ही मंजिल तक नहीं पहुँचा जा सकता, सही-सलामत मंजिल तक पहुँचने के लिये डबल घोड़ों की सवारी आवश्यक है। उनके विचारों में एक क्रांतिमूलक असन्तोष का भाव सदैव विद्यमान रहता था जो उन्हें और अन्य लोगों को असन्तुष्ट बना डालता था। वे इस असन्तोष का उत्तर यह कह कर दिया करते थे कि "जीवन क्षणिक है और काम बहुत अधिक करना है और जब मैं यह देखता हूँ कि समयानुसार तेजी से काम नहीं हो रहा है तो मैं झल्ला उठता हूँ।" लोग यह कहते थे कि "जज साहब का सोचने और कार्य करने का तरीका इतना तेज और अजीबोगरीब है कि हमारी समझ में ही नहीं आता।" यदि यह कहा जाय कि जमनाप्रसाद जी जैनत्व के जागरणशील असन्तोष के पिता थे तो कोई अत्युक्ति न होगी।

इस मिली-जुली विचारधारा के फलस्वरूप वे संन्यास-कर्म की अपेक्षा गृहस्थ-धर्म की श्रेष्ठता को अंगीकार करते थे; व्यावहारिक मोक्षशास्त्र में उनकी अधिक आस्था थी और पश्चिमी विज्ञानवाद का पाथेय लेकर ही उन्होंने जैनत्व-संशोधन के पथ को भी प्रशस्त किया। पर इस विचारधारा का एक दुष्परिणाम यह भी हुआ कि कभी-कभी समाज के प्रति उनका रुख निन्दावादी और गालियों की बौछार का हो जाता था। व्यक्ति में आत्मविश्वास और दृढ़ता उत्पन्न करने के बजाय बलपूर्वक संस्कार-सुधार करने की चेष्टा उनकी कार्यप्रणाली में परिलक्षित होती थी। कभी-कभी तो उनकी प्रचण्ड सुधार-वृत्ति को देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो मनुष्य समाज को अहिंसा और अनेकांत का पदार्थ पाठ पढ़ाने वाले स्वयं भगवान महावीर ने ही सुधारवाद का खड्ग हाथ में लेकर समाज पर धावा बोल दिया है।

उनकी कार्य प्रणाली की दूसरी त्रुटि इस बात में है कि उन्होंने आजीवन केवल जैनत्व के संशोधन का ही समर्थन किया, जबकि संशोधित जैनत्व समग्र जैन-जीवन को नहीं छूता। उनकी कार्यप्रणाली में सर्वसाधारण के उन विश्वासों को कोई गुंजायश नहीं है जो समग्र सनातन की सहस्रधारा परम्परा के फल होते हैं। साधारणीकरण की इस प्रवृत्ति के अभाव में सर्वांगीण कर्म का वास्तविक पक्ष तो अछूता ही रहा जबकि विरोधी मत का ही अधिकतर प्रतिपादन किया गया। असल में जज साहब के सुधारवाद का जन्म जैन समाज की उस घबराई हुई मनोवृत्ति में से हुआ था जो हिन्दुत्व की, पर राज्य प्रेरित सुधारवादी विचारधारा से प्रभावित थी और बाहरी चोटों से रक्षा करना जिसका प्रमुख उद्देश्य था। जैनधर्म के अंग्रेजी अनुवाद का सा भाव उनके सुधारवाद में पाया जाता था। इस कथन का यह अर्थ नहीं है कि

जनसाधारण के साथ पृथक्करण का भाव और आंशिक जैनत्व का आख्यान उनके व्यक्तित्व का अंग था। वरन् यह समझना चाहिए कि समाज के नवजागरण की शृङ्खला में यह एक ऐतिहासिक तथ्य था जिसके लिये किसी व्यक्ति को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता।

एक तीसरी त्रुटि जो जमनाप्रसाद जी के सुधारवादी कार्यक्रम में परिलक्षित होती है वह है विचारों को परिपूर्ण सामाजिक संगठन तन्त्र प्रदान करने का अभाव। फलस्वरूप समाज की गतानुगतिक रूढ़ियों, अंधविश्वासों और पौराणिक सामयिक नियमों को खंडित करने में वे यद्यपि सफल हो सके, परन्तु उन नियमों और प्रथाओं का पूरी तरह निर्माण करने में असमर्थ रहे जो सैकड़ों वर्षों तक समाज को प्राणदान देती रहती हैं। वे एक अग्रदृष्टा व्यक्ति थे, उनके विचार उग्र, गतिशील और सजीव थे तथा उन्होंने समाज में जैन-संस्कृति के प्रति अभिमान तो जागृत किया ही था, जैनत्व का वीरतापूर्ण आख्यान भी किया था। पर उपयुक्त संगठन तन्त्र के अभाव में उन्हें वह सफलता नहीं मिली जिसके वे हकदार थे। यद्यपि कुछ कार्यकर्ता तैयार करने में वे सफल अवश्य हो सके पर संगठन तन्त्र विरोधी ताकतों के हाथों में होने के कारण प्रारम्भ में विरोधियों ने उनके कार्य-कलापों का विरोध ही किया और अनुगामी लोकमत तैयार नहीं हो सका। आश्चर्य यह है कि आगे चलकर इन्हीं लोगों ने जज साहब के सुधारवादी कार्यक्रम को अपनाकर अपने नाम पर खपाकर वाह-वाही लूटना शुरू कर दिया। इसे जैन इतिहास की एक विडम्बना ही कहना चाहिये कि जहां एक ओर जमनाप्रसाद जी ने जैन सिद्धान्तों और उपदेशों को क्रांतिकारी ढंग से सामाजिक जीवन में पूरी तरह चरितार्थ करने का प्रयत्न किया वहां दूसरी ओर कई प्रतिगामी समाज-सुधारकों ने उनके माथे पर अपयश का टीका लगाकर ही अपने सुयश का राजतिलक किया है। बैरिस्टर साहब इस तथ्य को न समझते हों ऐसी बात नहीं है। सच तो यह है कि सेवाकाल में कार्यभार के कारण उन्हें संगठन-तन्त्र को संगठित करने की फुरसत ही नहीं मिली और सेवा निवृत्त होने के थोड़े ही दिनों बाद वे भगवान के प्यारे हो गये। संगठन-तन्त्र की उनकी अपनी एक योजना थी जो उनके साथ ही चली गई। यदि कार्यान्वित हो सकती तो शायद जैन-जागरण का इतिहास ही दूसरा बनता।

इस आलोचना का यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि जमनाप्रसाद जी का सुधारवादी आन्दोलन निष्फल रहा। असल में उन्होंने जैन-समाज और संस्कृति पर सदियों से जमी हुई पौराणिक संस्कारों की गन्दी पर्तों को तोड़ने के लिए वज्र-प्रहार किये और समाज के पुनर्निर्माण के लिये उपयुक्त जमीन तैयार की। जो जैन समाज पहले सुधारों के बोझ को खिन्न भाव से ढो रहा था, श्री जमनाप्रसाद जी की प्रेरणा पाकर वही समाज अब सुधारों के रथ पर आरूढ़ होकर जय घोष करता हुआ राष्ट्रीय सामाजिकता का वरण करने के लिये तेजी से चल पड़ा है। जमनाप्रसाद जी वह मील का पत्थर हैं जहां से जैन समाज की प्राचीनता समाप्त होती है और नवीनता के प्रशस्त राजपथ का द्वार उसके लिये खुल जाता है। बीसवीं सदी के जैन-जागरण के इतिहास में उनका नाम निश्चय ही स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा।

युग प्रवर्तक नेता

— चौधरी कुँजीलाल जैन —

मैं भी बैरिस्टर साहब का बचपन से ही इष्टमित्र था। उनके पिता श्री परमानन्द जी कलरैया भी जैन समाज के एक प्रमुख व्यक्ति थे। उनके इकलौते पुत्र बैरिस्टर साहब थे और ५ पुत्रियां थीं। बैरिस्टर सा० बचपन से ही स्वभाव के चंचल एवं समाज सेवा के प्रेमी थे। आपकी २ बहिनें मुंगावली व्याही थीं। अतः साल में २-४ वक्त मुंगावली आने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा। जब भी आप मिलते यही चर्चा होती कि समाज की कुरीतियां किस प्रकार मिटें और हमारे जैन युवक किस प्रकार आगे बढ़ें। जब आप इन्दौर में होल्कर कालेज में इन्टर में अध्ययन करते थे, उसी समय आपका विवाह भी मुंगावली निवासी जैन समाज के प्रमुख घराने में श्री मोतीलाल दौलतराम की बहन श्यामादेवी के साथ सम्पन्न हुआ। इस कारण मुंगावली से उनके सम्बन्ध और बढ़ गए। जब आप बी० ए० का परीक्षा शुल्क दे चुके थे तभी देश के विद्यार्थियों ने राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लिया। सर्वप्रथम विद्यार्थी आप ही थे जिसने कालेज छोड़ कर आंदोलन में भाग लिया। तत्पश्चात् आप परीक्षा में सम्मिलित हुए और प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। आपको १००) मासिक स्कालरशिप स्वीकार हुआ। इसके बाद आपने इलाहाबाद जैन होस्टल में रहकर एम० ए० एल-एल०बी० की परीक्षायें पास की और तुरन्त ही वकालत करना शुरू कर दिया। थोड़े समय में ही आप इन्कमटैक्स विभाग में अधिकारी हुए। उसी समय सबजजों की नियुक्ति मध्यप्रदेश में हो रही थी, उसमें आपकी नियुक्ति हो गई। इस पद पर रहकर भी जिस जिस स्थान पर आपके स्थानांतर हुए वहां शासकीय कार्य के समय के अतिरिक्त आपके पास ऐसे मित्रों का आना जाना सदैव बना रहा जिनमें देश सेवा एवं समाज सेवा की लगन थी। वे विचार विमर्श करके उनको उत्साह देकर मार्ग बतलाते। उन्होंने जो समाज की सेवायें की एवं संघर्ष किया उसका मैं यहां संक्षेप में उल्लेख कर रहा हूँ।

समाज में वृद्ध विवाहों के अवसर पर आपने पिकेटिंग किया, बरातें रोकीं, झगड़े किये, लाठी के प्रहार सहे, चोटें खाईं, मुकदमें लड़े और अपने साथियों को लेकर हजारों रुपए खर्च कर और अपना अमूल्य समय देकर सफलता प्राप्त की। उन्होंने अपने पद का ध्यान नहीं रखा कि एक जज को ऐसा नहीं करना चाहिए।

जैन समाज में एक बुरी प्रथा मृत्यु भोज की थी जिसमें गरीबों को इसके लिये मकान एवं जेवर बेच देने पड़ते थे। यह परम्परा धर्म विरुद्ध थी आपने इस प्रथाके बंद करने में समाज के सामने पिकेटिंग किये और दौरे करके इष्ट-मित्रों के सहयोग से इसको बंद कराया।

जैन समाज में कुछ समय से इतनी संकीर्णता आ गई थी कि लोगों को अन्तर्जातीय सम्बन्ध करने में हिचहिचाहट होती थी। आपने अपने सत्प्रयत्नों से इस पुरानी प्रथा को जो कुछ सदियों से बंद हो गई थी, चालू किया। सर्वप्रथम आपने अपने पुत्र एवं पुत्रियों के अन्त-र्जातीय सम्बन्ध किये और अपने मित्रों एवं मुझे इसके लिए उत्साहित किया और मेरे बच्चों के सम्बन्ध कराये। इसमें आपको बड़ा त्याग और आपत्तियों का सामना करना पड़ा।

आपने जैन समाज के साथ जो सबसे बड़ा उपकार किया वह कभी भुलाया नहीं जा सकता। इस युग में लड़के लड़कियों के सम्बन्ध में हजारों रुपये खर्च होते हैं। अर्थ व्यवस्था न होने से गरीब वर-वधुओं के पिताओं को बड़ी परेशानी का सामना करना पड़ता है। समाज की यह हालत देखकर आपने सामूहिक विवाह का मार्ग निकाला और उसे चलाने की पूरी कोशिश की। समाज के जूते, लाठियां, गालियां सहन की और अन्त में अपने मिशन में सफ-लता प्राप्त की।

जैनसमाज में गजरथ प्रथा बहुत पुरानी थी। इसमें धनी-मानी लोग लाखों रुपये खर्च करते थे। इन मेलों में आनेवाले जैन बन्धुओं की कई-कई पंगतें की जाती थीं। आपने इसकी काफी कोशिश की कि पंचकल्याणक प्रतिष्ठा आदि में इतनी अधिक फिजूल खरची न हो। आप अव्यवस्था के विरोधी थे। आपकी इच्छा थी कि हमारे प्राचीन जैन क्षेत्रों में मूर्तियों का संग्रह किया जाकर संग्रहालय बनाये जावें और जैन धर्म का प्रचार विश्व जैन मिशन और जैन परिषद द्वारा किया जाए तो बहुत अच्छा होगा। इसमें आपने अनशन भी श्री थूबोन क्षेत्र गजरथोत्सव में किया था।

आपकी सेवाओं एवं लगन देखकर आप अ० भा० जैन परिषद में इटारसी अधिवेशन में सभापति चुने गए। तब से आपने बड़ी जिम्मेदारी लेकर सेवा कार्य करना प्रारम्भ किया। हाल ही में बुंदेलखण्ड प्रांत में कुछ जैन मूर्तियों के सिर तोड़कर लोग ले गए थे। इस विषय में आपने बड़ी दौड़ धूप की, जबकि आपका स्वास्थ्य इतना गिरा हुआ था कि आप बहुत कमजोर हो गए थे। हृदय रोग के कारण चल फिर नहीं सकते थे। ऐसी अवस्था में आप देहली गये, मीटिंग की, मित्रों से मिले और ग्वालियर से मोटर द्वारा शिवपुरी, पिछोर और चंदेरी होकर मुंगावली आए क्योंकि मुकदमा मुंगावली न्यायालय में चल रहा था। वहां आप मोटर से उतर कर हम लोगों से मिलने आए। बाजार में चक्कर आ गया। दौरा शुरू हुआ और बाजार में ही लोगों ने पकड़ लिया। सूचना मिलने पर मैं सब लोगों को लेकर पहुँचा। उनकी हालत देखकर चिन्ता हुई, लेकिन थोड़े समय बाद उन्होंने यही उत्तर दिया आप मेरी चिन्ता नहीं करें। श्री हजारीलाल एवं श्री बाबूलाल जी से आपने कहा कि अभियुक्त को दंड होना चाहिए। मैं ग्वालियर, शिवपुरी आदि सब जगह अधिकारियों एवं समाज के प्रमुख

व्यक्तियों से चर्चा करता आ रहा हूँ। आप बहुत रोकने पर नहीं रुके। उसी समय आप वहां से रवाना हो गये और कहा मुझे भोपाल जाकर कुछ अधिकारियों एवं मन्त्रीगण से चर्चा करना है। उनसे यह मेरा और मुंगावली जैन समाज का अन्तिम मिलन था।

थोड़े समय बाद दि० ४ जनवरी ६० को नरेन्द्र बाबू का तार मिला कि बाबू जी का स्वर्गवास हो गया। इस पर हमारे यहाँ के जैन समाज और मुझे व मेरे मित्रों को बहुत दुख हुआ। अभी हाल में थूबोन क्षेत्र पर गजरथ पंच कल्याणक में जहां का मैं सभापति था, १५-२० हजार एकत्रित जैन जनता ने उनके निधन पर शोक का प्रस्ताव पास किया। मैं व मेरे प्रांत की जैन समाज स्वर्गीय बैरिस्टर साहब की सेवाओं की आभारी है। ऐसे समाज सेवक वीर सिपाही के उठ जाने से समाज में इस क्षति की पूर्ति होना कठिन है।

नये पथ के द्रष्टा और स्रष्टा

— पं० सुन्दरलाल जैन, इटारसी —

बैरिस्टर सा० से मिलने का सौभाग्य मुझे सबसे पहले सन् १८२१ में प्राप्त हुआ था। मैं कानपुर से आयुर्वेद का अध्ययन पूर्ण करके श्रीमन्त सेठ साहब के जैन धर्मार्थ औषधालय, खुरई में वैद्य के पद पर कार्य करने के लिये गया था। उसी समय आपसे प्रथम मुलाकात हुई थी। आपके अन्दर मिलनसारता का विशिष्ट गुण होने के कारण मेरा झुकाव आपकी तरफ बढ़ता ही गया। इसके बाद ललितपुर में त्रय गजरथ चले थे। उस समय परवार सभा का अधिवेशन हुआ था। वहीं पर आपसे द्वितीय मुलाकात हुई। तब से और भी विशिष्ट प्रेम हो गया था। उनसे सामाजिक सुधार सम्बन्धी पत्र व्यवहार मेरा चालू हुआ। उसके बाद श्री चाँदखेड़ी क्षेत्र पर परवार सभा का अधिवेशन हुआ। उसके सभापति श्रीमान् बा० कन्छेदीलाल जी वकील जबलपुर वाले थे। उस अधिवेशन में बैरिस्टर साहब भी पधारे थे। उस अधिवेशन में आपके विचारों का पूर्ण रूप से परिचय प्राप्त हुआ था। उसी अधिवेशन में बम्बई से प० नाथूराम जी प्रेमी, और पं० दरबारीलाल जी न्यायतीर्थ एवं स्वामी "सत्य भक्त" भी आये हुये थे। उन्होंने इसी अधिवेशन में विधवा विवाह सम्बन्धी पेम्फलेट वितरण किये। इसी समय पर परवार सभा की तरफ से आप लोगों के बहिष्कार सम्बन्धी प्रस्ताव पास किया गया, परन्तु आपने इसकी कुछ भी परवाह न करते हुए प्रेमी जी का पूर्णरूप से साथ दिया।

सन् १६२८-२६ की बात है। पछार (अशोकनगर) निवासी श्री सेठ कुञ्जीलाल जी कठरिया वृद्धावस्था में शादी कर रहे थे। उस समय बैरिस्टर साहब मुंगावली में कार्यवश आये हुए थे। आपको इस विवाह की ज्यों ही खबर मिली, आप मुंगावली से फुरन्त ही पछार आये व कठरिया जी को आपने शादी न करने बाबत बहुत समझाया, परन्तु कठरिया जी ने न माना। बरात तैयार होकर स्टेशन पर आ गयी। आप भी बरात के साथ स्टेशन पर आये। ट्रेन आयी। सब सामान व बराती ट्रेन में बैठ गये। जब ट्रेन रवाना हुई तो झट से आपने दूल्हा (कठरिया जी) का हाथ पकड़कर नीचे उतार लिया। बरात चली गई, दूल्हा जी रह गये। कुछ दूरी पर ट्रेन खड़ी हो गयी। कुछ लोग उतर कर आये और दूल्हे को ले जाने की बहुत कोशिश की, परन्तु जज साहब ने दूल्हे को नहीं जाने दिया, हालांकि काफी झूमा-झटकी हुई और मारपीट तक की नौबत आ गयी और २-४ हाथ आप पर भी

पड़ गये। पुलिस में रिपोर्ट हुई। आप पर मुकदमा चला। आप उस समय सवजज थे। आपने नौकरी की या पद की कुछ भी परवाह न की। सभी बातों को सहन करते हुए शादी न होने दी।

इटारसी में अखिल भारतवर्षीय दि० जैन परिषद का अधिवेशन सन् १६३३ में हुआ था। उसी समय आप विलायत से बैरिस्टरी पास करके आये थे। आप परिषद के सभापति चुने गये थे। वह अधिवेशन आपके सभापतित्व में बड़े ही महत्व का हुआ था। उसमें एक प्रस्ताव बड़े ही महत्व का पास हुआ था कि जिस प्रकार से चरित्रभ्रष्ट पुरुषों की शुद्धि करके समाज में सम्मिलत कर लिया जाता है, उसी प्रकार से चरित्रभ्रष्ट स्त्रियों की शुद्धि करके समाज में मिला लेना चाहिये।

दूसरा प्रस्ताव जैन साहित्य प्रसार के विषय में पास किया गया था। उसका प्रचार करने के लिये आपके ही प्रयत्न से श्रीमंत सेठ लक्ष्मीचन्द जी भेलसा ने ११०००) रुपयों का दान किया था। इसके लिये श्रीमान् प्रोफेसर हीरालाल जी साहब को संस्था का अध्यक्ष चुना गया था। इसके द्वारा आज तक कई अलभ्य ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है और हो रहा है। श्री प्रोफेसर साहब के ही कारण आज तक उस संस्था का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है।

भेलसा में आपके प्रोत्साहन से ही श्रीमंत सेठ साहब के द्वारा जैन कालेज आदि कई संस्थाएं सुचारु रूप से चल रही हैं।

आपने जबलपुर परिषद अधिवेशन में आदर्श शादियों की नींव डाली। सबसे प्रथम आदर्श शादी करने के लिये मुझे अगुआ बनाया। मैंने अपनी पुत्री की शादी रिवाड़ी निवासी श्रीमान् वैद्यराज पं० राजधरलालजी के सुपुत्र पं० सम्भव कुमार जी के साथ इसी अधिवेशन में की थी।

आज इस आदर्श रीति से हजारों शादियां हो चुकी हैं तथा प्रतिवर्ष मेलों, प्रतिष्ठाओं, गजरथों, संस्थाओं के अधिवेशनों में आदर्श शादियों का कार्यक्रम अवश्य ही रक्खा जाता है। इसके जन्मदाता बैरिस्टर साहब ही थे।

आपके अन्दर मिलन-सारिता गुण अपूर्व था। एक बार आपसे किसी की मुलाकात होने पर वह जिन्दगी भर बैरिस्टर साहब का हो गया। इसी कारण आप एक वकील से एडीशनल तथा सेशन जज तक हुए। यह आपकी मिलन-सारिता के ही विशिष्ट गुण का प्रभाव था।

आपके मिशन शिक्षा प्रचार, साहित्य प्रचार, बहिष्कृत भाई-बहिनों को समाज में सम्मिलित कराना, दस्साओं को पूजन का अधिकार दिलाना, समाज मे प्रचलित कुरीतियों का निवारण करना व कराना, पतितों का उद्धार करना, अनमेल बाल-वृद्ध विवाहों को रोकना और अन्तर्जातीय विवाहों का प्रचार करना थे। अन्तर्जातीय विवाह आपने स्वत: अपने बड़ पुत्र का किया था।

धार्मिक एवं सामाजिक सेवाएं आपके अन्दर कूट-कूटकर भरी हुई थीं। समाज में किसी भी कार्य के लिये आपसे कहा गया, आप उस कार्य को कराने के लिए सदैव तैयार रहे। इन्कार करना तो आपने सीखा ही नहीं था।

आपने अपने कुटुम्बियों एवं रिश्तेदारों को हर तरह की पूर्ण सहायता देकर उनको कार्य पर लगाया तथा उनके योग्य सम्बन्ध कराये। आपने अपने जीवन में सैकड़ों सामाजिक झगड़ों का दोनों पार्टियों के भाइयों को समझाकर आपस में निपटारा करवाया।

अ० भा० दि० जैन परिषद के तो आप पूर्ण सहयोगी रहे और आपने अन्त तक परिषद के द्वारा जैन समाज की सेवाएं की।

मैं अन्त में बैरिस्टर साहब के प्रति अपनी श्रद्धा के फूल अर्पित करता हूँ।

बैरिस्टर जमना प्रसाद जी का हृदय

— पं० जगन्मोहनलाल शास्त्री, कटनी —

बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी से मेरा परिचय सन् १६२१ से था। उस समय वे इलाहाबाद जैन छात्रावास में रहकर अध्ययन करते थे और मैं स्याद्वाद विद्यालय, काशी में अध्ययन करता था। वे परवार समाज के रत्न थे, इस कारण परवार सभा की अनेक बैठकों व अधिवेशनों में उनसे संघर्ष हुआ। पारस्परिक स्नेह की मात्रा अत्यधिक होते हुए भी सामाजिक सुधारों के सम्बन्ध में मेरा उनसे मतभेद रहता था तथापि मैंने उनकी ईमानदारी और नेकनीयती में कभी सन्देह नहीं किया और न उन्होंने मुझे किसी ऐसे रूप में जाना।

बैरिस्टर सा० समाज उन्नति की अपनी निश्चित दिशा में अबाध गति से बढ़ते थे। मानापमान की उन्हें रत्ती भर भी परवाह नहीं थी। हर कीमत चुका कर समाज सुधार करना चाहते थे। इटारसी परिषद् में ये सभापति थे। स्त्री शुद्धि के प्रस्ताव पर, प्रस्ताव के विरुद्ध बोलने के लिए समय मांगने पर उन्होंने मुझ पर अत्यधिक स्नेह होते हुए भी समय नहीं दिया। प्रस्ताव पर मत लेकर पास कर दिया गया और जब मैंने यह सिद्ध कर दिया कि प्रस्ताव अनियमित रूप में पास किया गया है तो उस प्रस्ताव को पास होने से इसलिए खारिज कर दिया कि उसमें नियमितता नहीं बरती गयी थी। उनकी ईमानदारी का यह प्रबल प्रमाण था।

कटनी में वे सबजज थे। रात्रि में भोजन का त्याग नहीं था। समाज के नवयुवक उनके पास रात्रि में मिलने जाते थे, कारण दिन में दोनों को समय नहीं था। भोजन के समय शिष्टता के नाते उपस्थित व्यक्तियों से भी भोजन का आग्रह करते थे। उनमें अनेक उनकी प्रसन्नता के अभिप्राय से भोजन करने चले जाते थे। रात्रि भोजन का प्रचार बढ़ता जाता था। मुझे यह जानकर दुःख हुआ। मैंने उनसे निवेदन किया कि वे अन्य व्यक्तियों से आग्रह न करें। उन्होंने मुझे उत्तर दिया कि शिष्टता का यह तकाजा है कि यदि मैं भोजन को जाता हूँ तो अन्य व्यक्तियों से भी आग्रह करूँ ? यदि न करूँ तो यह बात व्यवहार विरुद्ध जाती है।

मेरे प्रश्न करने पर कि क्या रात्रि भोजन उचित है, उन्होंने तत्काल उत्तर दिया कि अनुचित है तथापि मेरी कमजोरी है। मैंने कहा—जज सा० ! अपनी कमजोरी के कारण आप उल्टाप्रचार कर समाज को कमजोर क्यों कर रहे हैं ? यह प्रचार भी तो खराब है। बोले—

उपाय बताइए। मैंने कहा—आप भी रात्रि में अन्न भोजन बन्द कर दें। जज सा० ने तत्काल मंदिर जी में जहाँ बात-चीत हो रही थी, कहा कि भाई, कटनी में धार्मिक आचार-विचार के लोग हैं, मैं जानता हूँ। अतः मैं जब तक कटनी में रहूँगा, आपके नियमानुसार रहूँगा। रात्रि में अन्न भोजन नहीं करूँगा।

जमनाप्रसाद जी वे नवयुवक थे जो समाज के वयोवृद्ध सज्जनों को समझा करते थे कि पुराने विचार के व्यक्ति हैं, ये जमाने को क्या जानें। ६० वर्ष के बाद बुद्धि खराब हो जाती है।

एक बार सागर में सेठ भगवानदास जी के यहाँ पूज्य वर्णी जी से मिलने पहुँचे। सौभाग्य से मैं भी वहां पहुँचा। कुछ यूनीवर्सिटी के नवयुवक छात्र आये। उनसे कुछ धार्मिक व सामाजिक विषयों पर चर्चा हुई। बैरिस्टर सा० उन्हें उत्साहित कर समाज सेवा हित शिक्षा देना चाहते थे। बच्चे कच्चे थे। उनकी बात पर रूमाल मुंह में लगाकर टेढ़ा मुख कर हंसते थे। उनकी समझ में बैरिस्टर सा० की बातें नहीं आती थीं।

मुझ से बोले कि ये लड़के बड़े नासमझ हैं, बात सुनते नहीं हंसते हैं। वे समझते हैं कि मैं कोई पागल हूँ। मैंने कहा—बैरिस्टर सा० ! आप नवयुवक थे तब वृद्धों को नासमझ बुद्धि के दिवालिए समझते थे। चूंकि अब आपने वृद्धों का स्थान और बच्चों ने आपका स्थान पा लिया है, अतः आज वे आपको वही समझते हैं जो आप अपने समय में वृद्ध पुरुषों को समझते थे. इसपर आप खीजते क्यों हैं ? उत्तर सुनकर बहुत हंसे। बोले—भाई ! तुम्हारा कहना सोलह आना सच है। पर हम तो अब काफी अनुभव कर चुके। मेरे अनुभव का लाभ उनको उठाना चाहिए। मैंने कहा—आपकी अवस्था आने पर वे अनुभवी बनेंगे, तब आपकी तरह ये भी पछतायेंगे।

बैरिस्टर सा० उत्तम विचारक, अदम्य उत्साही, ईमानदार, मानापमान में समदृष्टि, प्रत्येक व्यक्ति को आदर देने वाले निरभिमानी व स्वार्थ त्यागी व्यक्ति थे। उनके उठ जाने पर समाज एक अपूर्व सेवक को खो चुकी। इस अनुभवपूर्ण अवस्था में उनका समाज के लिए बहुत बड़ा मूल्य था। समाज सेवा के क्षेत्र में वे अङ्क का काम करते जिनके बिना शून्यता दृष्टिगोचर होती है।

वैवाहिक क्रांति के द्रष्टा और प्रणेता

—— श्री 'तन्मय' बुखारिया ——

प्रत्येक समाज-सुधार अपने पूर्व-काल में क्रांति और उत्तर-काल में सहज स्वभाव हुआ करता है; इसीलिए भाग्य-वश जिन्हें सुधार के पूर्व काल में उसका स्वरूप देखने का अवसर नहीं मिल पाता। वे प्रायः यह अनुमान ही नहीं कर सकते कि आज बिल्कुल सामान्य-सा बन जाने वाला कार्य कल कठिनाइयों, विरोधों और निरन्तर दमन के कितने दौरों में से गुज़र कर प्रस्तुत रूप को प्राप्त हो पाया है। अनमेल और बहु-व्यय-साध्य विवाहों का निषेध करके उसके स्थान पर आज की प्रचलित और सहज सम्पन्न हो रही सामूहिक आदर्श विवाहों की प्रथा एक ऐसी ही क्रिया है, अपने प्रारम्भ-काल में जिसने भयंकर विरोधों की आंधियों को एकांगिनी लतिका की भांति सफलतापूर्वक सहन करते हुए अपने अस्तित्व को न केवल सुरक्षित ही रखा है, बल्कि उसे क्रमशः विकसित और परिमार्जित भी किया है। समाज-सुधारों की इस प्रारम्भिक स्थिति में जो नर-पुंगव अपने दृढ़ हाथों में सुधार का झंडा लेकर प्रतिक्रियावादी तत्वों से संघर्ष-रत होकर जूझ पड़ते हैं, वस्तुतः वही समाज के नेता और युग-पुरुष कहलाने के सच्चे अधिकारी हैं। स्वर्गीय बैरिस्टर श्री जमुनाप्रसाद जी कलरैया इने-गिने ऐसे ही युग-पुरुषों और समाज नेताओं में से एक हैं।

बात अशोक नगर की है और लगभग २० वर्ष पहले की है। वहां कोई निर्मोही और अभागे मां-बाप थे, जो अपनी किशोरी पुत्री का विवाह एक वृद्ध के साथ करने पर तुले हुये थे। अशोक नगर में कुछ जैन युवकों को, जो इन अभिभावकों को समझा कर हार चुके थे, लगा कि उनके होते हुये ऐसा अत्याचार घटित हो जाय तो यह उनके यौवन का अपमान है; किन्तु नेतृत्व के अभाव में वे अपने को असमर्थ पा रहे थे। उस अनमोल अबला बाला का सौभाग्य कि कलरैया जी तक इस सम्बन्ध की बात जा पहुँची। विवाह से पूर्व अशोक नगर पहुंच कर उन्होंने युवकों के नेतृत्व का सूत्र अपने हाथों में संभाल लिया। बारात को लिए हुये ज्यों ही ट्रेन अशोक नगर स्टेशन पर पहुँची कि कलरैया जी के नेतृत्व में उन्हीं की योजना अनुसार युवकों ने बारातियों और दूल्हा पर हमला बोल दिया। दूल्हा सहित प्रत्येक बाराती की ऐसी खासी मरम्मत हुई कि अन्त में उन्हें यह वचन देना ही पड़ा कि वे बारात वापिस लिये जाते हैं; और सचमुच वह विवाह न हो पाया; बारात वापिस चली गई। इस उपद्रव

के कारण ट्रेन लगभग एक घंटा डिटेन रही और यदि सब-जज-सरीखे महत्वपूर्ण एवं मान्य सरकारी पद पर उन दिनों वे न होते तथा जिला गुना का कप्तान पुलिस उनका व्यक्तिगत मित्र न निकल आता तो कदाचित् अपनी सुधारवादिता के इस जोश की उन्हें बड़ी कीमत चकानी पड़ जाती, निश्चय ही जिसके लिए तैयार होकर ही वे अपनी तैनाती के स्थान से काफी दूर अशोक नगर पहुँचे थे।

शादी विवाहों के अवसर पर मात्र-आडम्बर और शान-शौकत के लिए किये जाने वाले उभय पक्षीय बहु-व्यय को देखकर श्री कलरैया जी को अपार कष्ट होता था। इससे भी अधिक दुःख उन्हें तब होता जब वे देखते कि बड़े आदमियों की नकल की होड़ में बेचारे हजारों गरीब समाज-बन्धु भी धीरे-धीरे इस आडम्बर-भावना के शिकार बन कर बरबाद हुए जा रहे हैं। फलतः दैवी प्रेरणा की बात कि उन्हें सूझा कि यदि एक ही समय में एक ही मंडप के नीचे एक से अधिक विवाह एक ही व्यवस्था के अन्तर्गत सम्पन्न हो सकें तो समाज को कितना लाभ हो और जहाँ तक इन पंक्तियों के लेखक को ध्यान है, प्रथम प्रयोग के रूप में लगभग १५, १६ वर्ष पहले, पहली बार अ० भा० दि० जैन परिषद के जबलपुर अधिवेशन के समय उन्होंने ऐसे ही ३-४ विवाहों का आयोजन कर डाला। बुन्देलखंड में जबलपुर जैन-समाज का, विशेषतया परवार-बन्धुओं का बहुत बड़ा केन्द्र है। क्या राजनैतिक और क्या सामाजिक, परिस्थितियों की विवशता के कारण ही बुन्देलखंड प्रत्येक क्षेत्र में प्रायः ज़माने के पीछे ही चलता आया है। परिणामतः, जबलपुर के बहुत से प्राचीनतावादी बुज़ुर्गों ने शोर मचाना शुरू किया कि अपनी मौजूदगी में वे कदापि इस प्रकार सामूहिक विवाहों को सम्पन्न नहीं होने देंगे। उनका विरोध क्रमशः तीव्र से तीव्रतर होता गया और एक स्थिति ऐसी भी आ पहुँची कि प्रतिक्रियावादियों के समूह ने श्री कलरैया जी को घेर लिया और उन पर प्रहार तक करने के लिये कटि-बद्ध हो गया, बल्कि यदि मेरी स्मरण-शक्ति धोखा नहीं दे रही है तो मैं कहूँगा कि प्रहार कर भी दिया, किन्तु एक कुशल नेता की भाँति कलरैया जी ने अत्यन्त धैर्य किन्तु दृढ़ता से परिस्थिति का सामना किया और एक ओर उक्त अवसर पर उपस्थित अनेकानेक प्रभावशाली समाज कर्णधारों के बीच-बचाव तथा दूसरी ओर अपनी अडिग दृढ़ता के फलस्वरूप वे अपने उद्देश्य को प्राप्त करके ही रहे। इस घटना के पश्चात् ऐसे विवाहों के प्रचार की, मानो, उन्हें धुन ही हो गई। जहाँ कहीं किसी सामाजिक उत्सव या मेले की सूचना उन्हें मिली कि उन्होंने संबंधित कार्य-कर्त्ताओं को ऐसे विवाहों का आयोजन करने के लिए अनुप्राणित, प्रेरित और उत्साहित करना आरम्भ किया। यह उन्हीं के अनथक प्रयास और परिश्रम का फल है कि आज यह स्थिति हो गयी है कि समाज में आदर्श सामूहिक विवाहों का प्रचलन एक सामान्य-सी बात हो गई है। आदर्श सामूहिक विवाह प्रथा अपने आप में कितनी बड़ी सामाजिक क्रांति है, यह एक पृथक् विषय है जो स्वतन्त्र उल्लेख की अपेक्षा रखता है। मेरा अनुमान है कि कुल मिलाकर कई हज़ार सामूहिक विवाह अब तक सम्पन्न हो चुके होंगे। प्रायः, नेताओं की कथनी और करनी में अन्तर होता है। कलरैया जी इस आरोप के मूर्त्तिमान अपवाद थे। उनका नेतृत्व कितना व्यावहारिक होता था यह इसी से समझा जा सकता है कि तदुपरांत उन्होंने स्वयं अपने पुत्र-पुत्रियों के विवाह इसी रूप

में सम्पन्न किए। श्री कलरैया जी द्वारा प्रणीत इस नवीन विवाह पद्धति की देन से कितने गरीब परिवारों की कुल-शान्ति, मान-प्रतिष्ठा अखंडित रह गई; कितने किशोर-किशोरियों के कोमल जीवन असमय नष्ट होने से बच गये, सविस्तार यह लेखा-जोखा अभी उधार है। मुझे विश्वास है कि यथा-समय हमारा जैन इतिहास इस ऋण को अवश्य चुकायेगा।

श्री कलरैया जी के निधन के पश्चात् विशेषतया बुन्देलखंड क्षेत्र में इस विवाह पद्धति के प्रतिपादन का भार उनके अनन्य सहयोगी और समधी सुप्रसिद्ध श्रीमान् श्री शोभालाल (सागर) और ललितपुर के नवोदित सामाजिक कार्यकर्त्ता, दि० जैन पंचायत ललितपुर के तत्वावधान में स्थायी रूप से कार्यशील तद्विषयक उपसमिति के संयोजक श्री ज्ञानचन्द्र अलया लिये हुए हैं। समाज के सहयोग से ये तथा ऐसे ही अन्य अनेक कार्यकर्त्ता वृन्द स्वर्गीय श्री कलरैया जी की पुण्य-प्रेरणा के प्रकाश में निरन्तर सफल होते रहें यही हमारा अभीष्ट होना चाहिये।

नवयुग की चेतना के प्रतीक

— श्री गुलाबचन्द जैन —

स्वर्गीय श्री जमना प्रसाद जी अखिल भारतीय जैन समाज के लिए एक अनमोल रत्न थे। जैन मत के अनुयायी दिगम्बर-श्वेताम्बर दो प्रमुख सम्प्रदायों के अतिरिक्त और भी ७०-८० उप जातियों में विभाजित हैं। इनमें से कई उपजातियां तो दूसरी उपजातियो की पूजा प्रथा व आराधना को हेय समझते हैं; उदाहरणार्थ कई तारण पंथी जैन-मूर्ति की पूजा को घृणा की दृष्टि से देखते हैं तथा मूर्ति वाले जैन मन्दिर में जाना अनुचित मानते हैं। इतना ही नहीं बल्कि इन ७०-८० उपजातियों में भी यहां तक मतभेद हैं कि एक-एक उपजाति में भी अनेक उपजातीय दल हैं—जैसे कि परिवारों में ४-५ प्रकार के परिवार हैं। इस तरह आत्म और अध्यात्म के शिखर पर पहुँचे धर्म के मुट्ठी भर अनुयायी करीब ४०० विभिन्न उपजातीय दलों में विभाजित हैं। यह कितने आश्चर्य की बात है कि जिन-धर्म में अन्ध-विश्वासों तथा जाति के मुखिया का स्थान न होते हुए भी इतने भेदभाव हैं। यह भी नहीं कि जैन धर्मानुयायी शिक्षा में या और किसी बात में पिछड़े हुए रहे हों। वे तो शिक्षित और सभ्य समाज के महत्वपूर्ण अंग रहे हैं। उन्होंने कई महान विभूतियों को जन्म दिया लेकिन वे सब के सब अपना, अपनी आत्मा का तथा अपने १००-२०० उपजातीय दलों के सदस्यों का ही उद्धार करते रहे। कुछ संकीर्णता से उठे तो धर्म प्रचारक बन गये। लेकिन किसी ने भी जैनधर्म के अनुयायियों की सामाजिक स्थिति की ओर दृष्टिपात तक नहीं किया। विभिन्न छोटे-छोटे जातीय दलों में विभाजित जैन समुदाय भयंकर सामाजिक कुरीतियों का शिकार हो रहा था। यहाँ तक कि हर १००-२०० व्यक्तियों के दल के पृथक्-पृथक् मन्दिर हैं तथा वे दूसरे उपजाति-दल को वहाँ नहीं आने देना चाहते। वर्तमान समय की सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक समस्याएँ जैन समाज को और भी नीचे गिरा रही थीं। ऐसे ही अन्धकारमय समय में स्व० जमनाप्रसाद जी ने सामाजिक उद्धार का बीड़ा उठाया।

जैन सम्प्रदाय के इतिहास में वे पहले ही व्यक्ति थे जिन्होंने विचारों, उपदेशों व कर्मों से विभिन्न उपजाति-दलों को नष्ट करने का प्रयत्न किया। उन्होंने स्वतः भी अपने सम्बन्ध विभिन्न उपजाति-दलों से स्थापित किये। उन्होंने इस ओर उन्नति के ध्येय से एक सनातन-धर्म संस्था भी शुरू की थी जो कि संकीर्णता के प्रतिकूल वातावरण में नहीं पनप

सकी। उनका उद्देश्य सामाजिक एकता स्थापित करके गिरते हुए जैनों को उठाना था। महात्मा गांधी के हरिजन उद्धार की ही तरह उनका यह कार्य भी महत्वपूर्ण था। वर्तमान काल की आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियों में शादी का प्रश्न एक भयानक राक्षस की तरह छाया रहता है, लेकिन उसका इतना सुगम और सहज उपाय स्वर्गीय जमनाप्रसाद जी ने निकाला जिसकी कल्पना भी कोई पहले नहीं कर सका था। वे एक उच्च शिक्षा प्राप्त तथा उच्च पदासीन व्यक्ति थे। लेकिन फिर भी वे सभी प्रकार के व्यक्तियों से हृदय खोल कर मिलते थे तथा ऊँच-नीच और गरीब-अमीर का भेद-भाव उनकी दृष्टि में था ही नहीं। इतना ही नहीं बल्कि वे किसी को भी किसी प्रकार की सहायता देने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे। शिक्षा व पद के मद से जितने वंचित स्व० जमना प्रसाद जी रह सके उतना शायद ही कोई जैन रहा हो। इसके अतिरिक्त वे छोटे से छोटे व्यक्ति को भी पूर्ण आदर व मान प्रदान करते थे। उनके हंसमुख, समदर्शी और सरल व्यक्तित्व की एक झलक से ही मिलने वाले की सारी चिन्ताएँ दूर हो जाती थीं।

उन्हें सामाजिक कार्यों में इतना आनन्द आता था कि वे उसके आगे अपने जीवन की भी परवाह नहीं करते थे। वे अपने अन्तिम दिनों में दिल्ली व मध्य भारत में, चोरी करके बेची जाने वाली जैन मूर्तियों के विषय में व्यस्त थे। मैं उनसे अन्तिम बार दिसम्बर १९५९ में उनके नागपुर निवास स्थान पर मिला था। वे उस समय सुबह से ही टाइप करने में व्यस्त थे। शारीरिक कष्ट के कारण वे बहुत क्षीण हो गये थे और डाक्टरों ने उन्हें पूर्ण विश्राम करने की सलाह दी थी। ऐसी हालत में भी वे मजे से बैठे हुए करीब २०-३० पृष्ठ टाइप कर चुके थे। मैंने उनसे विश्राम करने का अनुरोध किया तो वे कुछ क्षण रुक कर बोले—गुलाब बाबू, मैं विश्राम तो कर लूं लेकिन मुझे विश्राम करने में और भी तकलीफ हो जाती है। निर्जीव पड़े रहने से मेरी आत्मा को आराम नहीं मिलता बल्कि आत्मवेदना से मेरी शारीरिक वेदना और भी बढ़ जाती है। जब से मैं यह कार्य कर रहा हूँ मैं अपने आप को बहुत स्वस्थ महसूस कर रहा हूँ। मैं उनके शब्द सुनकर आश्चर्यचकित रह गया। उनके लिए सामाजिक कार्य के आगे जीवन कुछ भी महत्व नहीं रखता था।

यों तो मैं उन्हें बहुत पहिले से जानता था लेकिन उनके महान व्यक्तित्व का परिचय मुझे सन् १९५३ में हुआ जबकि वे बस्तर में थे। मैं उन दिनों बी० ए० का विद्यार्थी था और एक साथी के साथ बस्तर-यात्रा को निकला था। चूंकि मैंने इनका नाम सुन रखा था अतः मैं उनसे मिलने गया। पहिली ही मुलाकात में वे हमारे पीछे पड़ गये कि हम उन्हीं के यहाँ ठहरें और भोजन करें। मेरे मित्र के बहुत अनुरोध करने पर वे बड़ी मुश्किल से मान सके, फिर भी जब तक हम लोग बस्तर में रहे उन्होंने अपनी कार हमारे सुपुर्द कर दी। उनके इस सुभद्र व्यवहार से कौन प्रभावित न होता। इतना विशाल हृदय तथा सुसंस्कृत व्यक्ति मैंने जैन समाज में अभी तक नहीं देखा था।

आज वे हमारे बीच में नहीं हैं, लेकिन फिर भी उनके महान् उद्देश्य हमें हमेशा पथ दिखलाते रहेंगे। यद्यपि संकीर्ण व स्वार्थी विचारधारा के बीच उनका व्यक्तित्व पूर्ण विकसित

नहीं हो सका फिर भी वे पहले व्यक्ति रहे हैं जिन्होंने जैन धर्म के अनुयायियों को एक संगठित समाज की कल्पना दी। उन्होंने ही बतलाया कि विभिन्न उपजाति-दलों में छिन्न-भिन्न होने के बाद भी समाज की एक ही संस्कृति है, एक ही दर्शन है, एक ही मार्ग है और इसलिए सर्वांगीण उन्नति के लिए उसका भेदभाव-हीन होना अतिआवश्यक है।

आज उनके परिचित सभी परम पिता ईश्वर से प्रार्थना कर रहे होंगे कि उनकी महान् आत्मा को शांति मिले। लेकिन उनकी महान् आत्मा को सस्ते शब्दों की श्रद्धांजलि काफी नहीं। इसलिये मैं उनके सभी परिचित व्यक्तियों से अनुरोध करूंगा कि वे तन-मन-धन से स्व० जमनाप्रसाद जी के छोड़े हुये अधूरे महत् कार्यों को पूर्ण करने की कोशिश करें। केवल इसी से उनकी आत्मा को शांति मिल सकेगी।

सच्चा समाज सुधारक

— श्री रतनलाल जैन, बिजनौर —

श्री जमनाप्रसाद जी से मेरा सम्पर्क प्रथम बार भारतवर्षीय दि० जैन परिषद् के अधिवेशनों में लगभग २५ वर्ष पूर्व हुआ था। उस समय वे मध्यप्रदेश में सेशनजज के पद पर आसीन थे। मैंने उनको लगनशील, उग्र, सच्चे समाज सुधारक नेता के रूप में देखा था।

मुझे स्मरण है कि परिषद् का अधिवेशन भेलसा में हुआ था। उसमें बैरिस्टर जमना प्रसाद भी सम्मिलित हुये थे। शाम को परिषद् की कार्यकारिणी की मीटिंग हो रही थी। वे मीटिंग के समाप्त होने से कुछ समय पहिले चले गये। अगले दिन प्रातःकाल देखते हैं कि बैरिस्टर साहब ने रात्रि में सेठ लक्ष्मीचन्द जी को तैयार कर लिया कि वे अच्छी रकम का दान देकर जैन हाई स्कूल की स्थापना भेलसा में करें और उन्होंने परिषद् के जलसे में दान को घोषित करा दिया। आज उनके द्वारा स्थापित कराया जैन हाई स्कूल भेलसा में जनता की अच्छी सेवा कर रहा है।

बैरिस्टर साहब में अतीव लगन व आकर्षण था। वे जैन समाज के उत्साही व्यक्तियों को अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे।

मध्य प्रदेश एवं बुन्देलखंड की निर्धन जैन जनता को देखकर और यह अनुभव करके कि विवाह आदि के व्यर्थ व्यय में यह निर्धन जनता पिसी जा रही है और विवाह करना भी दुष्कर हो रहा है, उन्होंने एक ही मंडप में बहु-विवाह बिना व्यय व आडंबर के कराने की नींव डाली।

जब भी परिषद् के अधिवेशन मध्य प्रदेश के बुन्देलखंड के जबलपुर, देवगढ़ आदि स्थानों पर हुए उन्होंने नवयुवकों व कन्याओं व उनके संरक्षकों को तैयार करके एक ही मंडप में बहुत से विवाह कराये। उन्होंने सैकड़ों की संख्या में एक ही मंडप में बहुत से विवाहों को बिना व्यय के करा दिया और समयोपयोगी प्रथा की नींव डाली।

यह बहुत से विवाह एक मंडप में होने की प्रथा निर्धन जनता तक ही सीमित नहीं रही, सम्पन्न घरों के कितने ही नवयुवक व नवयुवतियों के विवाह एक ही मंडप में करा दिये गये।

उन्होंने अपने कार्यक्षेत्र को बढ़ाया। गत वर्ष भारत की राजधानी देहली में भी सम्पन्न घरों के नवयुवक व नवयुवतियों के तीन जोड़ों के विवाह एक ही मंडप में बिना किसी व्यय के कराकर उन्होंने उत्तरी भारत की जैन जनता का भी मार्ग प्रदर्शन किया।

आपकी ही प्रेरणा से भा० दि० जैन परिषद् ने देवगढ़ के अधिवेशन में एक ही मंडप में बहुत से विवाह कराने की प्रथा का प्रस्ताव पास किया और जैन समाज को नये सुधार का मार्ग दिखलाया।

आपके अकस्मात् स्वर्गारोहण में जो क्षति जैन समाज की हुई है उसकी पूर्ति होना असंभव है। आपके परलोक गमन से जो धक्का एक मंडप में बहुत से विवाहों की संचालित प्रथा को लगा है, उसे क्या प्रथा सहन कर सकेगी।

बैरिस्टर जमना प्रसाद : एक क्रांतिकारी सुधारक

— श्री चिरंजीलाल बड़जात्या, वर्धा —

कुछ व्यक्ति ऐसे होते है जो अपने जीवन के सत्कृत्यों से अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं। उन्हें समाज सदैव याद करता रहता है। केवल सुधारवादी व्यक्ति होने से ही समाज उन्हें याद नहीं रखता किन्तु उस सुधार के प्रति उनकी निष्ठा और सेवाभाव ही उनके स्मरण का कारण होता है।

ऐसे सुधारवादी, निष्ठावान, सेवाभावी व्यक्तियों में बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी भी एक थे। उनकी कर्तव्य परायणता से जैन समाज सचमुच अनुग्रहीत है।

२५ वर्ष पहले सिंघई पन्नालाल जी अमरावती ने मेरा परिचय श्री जमनाप्रसाद जी से कराया। तब से मैं बराबर उनके सम्पर्क में रहा हूँ। वर्धा में उनके सम्मान का भी मुझे अवसर मिला है। फिर दि० जैन परिषद के इटारसी अधिवेशन के जब वे सभापति बने तब से उनके साथ समाज के कार्यों में साथ-साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करने का मौका भी मिला।

मेरे ऊपर जब अत्यन्त सुधारवादी होने के कारण समाज वालों ने उपद्रव मचाया, मुझे जाति बाहर किया और यातनायें देना प्रारम्भ किया, उस समय जमनाप्रसाद जी सब जज ही थे। जिन्होंने मेरे विपत्ति के दिनों में मेरी सहायता की और मुझे कर्तव्य मार्ग पर दृढ़ रहने की प्रेरणा दी।

श्री जमनाप्रसाद जी का सामूहिक विवाह आन्दोलन उनकी कीर्ति को सुरक्षित रखने के लिए काफी है। यह एक क्रान्ति के रूप में अमर रहेगा। गजरथ मेले में, देवगढ़ आदि में ग्यारह-ग्यारह रुपयों में शादियां करवाना सचमुच एक बड़ा अच्छा काम था। इससे समाज में दहेज की भीषणता से कितने लोगों को उन्होंने छुटकारा दिलाया। ऐसे करीब ५००० संबंध उन्होंने कराये होंगे। अन्तर्जातीय और विधवा विवाह उन्होंने कई कराये।

मेरा उनसे बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया था। जब नागपुर जाता तो उनसे अगर नहीं मिल पाता तो लगता जैसे नागपुर जाना सार्थक नहीं हुआ। इसलिए समय निकालकर उनसे मिलने का अवश्य ही प्रयत्न करता।

आज वे हमारे बीच में नहीं है। लेकिन विश्वास नहीं होता कि वे इतनी जल्दी हमसे छूट जायेंगे। यही तो समय था जब उनकी आवश्यकता थी। अगर वे कुछ दिन और रहते तो समाज की जो सेवा बनती वह बड़ी लाभप्रद होती लेकिन जो वे कर गये हैं वही यदि हम आगे बढ़ा सकें तो हमारे लिए वही पदचिह्न बन जायगा।

लगनशील समाजसेवक

— भगवानदास शोभलाल जैन, सागर —

श्रीमान जमनाप्रसाद जी जैन, नागपुर, जिनका आकस्मिक निधन ४ जनवरी, सन् १९६० को उनके निवास स्थान पर नागपुर में हो गया है, मेरे समधी थे। मेरे सबसे बड़े सुपुत्र श्री डालचन्द्र को उनकी तृतीय कन्या नंदनकुमारी ब्याही है। इस तरह मेरा उनका १२ वर्षों से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। रिश्तेदारी होने के बाद से तो कदम-कदम पर मेरा उनका हर क्षेत्र में साथ रहा है। सामाजिक क्षेत्र में तो उनका उत्साह देखने लायक था। जब-जब वे सागर आते, स्वयं ही ढूंढ़-ढूंढ़ कर जैन समाज के झगड़ों को आपस में निपटाने का प्रयत्न करते, भले ही इसके लिए उनका अमूल्य समय नष्ट होता, गाड़ी चूकने की नौबत आती, नींद खराब होती पर रात-रात भर बैठकर पंचों को बुलाकर उन झगड़ों को सुलझाकर ही दम लेते। सागर में श्री रामचरण लाल चौधरी, सराफ वकील आदि के झगड़ों का निपटारा आप ही ने किया। छतरपुर में बिनेकावारों को पूजा का अधिकार नहीं था। आपके ही प्रयत्न के फलस्वरूप यहां दस्सावालों को पूजा का अधिकार प्राप्त हुआ है।

आपने आदर्श सामूहिक शादियों की पद्धति शुरू करके जो समाज में नया कदम उठाया था, उसको आगे बढ़ाने के लिए मैंने भी अपने घर से अपने भाई के लड़के-लड़कियों के आदर्श विवाह किये।

कई बार हम लोगों के आपस में कई बातों पर मतभेद हो जाया करते थे, उस पर वाद-विवाद भी खूब होता, कारण कि वे जरा उग्र प्रकृति के व्यक्ति थे, परन्तु इतना सब कुछ होने के बाद भी थे दिल के साफ। उनके मन में किसी के प्रति कोई भी कटुता का भाव सदा के लिए कभी घर न कर सका।

३ जनवरी को मेरी उनकी फोन पर उनकी चौथी पुत्री के विवाह के बारे में बातचीत भी हुई थी। अचानक ही ४ ता० को साढ़े तीन बजे फोन पर रोने की आवाज के साथ-साथ यह खबर मिली कि जज साहब नहीं रहे। यह सुनकर तो दिल बैठ गया और हृदय पर ऐसा वज्रपात हुआ, जिसका कि मैं वर्णन नहीं कर सकता। यह तो अच्छा हुआ कि उनके द्वितीय पुत्र कैप्टेन राजेन्द्रकुमार की बहू की सादों[1] के कारण उनके सभी लड़के लड़कियों दामाद, नाती-नातिनों आदि की उनसे मुलाकात हो गई थी, नहीं तो वे सब जिन्दगी भर पछताते।

अन्त में उनका जितना भी गुणगान किया जाये, सो थोड़ा है। भगवान उनकी आत्मा को शांति दे।

---

१. यह उत्सव बुन्देलखण्ड में प्रत्येक बहू की प्रथम गर्भावस्था में प्रसवपूर्व मनाया जाता है।

बैरिस्टर जमना प्रसाद और आदर्श विवाह योजना

— श्री गोकुलप्रसाद जैन, दिल्ली —

समाज में आदर्श विवाहों की प्रथा को योजनाबद्ध रूप से चलाने का सम्पूर्ण श्रेय जैन समाज के मान्य नेता स्व० बैरिस्टर जमना प्रसाद जी को रहा है। आप ही इसके प्रवर्त्तक थे और आपने ही जीवन पर्यन्त इसे सफल नेतृत्व प्रदान किया। मध्य प्रदेश में आपकी छत्र-छाया में इस प्रकार के हजारों विवाह सम्पन्न हुये हैं।

यह योजना क्या है ? और इसकी आवश्यकता क्यों पड़ी ? महान् सामाजिक क्रांति के अग्रदूत स्व० बैरिस्टर साहब द्वारा प्रचलित युगान्तरकारी परिवर्तन की प्रतीक आदर्श विवाह योजना को समझने के लिए इन बातों पर विचार करना आवश्यक है।

मानव जीवन में विवाह संस्था की स्थिति कोई आकस्मिक घटना नहीं है. मानव सृष्टि को निर्बाध रखने के लिए हम मुक्त सामाजिक यौन सम्बन्धों से चलकर बहु-विवाह के मार्ग से होते हुए आज एक विवाह-प्रथा की मंजिल तक आ पहुँचे हैं। हमारे वर्तमान वैवाहिक रूप के पीछे ऐतिहासिक विकास की एक क्रमिक शृंखला है। वह उतनी ही पुरातन है जितनी कि मानव सभ्यता। जीवन की एक अनिवार्यता की विशुद्ध वैज्ञानिक ढंग से पूर्ति करना अर्थात् प्राप्त वयस्क वर-कन्या को जीवन यात्रा के लिये एक सूत्र में बांधना इसका जन्मतः उद्देश्य रहा है। किन्तु हमारी पदार्थवादी भावना और परिग्रह प्रियता ने इस पुनीत कार्य के प्रति हमारे दृष्टिकोण को कालक्रमेण व्यावसायिक बना दिया है। पण्यद्रव्य की भांति वर-कन्याओं का भी क्रय-विक्रय होने लगा है। दहेज और लेन-देन की भीषण विभीषिका ने वातावरण को इतना विषाक्त कर दिया है जैसे कि मानों द्रव्य ही इस पावन-पुनीत जीवन सम्बन्ध का एकमात्र आधार हो। इसी भीषण कुप्रथा के दुष्प्रभावों से समाज को बचाने के लिये श्री जमना प्रसाद जैन ने आदर्श विवाह प्रथा का प्रवर्तन किया था।

विवाह की प्राचीनतम आठ पद्धतियों में वर्तमान आर्ष पद्धति केवल इसलिए श्रेष्ठ मानी गई है कि इसमें किसी प्रकार के बल प्रयोग की कोई गुंजाइश नहीं। किन्तु हमारे व्यावसायिक दृष्टिकोण और पदार्थवादिता ने इस प्रकार के विवाह सम्बन्ध को भी एक क्रेय-विक्रेय पण्य बना डाला है। समाज में खुले आम वरों का विक्रय होता है, ठहर-ठहराव होता है और सौदेबाजी होती है। इसने एक ऐसी विषम स्थिति पैदा कर दी है कि हम बिना दहेज के

किसी विवाह की कल्पना भी नहीं कर पाते। जितना अच्छा, योग्य और शिक्षित वर होगा उतनी ही अधिक उसकी कीमत होगी, फिर चाहे लड़की वाला कर्ज लेकर दे, घर बेच कर दे, या किसी अन्य प्रकार से इन्तजाम करे। उसकी स्थिति तो वधिक के घर बंधे उस मूक और निरीह प्राणी जैसी होती है जिसका वध तो निश्चित है किन्तु जो न तो बोल सकता है और न तड़प ही सकता है। इस प्रकार के विवाहों से प्रतिवर्ष हजारों घर उजड़ते देखे गये हैं। पुत्री के सुख के लिए माता-पिता क्या नहीं करते। विवाह योग्य होते ही लड़कों का मूल्यांकन होना प्रारम्भ हो जाता है। जहां से सर्वाधिक मूल्य आंका जाता है, वहीं सम्बन्ध तय हो जाता है, मानों कोई क्रोशविक्रय या नीलाम हो रहा हो। तय शुदा दहेज का लेखा-जोखा, हिसाब और पूर्ति भी उसी क्रूरता, पशुता और निन्दनीयता से कराई जाती है। यही नहीं हजारों रुपये विवाहों में व्यर्थ के दिखावे और झूठी शान के आयोजनों पर खर्च किये जाते हैं। बाजे, गाजे, रोशनी, आतिशबाजी और इसी प्रकार की अन्य व्यर्थ की रूढ़ियों पर खूब बरबादी होती है।

वस्तुतः यह सब हमारे समाज की हीनतम अवस्था का प्रतीक और परिचायक है। इस ने हमारे सामाजिक जीवन पर बहुमुखी दुष्प्रभाव डाला है। इसने हमारे सामाजिक जीवन के सन्तुलन को बिगाड़ दिया है। अपेक्षित दहेज का प्रबन्ध न हो सकने के कारण हजारों कन्यायें कुवाँरी रह जाती हैं। अनेकों को उस संकटमय स्थिति के सामने झुककर आत्म-हत्या और आत्मघात के लिए बाध्य होना पड़ता है। समाज में हजारों बेमेल और बेजोड़ विवाह भी इसी कारण होते हैं। वृद्ध विवाह भी इसी समस्या का भीषण दुष्परिणाम है। यह समस्या केवल कन्या पक्ष तक ही सीमित नहीं है। समाज में सैंकड़ों लड़के भी ऐसे हैं जिनको भी इसी कारण से अविवाहित रह जाना पड़ता है। वर्षों परेशान होने के बाद जो सम्बन्ध तय होते हैं वे सर्वथा बेमेल होते हैं। कन्याओं के रूप, गुण, शील आदि को देखते हुये जैसे लड़कों से उनका सम्बन्ध होना चाहिए, दहेज के अभाव में ऐसा नहीं हो पाता। क्योंकि समाज में इस प्रकार के सम्बन्धों का प्रचलित आधार रूप, कुल, वंश, गुण, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि न होकर दहेज और केवल दहेज है। द्रव्य ही हमारा एकमात्र मापदण्ड है। चारों ओर स्वार्थान्धता की आग लगी है। यह एक ऐसा विषाक्त चक्र है कि इसमे कोई बचकर जा नहीं सकता। लड़कियां सबके होती हैं और सबको ही ऐसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है किन्तु फिर भी हम सजग और सचेत नहीं होते। ऐसे बेजोड़ और बेमेल विवाहों से दाम्पत्य जीवन, भावी सन्तान, परिवार और समाज पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है।

प्रचलित विवाह रूप की इन्हीं बुराइयों ने हमारे मान्य नेता श्री जमनाप्रसाद जी को सामूहिक आदर्श विवाह पद्धति चलाने के लिए प्रेरित किया था। वैवाहिक कार्यों के सुधार का सर्व प्रथम प्रयास तो बॅरिस्टर चम्पतराय जी ने किया था जिसमें उन्होंने अनेक प्रचलित रूढ़ियों को तोड़ा था। समाज में और भी स्थान-स्थान पर ऐसे विवाह होने आए हैं जिसमें समाज ने दहेज और फिजूल खर्ची के जुए को उतार फेका था। परिवर्तित परिस्थिति और सामाजिक जागरण ने हमें बहुत कुछ सिखा दिया है। व्यवस्थित रूप से सामूहिक आदर्श

विवाह योजना को समाज में प्रचलित करने का सारा श्रेय समाज और परिषद् के स्वर्गीय नेता सन्मार्ग प्रवर्त्तक बैरिस्टर जमना प्रसाद जी कलरैया (नागपुर) को है। उन्होंने परिषद् के जबलपुर अधिवेशन के अवसर पर सर्वप्रथम इस योजना को कार्यान्वित किया था। घोर विरोध का सामना करते हुये भी जिस महान् कार्य का उन्होंने बीड़ा उठाया था, उसमें वे लगे रहे और इसे पूर्ण सफल बनाया। इस योजना को सफल बनाने और इसे कार्य-रूप में परिणत करने का बहुत कुछ श्रेय स्व० बैरिस्टर साहब के अनन्य सहयोगी सेठ शोभालाल जी सागरवालों को है जिन्होंने इस योजना का सफल नेतृत्व करके इसे सफलतर और सफलतम बनाया। इन्हीं महानुभावों के सत्प्रयासों से आज बुन्देलखण्ड और मध्यप्रदेश में हजारों आदर्श विवाह हो चुके हैं।

बैरिस्टर सा० ने अपने जीवन में स्थान-स्थान पर हजारों आदर्श विवाहों का आयोजन कराया। आदर्श विवाह हमारे लिए इसलिये आवश्यक है कि हम विवाहों के अवसर पर होने वाले अपव्यय, बाह्याडम्बर और अनावश्यक रूढ़ियों और रीति-रिवाजों से बच सकें, समाज में धनी-निर्धन, ग्रामीण नागरिक आदि सभी गृहस्थों को समान स्तर पर लाया जा सके तथा अनेकानेक वर्तमान कुरीतियों से मुक्ति प्राप्त की जा सके। इस योजना के मूल में एक ही प्रेरणा गतिशील है कि आर्थिक विपन्नता के कारण आज जो व्यक्ति अविवाहित रह जाते हैं या कि जिनके विवाह सम्बन्ध अनेक कठिनाइयों के बाद विलम्ब से होते हैं, उन्हें राहत मिल सके। इसे जितना कम से कम खर्चीला बनाया जा सके, उतनी ही अधिक इसकी उपादेयता बढ़ेगी। सबके लिए अनुकरणीय यह इसलिए है कि जो व्यक्ति चाहे व्यक्तिगत रूप से अधिक व्यय भी कर सकते हों वे यदि आगे आकर समाज में इस प्रकार के आदर्श स्थापित करेंगे जिससे कि अनुकरण-प्रिय निरीह निर्धन जनता उन पर चल सके तो समाज इस हीनावस्था से निकल सकेगी।

स्व० बैरिस्टर साहब और उनके सहयोगियों के चिर प्रयत्नशील रहने के कारण आज समाज में इस योजना का बड़ा स्वागत हुआ और सामूहिक रूप से सम्पन्न होने वाले इन आदर्श विवाहों का व्यापक प्रचार हुआ। समाज ने इन विवाहों की आवश्यकता, सुरुचि-पूर्णता और सुविधात्मकता को हृदयंगम किया और इस पर अपनी मान्यता की छाप भी लगा दी।

बैरिस्टर साहब ने प्रायः सभी प्रमुख धार्मिक और सामाजिक उत्सवों पर, मेलों आदि में सामूहिक आदर्श विवाहों की योजना कराई। अन्य विशेष अवसरों पर भी इस प्रकार के आयोजन कराये जिनमें एक ही साथ एक ही मंडप में, एक ही समय एक ही व्यवस्था के अन्तर्गत अनेक वर वधुओं का शास्त्रोक्त विधि-विधान सहित पाणिग्रहण संस्कार हुआ।

बैरिस्टर सा० इस प्रकार के प्रगतिशीलता के कार्यों में सदा आगे रहे हैं। परिषद् ने १९५६ में अपने देवगढ़ अधिवेशन के अवसर पर सामूहिक आदर्श विवाह योजना के बारे में पूर्ण विचार-विमर्श के पश्चात् एक प्रस्ताव पास किया था और इसे कार्यान्वित करने के

लिए जो समिति बनाई गई थी उसके कार्यों का सम्पूर्ण भार उसके मंत्री श्री जमनाप्रसाद जी को ही सौंपा गया था। यों तो इस योजना का व्यापक प्रचार हुआ है किन्तु इस कार्य में बड़ी सावधानी के साथ अग्रसर होने की आवश्यकता है। प्राय: समाज सुधार के नामपर ढोंगी, बेईमान, ठग और धूर्त अपनी दुकानें कायम न कर लेते हैं। उनसे बचने की आवश्यकता है ताकि वे इस योजना के मूल उद्देश्यों और वास्तविकता को ही नष्ट न कर दें। बैरिस्टर साहब के जीवन व्यापी सतत्-प्रयत्नों और अथक परिश्रम से समाज ने आदर्श विवाहों की मौलिक महत्ता को तो स्वीकार किया ही, साथ ही इस योजना सफल बनाकर इसकी व्यवहारिकता और उपादेयता को भी सिद्ध कर दिया।

आज हमारा मान्य नेता तो हमारे बीच नहीं है जो हमारा मार्ग-दर्शन कर हमें रास्ता दिखाता चले। किन्तु उनके द्वारा प्रशस्त मार्ग और स्थापित मिशन हमारे सन्मुख है जिस पर हमें चलना है और समाज को चलाना है। स्व० बैरिस्टर साहब की यही सच्ची स्मृति होगी और यही वास्तविक श्रद्धांजलि।

लगन के धनी

— श्री राजेन्द्रकुमार जैन, विदिशा —

समाज में सुधार की बड़ी आवश्यकता है, यह सदैव बचपन से सुनता रहा हूँ, किंतु सौभाग्यवान हूँ कि सुधार करने में एक जीवन को लगा हुआ देखता और सुनता रहा हूँ। प्रगतिशील युग में समाज के कार्यों में प्रगति का समन्वय करने पर यदि किसी का कदम उठता मिला है तो भारत के इस मध्यभाग का एक-एक घर बोलेगा कि वह कदम बैरिस्टर सा० का था। समय के पूर्व ही उन्हें आभास जैसे मिल जाता था और कोई भी परिस्थिति हो काम करने को बाबू जी जुट जाते थे। शिक्षा की प्रगति, व्यर्थ के खर्चों से बचाना, पिछड़े भागों के होनहार नवयुवकों को आगे बढ़ाना, आडम्बरों आदि से समाज को बचाना, प्राचीन पुरातत्व की सुरक्षा करना आदि विभिन्न समय की समाज के लिए चाही गई बातों में सदैव अपने अन्तिम क्षणों तक जुटे रहने वाले इस लगन के धनी का ऋण क्या यह समाज कभी चुका सकेगा।

उनके जीवन के ३० वर्षों का सम्बन्ध मेरे परिवार से रहा है। जब भी मिला समाज सुधार का उनका भंडार सदैव भरा मिला। उनके जीवन के अन्तिम मास में ही वे विदिशा आये। हृदय रोग का दौरा स्टेशन पर ही आ गया। समाचार मिलने पर घर लाये। कुछ समय विश्राम किया और तुरन्त पुरातत्व के कार्य में बावजूद मना करने के लग गये और लगभग १५ मील के क्षेत्र में फैले पुरातत्व का भ्रमण कर डाला। समझाते समझाते रो दिया तो डांटने लगे कि तुम लोगों की लगन तो शायद समाप्त हो चुकी है। कैसे चुपचाप सभी देखते रहते हो। क्या कहता? केवल सोचकर रह जाता कि तुम्हारी लगन की लीला अधिक दिनों तक देखने के लोभवश ही तो तुम्हें अधिक श्रम करने से रोकता हूँ बाबू जी, पर तुम हो जो अपना जीवन नहीं समाज का जीवन देखने में लगे हो।

विगत ३० वर्ष पूर्व की स्मृति अपने पूज्य दादा जी श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्र जी से परस्पर चर्चा में जैसे मेरे २५ वर्ष के जीवन को भी दिखाई देने लगती है। इस काल का संम्पूर्ण इतिहास जिसका योगदान मेरी पवित्र जन्मभूमि विदिशा के इतिहास में बड़ा भारी है, ताजा हो जाता है। इस नगर की ३०,००० जनसंख्या और आस-पास के शिक्षा संस्थानों में एकमात्र श्रीमन्त सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्द्र जैन पारमार्थिक संस्थाओं का ट्रस्ट है और रहा

है जिसके अन्तर्गत शिशु मंदिर, माध्यमिक शाला, उच्चतर माध्यमिक शाला और महाविद्यालय जो बाल्यकाल से एम० ए० और एल-एल० बी० तक का अध्ययनन करा रहा है, आज सतत् क्रियाशील हैं। इसी ट्रस्ट के अधीनस्थ साहित्योद्धारक फंड का काम समाज का अमूल्य, दर्शनीय ग्रन्थ धवलराज षटखंडागम का प्रकाशन, समाज के निर्धन छात्रों को छात्रवृत्ति देकर शिक्षा सुलभ कराना आदि रहा है और वर्तमान में ट्रस्ट की इन विभिन्न संस्थाओं का बजट व्यय २८०७५० रु० सालाना है। इस ट्रस्ट के जन्म और सतत चेतन रहने में इस लगन के धनी का जो भाग रहा है वह इस ट्रस्ट के इतिहास में सदैव अमर रहेगा। इटारसी और भेलसा के भा० दि० जैन परिषद के अधिवेशनों में यदि स्व० जमना प्रसाद जी की दान कराने की धुन पूरी तरह जागरुक न होती तो सम्भवतः इस ट्रस्ट की इन २५ वर्षों की ये सेवायें आज समाज और इस नगर को प्राप्त न होकर इस क्षेत्र में बहुधा चलने वाले पंचकल्याणकों और रथों में व्यय हो जाती।

जैन समाज का इतिहास साक्षी है कि अनेक अवसरों पर लाखों रु० का दान सैकड़ों व्यक्ति कराते हैं और संस्थाओं को जीवित कर भूल जाते हैं कि उन्होंने कुछ किया था पर बाबू जी ने न केवल उक्त ट्रस्ट बल्कि सभी कार्यों को जिनका बीड़ा उठाया अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक सहारा दिया। उस ट्रस्ट के कार्यों को सुव्यवस्थित करने को वर्ष में २ बार उनका आना लगभग बना रहा। जब भी कोई तकलीफ लिखी उन्हें उसे पूरी करने की धुन पैदा हो गई। अनेकों स्मृतियां हैं जो इस ट्रस्ट और परिवार के साथ सदैव को अमर हो गई हैं। अपने बुजुर्गों के इस समूह की जिसमें पूज्य स्व० जमनाप्रसाद जी, स्व० राजमल जी बड़जात्या, बाबू तख्तमल जी भू० पू० मुख्य मंत्री भ० भा० शासन, पूज्य डा० हीरालाल जी और पूज्य पिता श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्र के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सबकी आदर्श सेवाओं पर विचार करता हूँ तो यही सोचकर रह जाता हूँ कि काश इन सभी के पृथक्-पृथक् गुणों का एक-एक अंश भी जीवन में समन्वय कर सकूं।

जीवन-मरण के उसूल में पूज्य बाबू जी का शरीर लोप हो गया है पर आज भी जीवित है उनकी लगन जिसके प्रमाण हैं उनके महान कार्य, महान सेवायें, महान संस्थायें जो सदैव उनके आदर्श विचार और लगन को हम नवीन पीढ़ी का पथ-प्रदर्शक बनाये रहेगी क्या जिक्र उनके अहसानों का जिनके हम ऋणी हैं और रहेंगे। केवल पर्याप्त होगा उनकी श्रद्धेय आत्मा को शांति प्रदान कराने में कि हम भी सही राह पर उनकी लगन की धुन अपने में पैदा करते रहें और उनकी श्रद्धा में अपने दो पुष्प समर्पित कर सकें।

बैरिस्टर साहब और शिक्षा प्रसार

— श्रीमती चन्द्रकुमारी जैन —

बैरिस्टर सा० को बचपन से ही शिक्षा से बहुत प्रेम था, इसलिए एक साधारण मध्यम वर्ग में जन्म लेकर भी ऊँची से ऊँची शिक्षा प्राप्त की। आर्थिक परिस्थिति अच्छी न होने पर भी उधार लेकर अपनी पढ़ाई समाप्त की और फिर नौकरी करके उधार लिया एक-एक पैसा चुका दिया। यही कारण था कि आप अपने बच्चों की पढ़ाई के बारे में भी बड़े सख्त थे और उन्हें ऊँची से ऊँची शिक्षा देना चाहते थे और दिलवाई भी।

आपको शिक्षा और विद्यार्थियों से बड़ा प्रेम था। विद्यार्थियों की आर्थिक कठिनाई को वे समझते थे, इसलिए उन्होंने सैकड़ों हजारों विद्यार्थियों को स्कालरशिपें (छात्र-वृत्तियाँ) दिलवाई, उनको बोर्डिंग हाउसों में रखवाया तथा उनकी फीस और पुस्तकों का स्वयं प्रबन्ध किया और करवाया। आपने सैकड़ों को नौकरी दिलवाई।

आपने समाज के श्रीमान् सेठों का पैसा धार्मिक रूढ़ियों के बदले शिक्षा के क्षेत्र में लगवाया। उन्होंने अनेक जगहों पर जैन हाई स्कूलों, मिडिल स्कूलों और प्राइमरी स्कूलों की स्थापना करवाई और अनेक जैन कालेज खुलवाये। भेलसा का जैन हाई स्कूल डिग्री कालेज बनकर लाखों विद्यार्थियों को शिक्षा का लाभ दे रहा है। मुंगावली का जैन टैक्नीकल कालेज भी अच्छी सेवा कर रहा है।

आपने कई जगह वाचनालय और पुस्तकालय भी खुलवाये। वहाँ स्वयं भी पुस्तकों का दान किया और धनवानों से करवाया।

उनके द्वारा किये गए ये सभी कार्य उनकी सच्ची यादगार हैं। उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यह होगी कि हम उनके द्वारा अपूर्ण छोड़े गए महत्कार्यों को पूरा करें। केवल इसी से उनकी आत्मा को वास्तविक शान्ति मिल सकेगी।

मेरे काका जी

— कुमारी शान्ता जैन, नागपुर —

जबलपुर में ६ जनवरी १९६० की शाम को मुझे पता चला कि पूज्य काका जी का देहान्त ४ ता० को हृदयगति के रुक जाने से हो गया है। मुझे इस बात पर विश्वास नहीं हुआ और होता भी कैसे, पंद्रह-सोलह दिन पूर्व नागपुर से जबलपुर रवाना होते समय, मैं उनका आशीर्वाद लेने उनके यहाँ गई थी। उस समय वे कमज़ोर और अस्वस्थ थे पर मुझे स्वप्न में भी यह आभास नहीं हुआ था कि इस महापुरुष के ये मेरे अन्तिम दर्शन हैं। मैं उनके स्नेह के बिना आज नागपुर में बड़ा सूनापन अनुभव करती हूँ।

आदरणीय काका जी को श्रद्धांजलि अर्पित करते समय मुझे बड़ा संकोच हो रहा है। इतने बड़े पुरुष के सम्बन्ध में, जिनके उच्च विचार और आदर्श मेरी अल्प और क्षुद्र बुद्धि के क्षेत्र के बाहर है, कुछ कहना मेरी ढिठाई है। पर उनके प्रति मेरी जो ममता है, मेरी जो श्रद्धा है, वह इस ढिठाई का मुझे साहस दे रही है।

प्रारम्भ से ही काका जी के प्रति मेरी अपार श्रद्धा रही है। उनका उन्मुक्त हास्य मुझे बहुत प्रिय था। आज भी उनका ठहाका सुनने के लिए मैं तरसती हूँ। कार्य के प्रति उनकी लगन देखकर मैं दंग रह जाती थी। कार्य-संलग्नता की प्रेरणा मैं उनसे लेती रही हूँ। चार-पांच वर्षों से वे अस्वस्थ रहते थे और हम सब उनसे विश्राम करने का आग्रह करते थे, पर काम के बिना उन्हें चैन नहीं पड़ती थी। प्रायः मरते समय तक वे कार्य करते रहे हैं। परहित और परसेवा में उन्हें पूर्ण आस्था थी और दूसरों को भी इस में आस्था रखने का वे उपदेश दिया करते थे।

वे स्वनिर्मित व्यक्ति थे। उन्होंने धन, यश, प्रतिष्ठा आदि जो प्राप्त की, अपनी प्रतिभा और गुणों के बल पर। उनका विश्वास था कि स्वावलम्बी होकर ही व्यक्ति अपना विकास कर सकता है। इसी कारण वे स्त्रियों को शिक्षित करके उन्हें अपने पैरों पर खड़े कर देने के पक्ष में थे। उनका बड़ा कुटुम्ब था। किसी न किसी की सहायता उन्हें सदैव करनी पड़ी। उनके आश्रित जो भी रहा, उसमें आश्रित रहने के कारण हीन भावना उन्होंने नहीं आने दी बल्कि उसे उचित शिक्षा-दीक्षा देकर स्वावलम्बी बना दिया और उसे स्वाभिमान से जीवन-निर्वाह करना सिखाया। उनके इस परोपकार से कई लोगों का जीवन बन गया और वे लोग आज भी श्रद्धा से उनका नाम लेते हैं।

उनकी यह कल्याण भावना सब के प्रति थी, व्यक्ति के प्रति भी और समाज के प्रति भी। दकियानूसीपन और अंधविश्वास के वे विरोधी थे। समय के साथ चलना वे जानते थे और अपने समाज को भी समय की गति के साथ चलाना चाहते थे। जैन समाज में आदर्श विवाह की प्रथा स्थापित करना, उनका इस दिशा में उठाया गया एक ठोस कदम था। जैन समाज के भीतर जो भेद-उपभेद पाये जाते हैं, उसके भी वे विरोधी थे। उनका यह प्रयत्न था कि जैन समाज इन तुच्छ भेद-उपभेदों को मिटा कर जातीय एकता की भावना को दृढ़ करें। उनमें सुधार कार्य करने का इतना उल्लास था कि कभी-कभी उनकी जल्दबाजी के कारण लोग उन्हें गलत समझ बैठते थे। समाज को अपने रुख में परिवर्तन करने में समय लगता है। अपने जीवन काल में यद्यपि वे इस दिशा में पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पाये पर मुझे विश्वास है कि धीरे-धीरे हम उनके आदर्शों का महत्त्व समझेंगे।

आज काका जी नहीं हैं। यह श्रद्धांजलि अर्पित करते समय 'आलम' के ये शब्द कानों में गूंज रहे है—

'जा रसना तें करी बहु बातन जा रसना सों चरित्र गुन्यौ करैं।
नैननि में जो सदा बसते तिनकी अब कान कहानी सुन्यौ करैं॥

जैन समाज और परिषद्

[श्री जमनाप्रसाद जी ने भा० दि० जैन परिषद के इटारसी अधिवेशन के अवसर पर १९३३ में प्रस्तुत अध्यक्षीय भाषण दिया था। इससे समाज सेवा और समाज सुधार पर उनकी बृहत् योजना और विचारों की महत्ता का ज्ञान होता है—सम्पादक]

माननीय ब्रह्मचारी गण, स्वागत समिति के अध्यक्ष महोदय और उपस्थित सभ्यगण !

आप लोगों ने मुझे अपना सभापति बनाकर जो सम्मान दिया है, उसके लिए मैं आपका हृदय से आभारी हूँ। इस उच्च पद के उत्तरदायित्व और अपने अल्पानुभव का विचार कर मुझे इस भार को स्वीकार करने में बहुत संकोच हुआ। किन्तु अपने को मैं समाज का एक सिपाही समझता हूँ और सिपाही का यह पहला कर्तव्य है कि जो भी भार उसे सौंपा जावे उसे स्वीकार कर उसे सफल बनाने का भरसक प्रयत्न करे। किन्तु इस बृहत् कार्य में सफलता बहुतायत से आप सबके सहयोग पर भी अवलम्बित है।

मेरा हृदय इस समय एक भारी शोक के आघात से व्यथित है। इस प्रान्त में हमारी समाज के एक कर्णधार और सुयोग्य कार्यकर्ता, दमोह निवासी श्रीयुत् गोकुलचन्द जी सिंघई का गत मास में ही हमसे अकस्मात् वियोग हो गया। सिंघई जी ने अपनी वकालत की योग्यता का जितना उपयोग स्वार्थ-साधन में किया यदि उससे अधिक नहीं तो उतना ही समाज हितैषी कार्यों में भी किया। परवार जाति आपकी अनेक सेवाओं से उपकृत हुई है। आपने प्रान्तीय लेजिस्लेटिव कौंसिल में मद्य निषेध और तमाखू नियन्त्रण के सम्बन्ध में जो कार्य किया है उससे सारा प्राँत परिचित है। इस समय भी कौंसिल के सन्मुख आपका वृद्ध विवाह निषेधक बिल प्रस्तुत है। न जाने अब उस उपयोगी बिल का उसके जन्मदातता के वियोग में क्या होता है ? उनके कुटुम्बीजनों के आश्वासनार्थ मैं केवल इतना कह सकता हूँ कि इस वियोग का दुःख हमारी समस्त समाज को है।

उन्नति की घुड़दौड़

प्रिय बन्धुओ ! यह युग सुधार और उन्नति का है। संसार आज बड़े वेग से आगे बढ़ रहा है। प्रतिवर्ष, प्रायः प्रति मास, विज्ञान अपूर्व और विलक्षण खोजों द्वारा मनुष्य समाज को चकित कर रहा है और दूसरी ओर भिन्न भिन्न देशों और राष्ट्रों की राज और समाज

व्यवस्था में घोर विप्लव दिखाई दे रहा है। उन्नति ! उन्नति ! हमारी उन्नति ! यह दुनिया की पुकार है। कई जन-समूह इस उन्नति की दौड़ में भाग ले रहे हैं, दूसरे इस दौड़ में प्रतिस्पर्धा से भाग न लेते हुए, इस विकट परिस्थिति में अपनी रक्षा के लिए समुचित उपायों का अवलम्बन ले रहे हैं। इनके अतिरिक्त एक तीसरा दल भी है जो इस दौड़ को भौंचक्का हुआ देख रहा है और अपने बचाव का कोई उपाय नहीं कर रहा है। इस दल का भाग्य विपदग्रस्त दिखाई देता है। सम्भव है वह उस दौड़ में चकनाचूर हो जावे।

प्राचीन काल में ऐसा ही हो चुका है। बड़े-बड़े साम्राज्य और बड़ी-बड़ी सभ्यताओं का समय और परिस्थिति के अनुकूल उपायों की अवहेलना के कारण सत्यानाश हो चुका है। वह पुरानी खाल्डिया और असीरिया की सभ्यता-शिष्टता आज कहां है ? गगनचुम्बी पिरैमिड बनाने वाले और मृत शरीर को अपने अनुपम कौशल से हजारों वर्ष तक सुरक्षित रख सकने वाले, जादू टोनों में प्रसिद्ध, मिश्र की राजश्री कहां विलुप्त हो गई ? उत्तम कला और विज्ञान के जन्मदाता यूनान का वैभव अब किधर है ? राज्य, समाज और धर्म की व्याख्या के अच्छे अच्छे नियम बनाने वाले रोम के विशाल साम्राज्य को कौन खा गया ? बिल्कुल कल की ही बात है परमेश्वर की स्पर्धा करने वाले मुगल दिल्लीश्वर कहां चले गए ? रूस के जार का अब भोग विलास कहां है ? ये सब काल के गाल में विलीन हो गए। कारण ? कारण एक ही है कि उन्होंने समय और परिस्थिति में परिवर्तन के अनुसार अपने ढंग नहीं बदले।

इस समय हमारे सन्मुख जैन धर्म को रक्षित रखने तथा जैन समाज को सुदृढ़ और सुव्यवस्थित बनाने का कठिन प्रश्न उपस्थित है। जिनके आँखें हैं वे देख रहे हैं, जिनके कान हैं वे सुन रहे हैं कि समाज में धार्मिक श्रद्धा की पुरानी नींव डगमगा रही है, सामाजिक बन्धनों की ईंटें शिथिल होकर गिर रही हैं, अन्धविश्वासों की कलई उड़ गई है। क्या अब सारे भवन को जर्जरित होकर गिर पड़ने तक हम इसी प्रकार सुस्त बैठे हुए अपने पूर्व यश के गीत गाते रहेंगे ? क्या उस उन्नति की घुड़ दौड़ में हम अपने को कुचलवा लेंगे ? यदि नहीं तो समाज के सन्मुख जो समस्यायें उपस्थित हैं, उन्हें उचित रूप से शीघ्र हल करने के उपायों पर विचार कीजिए।

जैन कालेज

हमें सबसे भारी आवश्यकता इस बात की है कि हमारे समाज के नवयुवक हमारी पुरानी सभ्यता और शिष्टता का अध्ययन करें और उसके साथ ही साथ संसार की वर्तमान शक्तियों को समझकर अपने गौरव को कायम रखने के समुचित उपायों का अवलम्बन करें। इसके लिए हमें समाज में उच्च शिक्षा की सुदृढ़ योजना की आवश्यकता है। एक जैन कालेज को स्थापित करने की पुकार स्वयं परिषद में बहुत दिन से लगी हुई है। मेरे पूर्व के सभापति महोदयों ने भी अपने-अपने भाषण में इस आवश्यकता का उल्लेख किया है। हर्ष की बात है कि इस प्रश्न को हमारे पूज्य वर्णी पंडित गणेशप्रसाद जी न्यायाचार्य ने अपने हाथ में लिया है और श्री पं० दीपचन्द जी वर्णी भी इस कार्य में उनके साथ हैं। ये तीनों त्यागी एक कालेज की स्थापना कराने का आज सात-आठ माह से भरसक प्रयत्न कर

रहे हैं। यह खेद की बात है कि अभी तक समाज की ओर से उन्हें कोई सन्तोषजनक उत्तेजना नहीं मिली।

हाल ही में जैन मित्र में कुछ समाचारों से यह ज्ञात हुआ कि कुछ लोग यह भ्रम फैला रहे हैं कि सुधारक दल के प्रमुख व्यक्ति कालेज स्थापित किये जाने के विरुद्ध है। यह उक्ति मुझे उतनी ही युक्ति संगत दिखती है जितना यह कहना सुधारक दल सुधार के विरुद्ध है। इस भ्रम के उत्पादकों का यह प्रयत्न अत्यन्त निन्दनीय है। कोई सुधारक अपनी इस चिर इच्छित वस्तु की प्राप्ति में बाधक हो ही कैसे सकता है ? किन्तु यह बात अवश्य है कि जब तक किसी संस्था की स्थापना के सम्बन्ध की पूरी स्कीम किसी के सन्मुख न हो तब तक उसके सम्बन्ध में अनेक भ्रम और शंकाओं का उत्पन्न होना अस्वाभाविक नहीं है। दुर्भाग्यतः जैन कालेज की अब तक कोई स्कीम जनता के सन्मुख नहीं रखी गई जिसमें यह स्पष्ट किया गया हो कि उसका शिक्षा क्रम व उसका प्रबन्ध क्रम क्या होगा। वर्तमान कालेजों से उसमें क्या विशेषता होगी तथा वह कहां स्थापित किया जायेगा। मेरी समझ में इस बात का पूर्ण विवेचन एक कमेटी द्वारा जब तक न हो जाये तब तक अनेक प्रकार की शंकाओं और झूठे अपवादों को स्थान बना ही रहेगा।

जैन बोर्डिंगों में ऐक्य की आवश्यकता

जैन संस्थाओं में एक भय बना रहता है कि वे बहुत संकीर्ण विचारों की पोषक हो जाया करती हैं। मेरी समझ में हमें ऐसी शिक्षा संस्थाओं की आवश्यकता बिलकुल नहीं है जो जैन समाज में जाति-पांति भेद की संकीर्णता विद्यार्थियों के हृदय में उत्पन्न करे। मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि इस प्रांत में "जैन बोर्डिंग" नामधारी संस्था भी इस सकीर्णता से युक्त नहीं है। जो लोग इस प्रांत के निवासी हैं वे कदाचित् समझते होंगे कि अछूत और दलित केवल हिन्दू समाज में हैं जैन समाज में नहीं। पर यहाँ जैनियों में भी अछूत और दलित विद्यमान हैं। उन्हें जैन बोर्डिंग में नहीं रखा जा सकता। उन्हें मन्दिरों के दर्शन नहीं करने दिये जा सकते। हिन्दू समाज के अछूत और दलित दल ने घोर आन्दोलन खड़ा कर दिया है किन्तु जैन समाज के अछूतों ने अभी ऐसा नहीं किया है। गूढ़ विचार करने पर मुझे भय होता है कि यह शांति और संतोष का सूचक नहीं किन्तु समाज में एक आगामी भयंकर तूफान का चिन्ह है। इस दल के हृदय में धीरे-धीरे इस जाति अभिमान के प्रति ऐसी घृणा उत्पन्न हो रही है जो किसी दिन समाज को बहुत हानिकारक होगी। ऐसे बोर्डिंग को जैन बोर्डिंग नहीं किंतु एक जाति विशेष के बोर्डिंग कहना चाहिए। जिस जैन मन्दिर में एक जैनी का प्रवेश नहीं वहां कभी किसी तीर्थंकर की प्राण प्रतिष्ठा हो नहीं सकती। वह असल में जैन मन्दिर है ही नहीं। ऐसी शिक्षा संस्थाओं और धर्म संस्थाओं के होने से उनका न होना लाख दर्जे अच्छा है। इनमें जैन धर्म और समाज की उन्नति तो हो ही नहीं सकती, बड़ी भारी अवनति होती है। हमें ऐसी संस्थाओं की आवश्यकता है जहां समस्त जैनी अपने को एक समझें, पूर्ण प्रेम और समानता का वर्ताव रखें।

जैन साहित्य का प्रकाशन

एक भविष्य वाणी है कि पंचम काल में जैनधर्म लुप्त हो जावेगा। मेरी भावना है कि यह वाणी असत्य सिद्ध हो। किन्तु यदि यह सत्य भी सिद्ध हो जावे तो केवल जैनधर्म के अनुयायियों के सम्बन्ध में ही सिद्ध होगी। जैनधर्म को इसके वर्तमान रूप में मानने वालों की संख्या भले ही क्षीण हो जावे, किन्तु मुझे दृढ़ विश्वास है कि जैन तीर्थंकरों और आचार्यों का जो शासन है, वह कभी लुप्त नहीं हो सकता। वह शासन जिन ग्रंथों में आरूढ़ है, जिन भाषाओं में ग्रथित है, वे चिरकाल तक जीवित रहेंगी और संसार में सदैव उनका आदर करने वाले विद्वान होंगे। इस दृष्टि से मैं प्राचीन जैन साहित्य के प्रकाशन कार्य को विशेष महत्व देता हूँ। वह समय दूर नहीं गया जब हमारी समाज में धार्मिक ग्रंथों के छपाने का एक ओर से विरोध किया जाता था। हर्ष की बात है कि वह अब मृतप्राय हो चुका है और हमारा बहुत सा धार्मिक साहित्य प्रकाश में आ गया है। इस क्षेत्र में भारी साहित्य सेवा करने वाले इस प्रांत के एक उज्ज्वल रत्न श्रीयुत नाथूराम जी प्रेमी का मुझे इस समय स्मरण आये बिना नहीं रहता। आपने जैनग्रन्थ रत्नाकार कार्यालय द्वारा और फिर माणिकचन्द ग्रंथमाला द्वारा अनेक ग्रन्थ-रत्नों का उद्धार किया है। बहुत दिनों से आप अस्वस्थ हैं तथापि अपने स्वास्थ्य और आराम का ध्यान न कर आप साहित्य सेवा में ही संलग्न बने रहे हैं। हालही में कुछ मास पूर्व इस वृद्धावस्था में आपको पत्नी वियोग का कठिन दुःख सहना पड़ा है। इससे स्वास्थ्य और भी टूट गया है। इस समय भी आप इतने रोगग्रस्त हैं कि इस अधिवेशन में हमें आपकी उपस्थिति और परिपक्व अनुभव का लाभ नहीं मिल सका। हमारी यह हार्दिक भावना है कि आपको शीघ्र ही आरोग्य लाभ हो ताकि आप पूर्ववत् और अधिक साहित्य सेवा कर सकें।

आरा निवासी श्रीयुत् देवेन्द्रकुमार जी ने Sacred Books of the Jainas नामक सीरीज़ द्वारा जैन ग्रंथों को अंग्रेजी अनुवाद सहित प्रगट करने का जो उपक्रम प्रारम्भ किया था वहजैन साहित्य के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा। अत्यंत खेद की बात है कि इस सीरीज़ के जन्मदाता का नई उमर में ही अकस्मात परलोकवास हो जाने से वह सीरीज़ बन्द हो गई थी किन्तु हर्ष है कि नवयुवक समाज के प्रिय नेता तथा तीर्थ रक्षा के सम्बध में धर्म की अनुपम सेवा करने वाले पंडित अजितप्रसाद जी एडवोकेट के प्रयत्न से वह अत्यन्त उपयोगी सीरीज अब फिर चालू हो गई है। मुझे यह प्रगट करते हुए बहुत आनन्द होता है कि दो और महत्वपूर्ण ग्रंथमालायें हाल ही में इसी प्रांत के एक भाग—बरार में स्थापित हुई हैं। आप में से बहुत सज्जन कदाचित जानते ही होंगे कि अकोला जिले के अन्तर्गत कारंजा नगर में दिगम्बर सम्प्रदाय के तीन गण चार पांच सौ वर्षों से प्रतिष्ठित हैं।

इन गणों के अधिकार में एक-एक शास्त्र भंडार भी हैं जिसमें हजारों प्राचीन ग्रंथ रक्षित हैं। जब सन् १९२४ में प्रांतीय सरकार की ओर से इस प्रांत के संस्कृत-प्राकृत ग्रंथों की सूची तैयार करने का कार्य प्रारम्भ हुआ तब इन ग्रंथों का परिशीलन हमारे बन्धु श्रीयुत

प्रो० हीरालाल जी ने किया। उस समय आप इलाहाबाद यूनीवर्सिटी में खोज का काम और जैन साहित्य के इतिहास का विशेष रूप से अध्ययन कर रहे थे। उक्त ग्रंथों की सूची इस प्रांत के प्रकाण्ड विद्वान रायबहादुर हीरालाल जी के सम्पादकत्व में सरकार की ओर से प्रकट हो चुकी है। एक ही हीरा या लाल बहुत मूल्यवान होता है फिर दो हीरा लालों के सहयोग का पूछना ही क्या है। इन विद्वानों के प्रयत्नों से कारंजा में सैकड़ों वर्षों से छिपी हुई जैनियों की साहित्य सम्पत्ति का ज्ञान संसार को हो गया। इन भंडारों में कुछ ग्रंथ ऐसे मिले हैं जो भाषा की दृष्टि से बड़े ही महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। सन् १९२५ में श्रीयुत हीरालाल जी, अमरावती कालेज में प्रोफेसर नियुक्त हो गये और अपने उक्त मूल्यवान साहित्य को प्रकाशित कराने का प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया जिसके फलस्वरूप कारंजा से दो ग्रंथमालायें निकलना प्रारम्भ हो गई हैं। उनमें से एक ग्रंथमाला की स्थापना के लिए कारंजा निवासी श्रीयुत गोपाल अम्बादास जी चवरे ने अपने स्वर्गीय पूज्य पिता जी की स्मृति में बीस हजार रुपये का ध्रुवफंड प्रदान किया है। ऐसे आर्थिक संकट के समय में इतना सुन्दर दान देने के लिए समाज उक्त सेठ जी का बहुत आभारी है। ऐसे ही दाताओं की धर्मबुद्धि पर समाजोन्नति की आशा की जा सकती है। ऐसी लक्ष्मी सफल है जो चिरस्थायी धर्म सेवा में व्यय हो। इन ग्रंथमालाओं में अब तक पांच ग्रन्थ छप चुके हैं।

इन ग्रंथों को तैयार करने में और छपाने में हमारे बन्धु प्रोफेसर हीरालाल जी ने जो अनुपम परिश्रम किया है, इसका अनुमान उन ग्रंथों के अवलोकन से तथा उनपर पूर्व और पश्चिम के अनेक विद्वानों और पत्र-पत्रिकाओं द्वारा प्रकाशित अभिप्रायों को देखने से ही किया जा सकता है। उनकी उत्तमत्ता इसी से सिद्ध है कि जहां जैन ग्रंथों को वर्षों के प्रयत्नों से भी यूनिवर्सिटी के पठन क्रमों को भरती नहीं कराया जा सका वहां ये ग्रंथ सहज ही विभिन्न परीक्षाओं के लिए स्वीकृत हो चुके हैं। हीरालाल जी ने और भी अनेक भंडारों का अवलोकन करके जैन साहित्य के अनेक उत्तमोत्तम ग्रंथों का पता लगाया है। आपने इस समस्त साहित्य को सुन्दर और विद्वत्तापूर्ण रीति से प्रकाशित कराने के आयोजन की जो स्कीम उपस्थित की है, वह अवश्य कार्य में परिणत की जानी चाहिए। इस प्रकार के साहित्य प्रकाशन से संसार को जैनधर्म का जो परिचय मिलता है और उससे जो यश होता है वह अन्य प्रकार लाखों रुपये खर्च करने से भी नहीं हो सकता। हीरालाल जी की विज्ञप्ति में आये हुए निम्न शब्दों पर विचारकों को ध्यान देना चाहिए :—

"प्राचीन प्रतिमायें खंडित हो जाने पर नई प्रतिष्ठित हो सकती हैं, पुराने मंदिर जीर्ण होकर गिर जाने पर उनकी जगह नए खड़े किए जा सकते हैं। धर्म के अनुयायियों की संख्या कम होने पर कदाचित प्रचार द्वारा बढ़ाई जा सकती है, किन्तु प्राचीन आचार्यों के जो शब्द ग्रन्थों में ग्रथित हैं, उनके एक बार नष्ट हो जाने पर उनका पुनरुद्धार होना असम्भव है। जैनधर्म का इतिहास लिखा जाना अभी तक बाकी है किन्तु जब तक हमारे पूर्वजों की कृतियां सात तालों में बन्द हैं तब तक उनकी कीर्ति में कैसे कुछ प्रमाणिक रूप से कहा जा सकता है।"

जैन कला भवन की आवश्यकता

यदि इस युग में अपनी संस्कृति का अच्छा परिचय विद्वत्संसार को देना चाहते हैं तो हमें एक जैन कला भवन खोलना चाहिये, जहाँ जैनियों का प्रकाशित व अप्रकाशित साहित्य और मूर्तियां, चित्रकारियाँ आदि कला-कौशल के नमूनों का यथाशक्य संग्रह किया जाये और ये प्रदर्शन रूप में रखे जावें। इस दिशा में आरा निवासी स्वर्गीय श्री देवेन्द्रकुमार जी ने जैन सिद्धान्त भवन स्थापित करके समाज का उपकार किया है और उनके सुपुत्र श्री निर्मलकुमार जी भी उसकी रक्षा का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। यदि उसको बढ़ाकर एक आधुनिक कला भवन का रूप दे दिया जावे तो अच्छा हो। इसी कला भवन के साथ जैन साहित्य और इतिहास की खोज के कार्य की आयोजना की जा सकती है।

विदेशों में धर्म प्रचार

जैन धर्म प्रारम्भ से प्रचारक धर्म रहा है। इस रूप की रक्षा के लिए हमें विदेशों में भी शक्ति भर इसका प्रचार करना चाहिये। इंग्लैंड में जैन लिटरेचर सोसायटी स्थापित कराने का श्रेय स्वर्गीय श्री जुगमन्दरलाल जी जैनी को है। आपको विदेश में धर्म प्रचार का कितना प्रेम था यह इसी से सिद्ध है कि अपनी प्रायः सारी सम्पत्ति वे इसी प्रकार के धर्म कार्यों के लिए प्रदान कर गये हैं।

खेद है कि लगातार कार्यकर्त्ताओं के अभाव में उक्त सोसायटी का प्राय लोप सा हो गया था। अब श्रद्धेय बैरिस्टर चम्पतराय जी के प्रयत्न से इंग्लैंड में पुनः जैन धर्म का दीपक प्रज्वलित हो गया है। आपने इस वृद्ध अवस्था में धर्म प्रचार के लिये अमेरिका व यूरोप के भिन्न-भिन्न देशों का पर्यटन किया है और जहाँ जैसा अवसर मिला जैन धर्म के प्रचार का वहाँ वैसा बीज बोया है।

लंदन में बैरिस्टर साहब के कार्य को मुझे स्वयं अपनी आंखों से देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं आशा करता हूँ कि बैरिस्टर साहब का बोया हुआ बीज अंकुरित होकर फले फूलेगा और उसकी रक्षा करने वाले योग्य विद्वान हमारी समाज से सदैव निकलते रहेंगे।

दिगम्बर मुनि

यह तो हुई जैन शिक्षा, साहित्य, कला और विदेशों में प्रचार की बातें। अब हमें अपने परिवार संगठन के सम्बन्ध में भी विचार करना चाहिये क्योंकि आखिर सब उन्नति का मूल तो उन्नति कर्त्ताओं के सुसंगठन पर ही निर्भर है। हमारे तीर्थकरों ने चार संघों की रचना की थी—मुनि, अर्जिका, श्रावक और श्राविका। खेद की बात है कि इन संघों में आज अनेक त्रुटियां दिखाई दे रहीं हैं। कुछ ही वर्ष पूर्व कहने को यह बात थी कि दिगम्बर मुनि अब आजकल नहीं रहे। यदि कोई पूछता था क्यों ? तो हम कह देते थे कि हमारे सम्प्रदाय के मुनि होने के लिये इतने उच्च संयम और ज्ञान की आवश्यकता है कि वह साधारण व्यक्तियों के लिये असाध्य है। अब कुछ वर्षों से दिगम्बर

मुनियों के दर्शन भी हमें सुलभ हो गये हैं। किन्तु इन महापुरुषों से समाज की शिष्टता और सद्विचार पर एक उन्नति कारक प्रभाव पड़ना चाहिये था किन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि परिणाम इससे विपरीत ही दृष्टिगोचर हो रहा है। मैं इतना अंधविश्वासी नहीं हूँ कि इस सम्बन्ध के जो समाचार प्रगट होते हैं उन सब पर विश्वास कर लूं। पर इतना अवश्य सिद्ध है कि मुनि महाराजों का आचार और ज्ञान जिस दर्जे का चाहिये उस दर्जे का नहीं है। श्रावक समाज में ऐक्य और महानता का उपदेश मुनियों को उचित है, पर हमारे दुर्भाग्य से हमारे मुनि स्वयं अपने संघ के 'बीच में शिष्टता नहीं रख सकते और श्रावक संघ में तो उनके द्वारा और अनैक्य ही फैल रहा है। सम्भव है यह दोष हमारे श्रावक भाइयों का ही हो। वे मुनियों को अपने व्यक्तिगत झगड़ों में खीचकर उनके पदों को धक्का पहुँचाते हें। पर हमें या तो अपने मुनि पद की रक्षा के लिये उन्हें हमारे झगड़ों और दल बंदियों के परे रखना चाहिए या फिर मुनियों की ही आवश्यकता न रखनी चाहिए। उच्च पद तक न पहुँच पाना बुरा नहीं है, किन्तु उच्च पद की धारणा करके या उसका स्वांग बनाकर उसे दूषित करना घोर पातक है। यह हमारी स्त्री समाज की सद्बुद्धि का उदाहरण है कि उन्होंने अभी तक बहु संख्या में अर्जिका वेष बना कर उस पवित्र पद को दूषित नहीं किया।

अन्तर्जातीय विवाह

हमारे श्रावक संघ में 'संघता' के स्थान में पर असंघता ही हमें विशेष रूप से दिखाई देती है। सारी समाज छोटी-छोटी टुकड़ियों में छिन्न-भिन्न है जो अपनी-अपनी ढपली और अपना-अपना राग अलापती है। कहने को सब एक धर्म के एक आचार-विचार के पालक हैं पर सच्ची आपसी बातों में वे एक दूसरे से उतने ही अलग हैं जितने भिन्न धर्मी व्यक्ति। उनके बीच अन्तर्विवाह तो नहीं होते पर सहभोज में भी उन्हें भारी संकोच होता है। ऐसे संकीर्ण हृदयों को लेकर कहीं ठोस समाज निर्मित हो सकता है? हम में इस भेद सहित कभी सच्चा परस्पर प्रेम नहीं बढ़ सकता। अन्तर्जातीय विवाह की आवश्यकता पर मेरे पूर्व प्रायः सभी सभापतियों ने जोर दिया है, अनेक बार प्रस्ताव भी पास हो गये हैं शास्त्रीय वाद-विवाद भी खूब हो चुका है और कितने ही समझदार 'पंडित' भी अब सुधार के अनुकूल हो गये हैं किन्तु तो भी इसकी अमली कार्यवाही प्रायः नहीं के बराबर है। सज्जन मुझे क्षमा करेंगे यदि मैं इस विषय पर कुछ उत्तेजित होकर कहूँ कि इस असफलता की जिम्मेदारी सुधारक दल पर ही है। जो सज्जन इस विषय का जी से प्रतिपादन करते हैं और प्रस्ताव लाते हैं वे भी स्वयं अवसर पड़ने पर उनके अनुकूल कार्य नहीं करते। यह हमारी कमजोरी है, भीरुता है। ऐसे सुधारक कहलाने वालों से वे स्थिति पालक ही अच्छे हैं जो न कहते हैं न करते हैं। मैं अपने सहयोगी नवयुवकों से प्रेरणा करता हूँ कि यदि वे अन्तर्जातीय विवाह के सच्चे पक्षपाती हैं तो यह प्रण करें कि अपने कुटुम्ब में भी जहाँ उनकी जिम्मेदारी है, अन्तर्जातीय विवाह ही करेंगे। छोटे-मोटे व्यक्तियों को पहले इस कार्य में ढकेलना अन्याय है। उन्हें स्थितिपालक दल सहज ही कुचल डालता है और इस प्रकार उन उदाहरणों से इस आन्दोलन में लाभ के स्थान पर हानि होती है। पढ़े-लिखे और धनी लोगों को भी प्रथम इस दिशा में पैर बढ़ाना चाहिए।

बाल विवाह, वृद्ध विवाह और कन्या विक्रय

हर्ष की बात है कि जिस कुप्रथा को रोकने के लिए हम वर्षों से प्रयत्न कर रहे थे उसके विरुद्ध अब हमें एक अच्छे राज कानन का शस्त्र भी मिल गया है। हमें प्रत्येक नगर और ग्राम में ऐसी एक कमेटी बना देना चाहिए जो बाल विवाह को रोकने के लिये शारदा एक्ट की सहायता लेवे और इस दिशा में लोगों को शिक्षित भी करती रहे। वृद्ध-विवाह रोकने के अभिप्राय से हमारी प्रांतीय लेजिस्लेटिव कौंसिल के सम्मुख, जैसा मैं ऊपर कह आया हूँ, हमारे स्वर्गीय सिंघई गोकुलचन्द जी का बिल अब रद्द समझा जावेगा, किन्तु किसी अन्य समाज हितैषी मेम्बर को यह कार्य अपने हाथ में लेना चाहिये। मैं तो यह चाहता हूँ कि इस प्रकार का कोई कानून शारदा एक्ट के समान असेम्बली में पास हो। बाल-विवाह और वृद्ध विवाह के रुकने से कन्या विक्रय की जड़ भी बहुत कुछ कट जायगी। किन्तु इस दूषण के मूल में एक भारी समस्या है जिसके कारण इसकी बाहरी नियंत्रणों द्वारा, समुचित रोक होना असम्भव है। यह व्यापारी नियम है कि जहाँ ग्राहकों की संख्या ग्राह्य वस्तु से अधिक है वहाँ उस वस्तु का मूल्य चढ़ जाता है। यह प्रगट सत्य है कि हमारे समाज की प्रायः सभी जातियों में लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की संख्या बहुत कम है। उदाहरणार्थ परवार जाति में सन् १९२४ में छपी डायरेक्टरी के अनुसार विवाह योग्य पुरुषों की संख्या १३३११ और कुमारियों की ६७०२ अर्थात् उम्मीदवारों से लगभग आधी थी। आज की स्थिति भी इससे बहुत भिन्न होगी। जो मां बाप आर्थिक संकट में हैं वे इस परिस्थिति से कुछ लाभ उठा लेवें तो इसमें आश्चर्य क्या है? बात बहुत बुरी है, पर उसको रोकने का कोई सरल उपाय नहीं है। यदि इस प्रश्न की जड़ में बैठकर विचार करें तो ज्ञात होता है कि इस कठिन परिस्थिति को उत्पन्न करने का बहुत कुछ उत्तरदायित्व स्वयं हमारे ही ऊपर है। सृष्टि में सब प्राणियों में उपज की दृष्टि से स्त्री जाति की संख्या ही अधिक दिखाई देती है।

यूरोप के प्रायः सब राष्ट्रों में और इस देश की भी कुछ समाजों में स्त्रियों की संख्या ही अधिक है। हमारी समाज अन्य मनुष्य समाजों से कुछ ऐसी विलक्षण नहीं है कि उसमें प्रकृतितः यह नियम बदल जाता हो। यथार्थतः स्वयं उपर्युक्त डायरेक्टरी से यह सिद्ध होता है कि बचपन में लड़कियों की संख्या विशेष रहती है। पर लड़कियों की अकाल मृत्यु लड़कों से अधिक होती है जिसका कारण लड़कियों के प्रति हमारी उदासीनता और लापरवाही है। यह हमारा बड़ा अन्याय है। एक और कारण यह भी है कि जो स्त्रियां विधवा हो जाती हैं वे ब्रह्मचारिणी रखी जाती हैं किन्तु जो पुरुष विधुर हो जाते हैं वे फौरन फिरसे कुमारियों के उम्मीदवार बन जाते हैं। इस प्रकार हमने प्रकृति के नियमों को अपने नियमों द्वारा उलट-पुलट कर कन्या विक्रय की बुरी प्रथा के लिये अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न कर ली है और फिर उसे अस्वाभाविक बंधनों द्वारा रोकने का यत्न कर रहे हैं।

विधवाओं का प्रश्न उठाते ही हमारे समाज में एक उथल-पुथल मच जाती है और उस क्षोभ में खेद है कि इस भारी प्रश्न पर कोई समुचित विचार नहीं हो पाता। इस विषय

पर खूब लिखा पढ़ा जा चुका और वाद-विवाद भी हो चुके। जिनका विधवा विवाह के पक्ष में दृढ़ सिद्धांत है वे उसकी अमली कार्यवाही भी कर रहे हैं। जो उसके विरुद्ध दृढ़ श्रद्धानी हैं वे धर्म समझ कर शायद अपने मन में सुखी हैं। सबसे बुरी और शोचनीय अवस्था उन शिथिल बुद्धि वालों की है जिनका हृदय एक ओर है और हाथ दूसरी ओर। यह हमें ध्यान में रखना चाहिये कि विधवा-विवाह का निषेध भारतवर्ष के एक छोटे जनसमुदाय को छोड़ कर संसार में और कहीं नहीं है। यह बात नहीं है कि विधवा विवाह निषेध में बुराइयां ही बुराइयां हैं और निर्बन्ध हटाने में भलाइयां ही भलाइयाँ। किन्तु मेरी समझ में इस प्रश्न पर शब्द-शास्त्र की अपेक्षा प्राणी शास्त्र के नियमानुसार विचार करना उचित है। आज विद्वत्संसार के सम्मुख स्त्रीत्व और पुरुषत्व का अध्ययन भी एक भारी विज्ञान है और इस विज्ञान का दर्जा आज अन्य सब विज्ञानों से ऊंचा उठ रहा है। अंग्रेजी में इस विषय के वैज्ञानिक विवेचन पर सैकड़ों ग्रंथ लिखे जा चुके हैं। स्त्री-पुरुष सम्बन्धी नियमों को समझाने के लिये हमारे स्थितिपालक और सुधारक दोनों दलों के सज्जनों को इस विषय का अध्ययन करना चाहिये। बिना स्त्री और पुरुष की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को समझे, कोरे शब्द शास्त्र द्वारा इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर विचार करने वाले नीम हकीमों से इस भीषण रोग का उपचार नहीं हो सकता।

समाज के सम्मुख इस समय जो समस्याएं उपस्थित हैं उनमें से कुछ पर मैंने ऊपर विचार किया है। इनके अतिरिक्त और अनेक प्रश्नों का संकेत और विवेचन मेरे पूर्व दो अधिवेशनों के सभापति डा० लक्ष्मीचंद जी और साहू जुगमंदिरदास जी के भाषणों में वर्तमान हैं। अब हमें आवश्यकता है एक ऐसे नवयुवक संघ की जो अपने सुधारक विचारों के अनुकूल कार्य करने को तत्पर हो। अब हमें वे प्रस्ताव पास करना चाहिये जिनकी अमली कार्रवाई हम बहुत शीघ्र ही करके दिखा सकते हैं। इस अमली कार्रवाई का निश्चय अधिवेशन में ही हो जाना चाहिये।

इस सभापति के पद को प्रदान कर आपने जो मेरा आदर किया है उसके लिए मैं पुनः एक बार हार्दिक धन्यवाद देकर अपना भाषण समाप्त करता हूँ।



परिषद् के तत्वावधान में ११ फरवरी १९५६ को नई दिल्ली में आयोजित तात्त्विक आदर्श विवाहों का दृश्य जिसमें बैरिस्टर साहब के सुपुत्र कैप्टन राजेन्द्रकुमार का शुभ विवाह, राजकुमारी (सुपुत्री श्री हंसकुमार जैन, मंत्री, परिषद्) के साथ सम्पन्न हुआ था। इस अवसर पर श्री अनन्तशयनम् आयंगर, अध्यक्ष, लोकसभा, अन्य संसद् सदस्य, नेतागण और हजारों की संख्या में जनता उपस्थित थी।



१९५४ में सागर में बैरिस्टर साहब इष्ट मित्रों सहित ।

आदर्श विवाह-पद्धति महान् क्रान्ति है

(स्व० बैरिस्टर साहब एक महान् क्रान्तिकारी समाज सुधारक रहे हैं। अपने मिशन को आगे बढ़ाने के सिलसिले में जब और जहाँ आवश्यकता पड़ी, आपने समय-समय पर अनेक लेख, पत्रादि लिखे हैं। यहाँ आपके द्वारा प्रणीत साहित्य का कुछ अंश प्रस्तुत किया जा रहा है। —सम्पादक)

आदर्श विवाह

मुझे यह देखकर हर्ष होता है कि अब सामूहिक विवाहों की चर्चा लोक-प्रिय हो रही है और उसकी उपयोगिता लोगों की समझ में आ रही है। यों तो लेख में या व्याख्यान में खुद के बारे में बोलना असभ्यता समझी जाती है, पर मैं अपने ऊपर बीती हुई सुनाकर लोगों को आगाह कर देना चाहता हूँ और अपने अनुभवों का फायदा आम जनता को देने का प्रयत्न करूँगा।

विवाह विधि में सुधार की कल्पना

मेरे बहनोई की परिस्थिति साधारण थी और उनके लड़के-लड़कियों व दूसरे रिश्तेदारों के बच्चों की शादियों को सम्पन्न कराने की जिम्मेदारी सीधी मुझ पर आ पड़ी। मेरी ऐसी आर्थिक परिस्थिति नहीं थी कि मैं सबको अपने खर्चे से या अपनी विपन्न आर्थिक परिस्थिति की हालत में कर देता। प्रायः संक्षेप में इन संबंधों को इस तरह निपटाना पड़ा।

हमारे बुंदेलखंड में नेवता[1] खुद घर-घर जाकर व रिश्तेदारों के गांव जाकर देना पड़ता है और मेहमानों को महीनों या हफ्तों पहले से लाकर इकट्ठा करना पड़ता है। मैंने इस व्यक्तिगत निमंत्रण का अन्त किया और पत्रों से निमंत्रण देना शुरू किया। जो आत्मीय हैं, सच्चे हितैषी हैं और जो केवल मान के भूखे नहीं हैं, वह तो अवश्य ही आये और जो झूठे अभिमानी थे या जिनका प्रेम दिखाऊ या औपचारिक था, वे नहीं आये। किन्तु यह बात दोनों पक्षों को लाभदायक सिद्ध हुई। दूसरों को खर्चा नहीं देना पड़ा। पहिले तो इस बात की काफी मखौल उड़ी, पर अब ज्यादातर लोग इसी तरीके पर अमल करने लगे हैं। पहले रिश्तेदारियां नजदीक हुआ करती थीं और लोगों को फुरसत ज्यादा थी, किन्तु

१. यह बुन्देली भाषा का शब्द है जिसका अर्थ होता है निमंत्रण।

अब शादियाँ भारस्वरूप प्रतीत होने लगी है। इस तरह यू० पी० में भी यदि कोई औपचारिक रीति-रिवाज हो, तो उसे बन्द करने से बहुत अनावश्यक खर्च कम हो सकता है। मिठाई व कपड़े ज़रूरत से ज्यादा खर्च होते हैं। यू० पी० में मिठाई रेलवे पार्सल से भेजने पर ज्यादातर खराब होती हुई मैंने देखी है। इस पर विचारशील लोगों को विचार करना चाहिए।

सन् १९३४ में मैं अमरावती में तैनात था। वहाँ के प्रमुख दानवीर सेठ पन्नालाल जी के लड़के से हमारी भानजी का रिश्ता तय हुआ। पन्नालाल जी सुधारक थे। उनकी व प्रो० हीरालाल जी व अन्य सुधारक मित्रों की सलाह से लड़की को अमरावती में ही बुला लिया और शादी कर दी। नेग कुछ नहीं किये। समय ३ दिन का सभा सोसायटी व समाज सुधार के विचारों के लिए लगाया गया। समझदार व्यक्तियों को यह खूब अच्छा लगा। लेने-देने पर से भी कोई झगड़ा नहीं हुआ और हम रिश्तेदारों का संबंध आज तक प्रेमपूर्वक बना है। इसी तरह कटनी, बीना में दूसरी भानजियों का सम्बन्ध किया गया और रिश्तेदारियाँ बहुत प्रेमपूर्वक चल रही हैं, क्योंकि लेने-देने पर कोई झगड़ा ही कभी नहीं हुआ, न ज्यादा खर्च किया और न लड़के वालों से खर्च कराया। बाजे की जोड़ भी वर और कन्या पक्ष की मिली-जुली थी। निमंत्रण पत्र भी मिले-जुले छपवाये थे। लड़के वालों से जो धूमधाम से बारात निकालने का खर्चा वसूल किया जाता था, वह भी नहीं किया गया।

फिर भानजे, भतीजे व भतीजियों और चचेरे भाइयों का नम्बर आया सो बारात में गिनती के ही आदमी ले गये और जो बराती ले गये वे भी उत्साही स्वयंसेवक की भावना से प्रेरित होकर। मेहमानदारी में त्रुटियां या कमी होने पर जिन्हें क्रोध न आवे बल्कि उस पूर्ति को बिना कन्या पक्ष के जाने हुए सुधार करने की भावना रखने वाले थे। खर्च बारात का कम हुआ था, इसलिए कन्या पक्ष से क्या मिला, इसके ऊपर ध्यान ही नहीं गया। बारात में कम आदमी जाने के कारण आजादी से घूम फिर सके और कन्या पक्ष के गांव में आस-पास जो ऐतिहासिक और धार्मिक स्थान हैं, उनकी यात्रा भी हो सकी। इन विवाहों के अवसर पर दो दो विवाह इकट्ठे कर दिए गए। साधारणतः ऐसी कहावत है कि एक मंडप में दो दूल्हे नहीं हो सकते। इस गलत धारणा का भंडाफोड़ भी हो गया। उन सब विवाहों में आज तक कोई भी अपशकुन या कुफल नहीं हुआ।

फिर सन् १९४५ के करीब जबलपुर में परिषद् हुई। वहां चार आदर्श सामूहिक शादियाँ सम्पन्न हुई और चारों जोड़ियाँ आज तक सुखी हैं। सुमेरचन्द जी दिवाकर वहां मौजूद थे। उनके व्याख्यान के कारण हमको परिषद् के पंडाल में शादियाँ करने की इजाजत नहीं मिली, यद्यपि परिषद् कराने के सर्वेसर्वा हम थे। सबेरे लोग मुझे हजारों की तादाद में मारने को फिरते थे, पर शाम को हजारों की तादाद में शादी में शामिल हुए। साहू जी ने १०१) रु० आशीर्वाद स्वरूप हर एक जोड़े को भेंट दी और अयोध्या प्रसाद जी गोयलीय का बड़ा ओजपूर्ण व्याख्यान हुआ और उन्होंने कहा कि इस नये कदम से समाज में विवाह के मामलों में क्रान्ति पैदा होगी। उनकी भविष्य वाणी पूरी हो रही है।

हमारी तीसरी लड़की का संबंध सागर के धन कुबेर श्री भगवानदास शोभालाल जी बीड़ी वालों के लड़के श्री डालचन्द जी से हुआ है। उनके यहां पहिले लड़के का सम्बन्ध होने से बड़ा उत्साह था। बारात लाने के लिए एक स्पेशल ट्रेन का उन्होंने आयोजन किया था। (१८०००) किराया तय हुआ। स्पेशल ट्रेन को प्राप्त करने के लिए करीब ५०००) नाजायज तौर से खर्च कर दिया गया। जब मुझे यह मालूम हुआ तो मैंने अपने समधी को उलाहना दिया और बताने का प्रयत्न किया कि ऐसा अनाप-शनाप खर्च करना समाज के लिए अहितकर होगा। बात बढ़ी। सम्बन्ध टूटने पर आ गया। वे बाद में (हमारे समधी की समझदारी के कारण) इस बात पर मंजूर हो गये कि मैं खुद लड़की लेकर सागर आ जाऊँ। वैसा ही हुआ और फिर दोनों तरफ के हजारों नर-नारी शादी में शामिल हुए और खूब उत्साह से शादी हुई। सन् १९४९ में मेरे दामाद के छोटे भाई का संबंध गाडरवारा से हुआ। बारात में बहुत-सी मोटरें और लारियाँ गईं। लौटने में मेरे दामाद के हाथ से मोटर ऐक्सीडेंट हो गया और उनके छोटे भाई को बहुत चोट आई। उनका एक पैर खराब हो गया। एक लाख रु० इलाज पर खर्च करने पर भी संतोषजनक फायदा नहीं हुआ। तभी से हमारे समधी शोभालाल जी (जो आदर्श सामूहिक विवाह मण्डल के सभापति हैं) के मन पर स्थायी असर पड़ा और उन्होंने अपने लड़के और लड़कियों के सम्बन्ध में आदर्श रूप से करके करीब डेढ़ या दो लाख का दान दे डाला और बड़े उत्साह व लगन के साथ सैकड़ों विवाहों को सम्पन्न कराने में सक्रिय भाग लिया।

तारणपंथियों का तीर्थ स्थान "निसई" जी बीना के पास है। वहां पर तारण जयंती के अवसर पर बासौदा में और दूसरे तीर्थ स्थान" सूखा निसई" जी में श्री शोभालाल जी के सक्रिय योग से सैकड़ों विवाह सम्पन्न हो गये। पं० उत्तमचन्द जी जबलपुर के हृदय में समाज सेवा की बहुत लगन है। मेले के पहिले से पंडित जी को भेजकर बहुत से सम्बन्ध पहिल से तय कर लिए गये थे और कुछ स्थानीय जोश व उत्साह से मौके के ऊपर ही तय हो जाते थे। इसी तरह कुण्डलपुर (दमोह के पास) में भी सामूहिक विवाह सम्पन्न हुए। फिर १९५४ में गजरथों और मेलों की बाढ़ आई। मैंने विरोध किया। मध्य भारत के मंत्री को लिखा, रथों के कार्यकर्त्ताओं से मिला, पर रथों को न रोक सका। तब मैंने सामूहिक विवाह योजना की बात मनवाकर वहाँ विवाह करा दिए। पं० उत्तमचन्द जी को मैंने अपनी तरफ से दौड़ा करके कुछ संबंध पहिले से तय करने के लिए भ्रमण को भेजा। इतने में पच्छार में एक विवाह मंडल खुल गया, मुझे उसका संरक्षक बनाया गया। मैं थोबोन जी गया। लोगों में अदम्य साहस था। सैकड़ों लड़के अविवाहित लाइनों में बैठते थे। इनकी फोटो ली गई। वे 'वीर' के ग्राहक बने। खूब हट्टे-कट्टे, सुन्दर थे, स्वस्थ थे। पर गांव में रहने के कारण या धनी न होने से इन सबका सम्बन्ध नहीं हो सका। थोबोन जी में गजरथ हाथी बिचलने के कारण नहीं हो सका था। तब मैंने गजरथ के विरोध में व वहाँ की बदइन्तज़ामी कारण उपवास किया था।

दो गजरथों के बाद क्या और गजरथ चलेंगे ?

[स्व० बैरिस्टर साहब की ओजस्वी लेखिनी से प्रसूत जो साहित्य हमें उपलब्ध है उससे हमें उनके सुधारवादी और क्रान्तिकारी विचारों से पूर्ण परिचित होने में सहायता मिलती है। प्रस्तुत लेख भी इसी श्रंखला की एक कड़ी है— सम्पादक]

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद् प्रारम्भ से ही गजरथ का विरोध करती आई है। बहुत वर्ष पहले पं० फूलचन्द जी शास्त्री बनारस वालों ने बहुत कुछ लेख लिखे थे तथा पं० परमेष्ठीदास जी ललितपुर वालों ने भी। इस विरोध के कारण गजरथ प्रायः बन्द से ही हो गये थे। श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द जी भेलसा वालों को विद्या-दान व अन्य समाजोपयोगी कार्यों में खर्च करने के उपलक्ष में 'श्रीमन्त' की पदवी प्रदान की गई थी। इसको परवार सभा ने भी मान्य किया था।

गजरथ चलाने की नई चाल

गजरथ प्रथा के विषय में जनसाधारण में यह धारणा हो चली थी कि गजरण आधुनिक द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव में अनुपयुक्त है। पर कुछ मनचले लोगों ने प्रतिष्ठा के नाम पर ही अनाप-शनाप खर्च करना शुरू किया है। कुछ अदूरदर्शी व्यक्तियों ने एक नया रास्ता निकाला और वह भी इस नाम पर कि गजरथ साझेदारी में हो सकते हैं और तीर्थ क्षेत्रों को इससे काफी आर्थिक लाभ हो सकेगा। साझेदारी में गजरथ चलने से गजरथ एक सस्ती चीज नहीं बनती। समाज को उतना ही उपयोग व समय और धन कम खर्च होता है। इस निमित्त गजरथ चलाने वालों का तो करीब एक लाख रुपया खर्च हो जाता है, साथ-साथ में इसमें सम्मिलित होने वाले जनसमूह का करीब-करीब २० लाख रुपया व्यय हो जाता है। यदि समाज की इतनी धनराशि पानी की भांति व्यय हो जाने पर क्षेत्र को दस-बीस हजार रुपये की आय भी हो गई, तो इससे समाज को अधिक लाभ नहीं हुआ।

समाज के धन का सदुपयोग

तीर्थक्षेत्रों में जिन आवश्यक चीजों की कमी है, यदि वहां गजरथों और प्रतिष्ठाओं में लाखों रुपया व्यय न होकर इन कमियों की पूर्ति में लगाया जाये तो श्रेयस्कर है। उदाहरण के लिए थोबोन जी के कुएँ में पानी नहीं रहता, तभी प्रतिष्ठा के समय अस्थायी नल और

बिजली में ५-७ हजार रु० व्यय किया गया। यदि ये ही रुपये क्षेत्र पर समुचित जल-व्यवस्था के निमित्त एंजिन लगाने में व्यय होते, तो क्षेत्र की स्थायी जल समस्या हल हो सकती थी। थोबोन जी से कच्चा रास्ता पांच मील चन्देरी को है। यदि इस मार्ग को ही पक्का किया जाता, तो यात्रियों को बड़ी सुविधा हो सकती थी।

श्री थोबोन जी क्षेत्र तथा द्रोणगिरि क्षेत्र पर १० दिनों में दो गजरथ व प्रतिष्ठाएँ हुई और इसमें प्रान्त का करीब ४०-५० लाख रुपया इस थोड़े समय में चला गया। इतनी प्रचुर धनराशि से प्रान्त की प्रत्येक धर्म संस्था और तीर्थक्षेत्र की खटकती हुई कमियों की पूर्ति हो सकती थी। मुंगावली में अभी कुछ समय पूर्व जो जैन टैक्नीकल कालेज खुला है, यदि इसी को अथवा अन्य संस्था के निमित्त प्रतिष्ठाकारकों से रुपया लगवा कर इन्हें भी सेठ लक्ष्मीचन्द्र जी के समान पदवियों से सम्मानित किया जाता, तो कितना अच्छा होता।

पदवियां केवल हास्य रूप हैं

गजरथ चलाने वाले यानी प्रतिष्ठाकारक और उनके कुटुम्बी गजरथ में फेरी के वक्त बैठते हैं। इस तरह गजरथ में बैठने वालों और कुछ "मान न मान मैं तेरा मेहमान" की नीति ग्रहण करने वाले जबर्दस्ती से बैठने वालों का नम्बर मिलकर बहुत ज्यादा हो जाता है और सिघई, सवाई सिघई, सेठ, श्रीमन्त सेठ आदि पदवियां भी तो हास्यास्पद सी बन गई है। इसके सिवाय, झुड की झुंड गजरथ में बैठने के लिए उत्सुक नारियां खड़ी रहती हैं और रथ में बैठने के लिए झगड़ती है।

फिर गजरथ का आयोजन

कुछ मूर्तियों की प्रतिष्ठा रोक ली गई है और कहा जाता है कि अगले साल नैनागिरि में फिर रथों का समारोह किया जायेगा—इसी तरह थोबोन जी में नाथूराम जी फिर से रथ चलावेंगे, क्योंकि हाथियों ने रथ नहीं खींचा। ऐसी अफवाह सुनी जाती है। कहां तक सत्य या झूठ है, यह तो भविष्य बतावेगा। अन्त में निवेदन है कि बुन्देलखण्ड प्रान्त में गज-रथों की पुनः प्रवृत्ति अब न चलाई जाय। इसके स्थान पर जैन संस्कृति तथा समाज निर्माण कार्य में जैन समाज का द्रव्य लगाया जाये तो अच्छा है।

सामूहिक विवाहों का आकर्षण

थोबोन जी में १२८ दम्पत्तियों की शादियां यानी २५६ व्यक्तियों की और श्री द्रोणागिरि जी में ८ दम्पत्तियों की याने १६ व्यक्तियों की शादियां आदर्श सामूहिक रूप से हुई। द्रोणागिरि में श्री बालचन्द जी मलैया, मन्त्री ने हर किस्म के अड़गे लगाये, पुलिस में रिपोर्ट की, लाउड स्पीकर नहीं दिया, प्रचार नहीं करने दिया, फिर भी वहां ८ शादियां हुई। द्रोणागिरि की ८ शादियों का महत्व थोबोन जी की १२८ शादियों से कहीं अधिक है, क्योंकि वे बड़े संघर्ष के बाद हुई थीं।

पं० उत्तमचन्द जी वैद्य जबलपुर वालों को भेजकर कुछ शादियां पहले ही तय करा दी थीं और बहुत सी मेला जुड़ने के बाद, वहीं आयोजित हुई और उसी वक्त सम्पन्न हो गई

थीं। वर और कन्या पक्ष से केवल ११), ११) लिये गये जिसमें हवन सामग्री, पूजा सामग्री, गेस वाले, पण्डित का पारिश्रमिक खर्च आदि शामिल थे। लाउड स्पीकर पर पंडित लोग बारी-बारी से जैन विवाह पद्धति के अनुसार पाठ कहते जाते थे और सहायक लोग वर-वधु द्वारा विधि सम्पन्न कराते जाते थे। भीड़ इतनी हो जाती थी कि आदमी पर आदमी टूटता था और व्यवस्था करना मुश्किल हो जाता था।

यह सामूहिक विवाह विधि जनता का आकर्षण बढ़ाती जा रही है। इसका प्रमुख कारण यह है कि इससे जनता के धन व समय आदि का सदुपयोग होने के साथ-साथ इस विधि से ठहराव, लेन-देन, विविध व्यर्थ व्यय आदि कुप्रथाओं का दमन होता है।

इंग्लैंड की डायरी

(बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी अप्रैल, सन् १९६२ में लन्दन बैरिस्टरी पास करने गये थे। वहां से उन्होंने अनेक देशों का भ्रमण भी किया था। वे वहां अगस्त, सन् १९३३ तक रहे थे। समय-समय पर अपनी धर्मपत्नी और बच्चों को लन्दन से और इतर जीवन में यत्रतत्र जो पत्र लिखते रहे, वे साहित्य की अमर निधि बन गये हैं। उनसे उनकी सहृदयता, कर्त्तव्यनिष्ठता और हृदय की विशालता का ज्ञान प्राप्त होता है। उनमें से विशेष पत्रों के चुने हुए कुछ अंश हम यहां दे रहे है ताकि पाठकों को उनके वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन की महत्ता को समझने में सुविधा हो। —सम्पादक)

४, क्लाइडा मैंशन,
लन्दन, एन. डब्ल्यू. ६
४-८-१९३२

तुमने जो लिखा कि दिन बहुत मुश्किल से कटते है, पर क्या करें, परवश हैं। अच्छे काम के लिए दुःख सहना ही पड़ता है।

नरेन्द्र को कोई मास्टर लगा देना। किताबें उसे खूब पढ़ना चाहिए। भूगोल वगैरह याद करते जाना चाहिए। नरेन्द्र की साल खराब नहीं जावे, नहीं तो उसकी जिन्दगी बरबाद हो जावेगी।

अगर जबलपुर में खर्च ज्यादा होता होवे तो फिर दूसरी जगह जाने का प्रबन्ध करना।

●

१७-८-१९३२

इस हफ्ते बहुत इन्तजारी के बाद तुम्हारा पत्र मिला। मैं रुपयों की कोई फिकर नहीं करता हूँ, मजे में हूँ। दिन रात पढ़ने में लगा रहता हूँ। कभी-कभी तुम लोगों की चिन्ता सताती है, बहुत कोशिश करने पर भी सफल नहीं होता हूँ, पर फिर भी आनन्द में हूँ। तुम भी अच्छी तरह रहना।

नरेन्द्र को म्यूनिसिपल स्कूल में भरती करा दो। हमने सुपरवाइजर कालूराम बाजपेई को चिट्ठी लिखी है। अगर कोई मदद नहीं करता है तो तुम खुद तांगा करके उनके मकान

पर जाओ उनसे कहकर भरती करा दो। स्कूलों में पढ़ाई ठिकाने से नहीं होती है, ढील या भूल नहीं करना, तुरन्त प्रबंध करना।

●

३१-८-१९३२

तुम्हारा पत्र आया। पढ़कर बहुत दुःख हुआ। आयन्दा पत्रों में दृढ़ता के शब्द लिखा करो। कुल १५ महीने रहना है, जिसमें ६ माह कट गये हैं। दिन बातों में जाते हैं। संसार में कर्त्तव्य भी कोई चीज है। तुमको संसार के दूसरे आदमियों को देखकर और फिर अपने से तुलना करके संतोष धारण करना चाहिए। सान्जू[1] को मत जाने देना, जबलपुर में अकेला रहना ठीक नहीं है।

नरेन्द्र को बोर्डिंग में भरती करा देना। खर्चा अपनी तरफ से देती जाना। नरेन्द्र को मास्टर लगाया कि नहीं। वह गलती लिखता है—"पढ़ता हूँ" की जगह "पड़ता हूँ" लिखता है। नरेन्द्र को भरती करवा ही दो। हमने सुपरवाइजर कालूराम बाजपेई को चिट्ठी लिखी है। अगर कोई मदद नहीं करता है तो तुम खुद टांगा करके उनके मकान पर जाओ और उनसे कहकर भरती करा दो। ढील या भूल नहीं करना, तुरन्त प्रबन्ध करना।

●

१५-९-१९३२

भाई दयालचन्द जी का पत्र आया था। तुम्हारी बहुत तारीफ लिखी है। पढ़कर खुशी हुई। तुम्हें हिम्मत रखनी चाहिए। यहाँ की स्त्रियां तो देखो— वर्षों बिना पति के रहती हैं और अपना काम बमुकाबले मर्दों के संभालती हैं। हमारा भारतवर्ष तभी उन्नत हो सकेगा, जब हमारे यहाँ नारी समाज अपने कर्त्तव्यों को समझ कर आगे पग बढ़ायेगा।

तुम भी कुछ किताबें पढ़ा करो। पढ़ने में चित्त लगा रहेगा व विद्या बढ़ेगी। चिट्ठी लम्बी लिखकर सब हाल लिखा करो।

इस वक्त अच्छा मौका है। सब रिश्तेदारों के यहां कुछ दिनों तक रह सकती हो, सब की परीक्षा भी हो जावेगी व तुम्हारा दिल भी बहल जायेगा। पर ऐसा नहीं करना कि नरेन्द्र को साथ ले जाओ। जब तक नरसिंहपुर और जबलपुर के सब झगड़े तय नहीं हो जावें, तब तक कहीं मत जाना।

चिट्ठी में एक वक्त लिख देने पर ही अमल कर लिया करो। चिट्ठी हर हफ्ते बुधवार को ही लिखकर डाला करो, जिससे जहाज पर ठीक वक्त पर मिल सके। मैंने डाक्टर बराल को लिख दिया है। उनके यहाँ जाकर आँखों की दवाई अवश्य ले आना।

●

१. बुन्देलखण्ड में इस आदरसूचक सम्बोधन शब्द का प्रयोग वर तथा वधू पक्ष वाले क्रमशः वधू और वर की माताओं के लिये करते हैं।



रिटायर होने के बाद भी बैरिस्टर साहब के तूफानी दौरों में कमी नहीं आई। इस चित्र में वे अपने पुत्र कैप्टेन राजेन्द्रकुमार व परिवार सहित यात्रा पर हैं। उन्होंने कार द्वारा दक्षिण भारत के समस्त जैन तीर्थों व मन्दिरों की हजारों मील की यात्रा अक्तूबर १९५८ में की थी।



बैरिस्टर साहब के सुपुत्र कैप्टन राजेन्द्रकुमार व राजकुमारी (सुपुत्री श्री हंसकुमार जैन, स्टाफ आफिसर, नई दिल्ली) जिनका विवाह सामूहिक रीति से ११ फरवरी, १९५९ को नई दिल्ली में भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद के तत्वावधान में सम्पन्न हुआ था।



बैरिस्टर साहब का स्फूर्तिक जीवन उनके सहयोगियों में प्रतिबिम्बित रहता था। चित्र में उनकी धर्मपत्नी श्यामाबाई ५२ वर्ष की आयु होते हुए भी दौड़ प्रतियोगिता में नवम्बर १६५६ में सिकन्दराबाद सैनिक कमाण्डर की धर्मपत्नी से पारितोषिक ग्रहण कर रही है। उनके पीछे उनके सुपुत्र कैप्टेन राजेन्द्रकुमार खड़े हैं।

२३-६-१६३२

कितने से दिन हैं, हम को तो मालूम ही नहीं होते, क्योंकि हम रात दिन पढ़ने में लगे रहते हैं। तुम अपना समय पढ़ने में क्यों नहीं बिताती। यहाँ की स्त्रियों को तो देखो। अगर इस तरह १२ या १४ माह में दुनिया लौटने लगे तो दुनिया का कारोबार कैसे चलेगा। संसार की सब उन्नति रुक जावेगी। सान्जू को जाने मत देना। तुम फिजूल क्यों दूसरों की आशा करती हो और दुखित होती हो। संसार में कोई किसी का नहीं होता, फिर क्यों आशा करती हो कि कोई दूसरा तुम को मदद करे।

नरेन्द्र की तबियत खराब रहती है, पढ़कर बहुत फिकर हुई। उसकी दवाई करा लो। डाक्टर बराल से दवाई कराना। उनके यहाँ खुद जाना। इसमें कोई हेर-फेर या गलती न हो।

●

१३-१०-१६३२

इस हफ्ते तुम्हारा छोटा-सा पत्र मिला। गनीमत है कुछ लिखने को फुरसत मिली। फुआ[1] का इन्तकाल हो गया, पढ़कर चित्त विभ्रमित हो गया। उनके हम सब ऋणी हैं। उन्होंने हम सबको मां से भी ज्यादा अच्छी तरह से पाला था। दुख है कि हम उनका मुंह भी न देख पाये।

●

२३-११-१६३२

नरेन्द्र की लिपि दिनों दिन खराब होती जा रही है, सो क्या बात है। हमको उसके पत्र पढ़ने से बहुत गुस्सा मालूम होता है। हम चाहते हैं कि वह पत्र हर हफ्ते कम से कम दो सफे का लिखा करे व साफ लिखा करे व गलतियाँ नहीं होवें। मास्टर की रिपोर्ट भी आनी चाहिए। तारा के अक्षर पढ़कर बहुत आश्चर्य हुआ। क्या सचमुच उसी की लिखाई थी, अगर होवे तो हमारी तरफ से उसका चूमा ले लेना। नरेन्द्र की पढ़ाई का क्या प्रबन्ध किया! उसकी पढ़ाई का ध्यान रखना। एक तुम्हें सुविधा है कि नरेन्द्र को छोटेलाल के यहां या बोर्डिंग में छोड़ सकती हो। अगर कहीं जाना चाहती हो तो आ-जा सकती हो। तारा की पढ़ाई का ख्याल रखना। हारमोनियम भी कभी-कभी सिखाने का प्रबन्ध करा देना।

●

१२-१-१६३३

तुम से बहुत बहुत करके प्रार्थना करते हैं कि चि० कस्तूरी (उनकी धर्मपत्नी की बहिन की लड़की) को रज्जूलाल जी के पास भिजवा देना। कारण, घर का आदमी जो कुछ अच्छी तरह से देख-रेख कर सकता है सो बाहर का आदमी नहीं कर सकता। दूसरे, अगर हम वहाँ रहते तो ज्यादा खटपट कर सकते थे। तीसरे, छोटे से मकान में क्षय रोग व रोगी के साथ में रहने से दूसरे आदमियों को क्षयरोग लगने की पूरी-पूरी संभावना रहती है। हाथ जोड़कर प्रार्थना है कि आप कृपा कर कस्तूरी को भिजवा देंगी।

१. यह बुन्देली भाषा में 'बुआ' के स्थान पर प्रयुक्त होता है।

पहिले पत्रों में हमने चिट्ठी बन्द करने की धमकी दी थी, पर उसका कुछ असर नहीं हुआ। इसलिए यह धमकी देना फिजूल है। तुम्हें इस बात की कुछ परवा नहीं है कि हमें फिकर होती होगी या नहीं, पर खैर हमें तुम्हारी परवाह है, इसलिए बेशर्म होकर हर हफ्ते चिट्ठी लिख दिया करते हैं। छोटी का नाम नन्दन कुमारी रखना न कि "लंदन कुमारी"। उसका नाम अभी से बदल दो।

●

१७-१-१९३३

हम यहां पर एक पखवाड़े के लिए रीवां-महाराजा के साथ रह रहे हैं। एक हफ्ते में रीवां महाराजा चले जावेंगे। हम उनके साथ कुछ सामान भेज रहे हैं। वे वहाँ से सतना भेज देंगे सो वह तुम्हारे पास जबलपुर पहुँच जावेगा। तारा व नरेन्द्र से पत्र लिखकर जरूर भिजवाना।

●

२८-१२-१९५९

मुझमें बहुत त्रुटियां है, मुझमें बहुत दुर्बलताएं है, पर अपनी आंखों के सामने मैं हरएक को उसकी मर्जी के माफिक नहीं चलने दे सकता हूं।

मुझे गृहस्थी में अच्छा नहीं लगता है, साथ-साथ में मुझे हृदय रोग है। घर में वातावरण कुछ अनुकूल सा नहीं है। ज्योति की समस्या कुछ सुलझती सी दिखती है पर नरेन्द्र अपने कर्त्तव्यों को करने में तत्पर नहीं दिखते है।

मैं भागचंद जी (बैरिस्टर साहब के दामाद) के जाने के बाद घर से जाना चाहता हूँ और यथेच्छ घूमकर अपना स्वास्थ्य सुधारने के साथ-साथ समाज सेवा करना चाहता हूँ। तुम सब मुझसे अटूट प्यार करते हो। तुम सब हमारे लिए उत्सर्ग करते आए हो पर मैं अज्ञातवास करना चाहता हूँ, ताकि मैं घर की चिन्ताओं से मुक्त होऊँ और दूसरे मेरी चिंता न करें।

फिल हाल मैं अपनी त्रुटिया सुधारने के लिए २४ घंटे का उपवास करता हूँ, आगे की बाद में सोचूंगा।

●

२८-१२-१९५९

(विशेष रूप से अपनी तृतीय पुत्री नन्दनकुमारी को सम्बोधित) तुम मुझसे और हम सबसे बहुत प्यार करती हो और सब कुछ त्याग करती हो और कर रही हो। तुम हमारी शुभचिंतक हो, पर तुम्हारी गलतियां हमको मालूम होती हैं, जो तुम्हारे लिए अहितकारी हैं। मेरा कर्तव्य है कि तुमको बता दें। मानना न मानना तुम्हारा काम है।

प्रकृति ने तुम्हें बहुत बड़ा बनाया है। तुम्हें बहुतों पर शासन करना है। तुमको रोज अखबार पढ़ना चाहिए। तुम्हें आगे की सोचकर दुनियां के अनुकूल बनना है। संसार को तुम और हम नहीं बदल सकते है, बल्कि हमें अपने को बदल कर संसार के अनुकूल चलना होगा।

●

कर्मठ और कर्त्तव्यशील नेता

— श्री नाथूराम गोदरे, सागर —

श्री जमनाप्रसाद जी जैन बार-एट-ला से मेरा बचपन का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। वे सागर में खुरई तहसील के रहने वाले थे। उनका प्राथमिक विद्याध्ययन सागर में हुआ। सागर में मेरे पिता जी के साथ उनके पिताजी का बड़ा प्रेम था। विद्यार्थी जीवन में मैं और जमनाप्रसाद जी दोनों साथ-साथ रहे। सन् १९१६ में इन्दौर में वे नसिया जी में रहकर अध्ययन करते थे। उसी समय वे मुझे भी आग्रह करके इन्दौर पढ़ने के ले लिए गए, और उसी होस्टल में मैं भी रहने लगा। इस तरह हम लोगों ने साथ-साथ अध्ययन किया।

उनका हंसमुख स्वभाव बचपन से ही रहा है। इन्दौर में जितने भी मध्य प्रांत के छात्र थे, प्रायः उनकी सबसे घनिष्ठता थी। उस समय भी उनके हृदय में सदा यही भावना रहती थी कि उनके पिछड़े हुए प्रांत के जो विद्यार्थी हैं, वे बहुत अधिक शिक्षा प्राप्त करें। इन्दौर में छात्रावस्था में हम लोग एक साथ ५ वर्ष रहे। विद्या से उन्हें बड़ा प्रेम था। वे हर एक विद्यार्थी को पूरी-पूरी मदद करते थे। उनके हृदय का दरवाजा सब के लिए खुला था। उस समय इंदौर में गावों से भी बहुत लड़के भाग कर आ जाया करते थे और हमारे होस्टल के पास धर्मशाला में ठहर जाया करते थे। ऐसे भागे हुए लड़कों की कैसे समस्या हल की जाए—उन्हें शिक्षा दी जाए या किसी काम में लगाया जाये, इसके लिए प्रथम प्रयास श्री जमनाप्रसाद जी ने किया और उन्होंने ही निश्चय करके अपने सभी साथी छात्रों की एक छोटी सी समिति बनाई। जहाँ तक बनता था वे छात्रों को शिक्षा प्राप्त करने में ही सहायता पहुँचाते थे। पर कई लोगों को धन्धे में लगाना पड़ा, जिसके लिए लागत की जरूरत थी। यह सारा प्रबन्ध इसी समिति ने किया। इस लागत को पूरी करने के लिए हर विद्यार्थी अपने निजी खर्चों को कम कर देता था। इस समिति के मुख्य कार्यकर्त्ताओं के नाम उल्लेखनीय हैं। उनमें थे श्री जमनाप्रसाद जी व स्वर्गीय श्री नन्हेलाल जी चौधरी और मैं।

सामाजिक वातावरण को सुधारना, उसमें से कुरीतियों को मिटाना और समाज का कैसे उत्थान हो, ये विषय ही इस समिति के मुख्य कार्य थे। इस तरह इन्हें बचपन से ही समाज सुधार की लगन रही।

उच्च शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् आपने इनकमटैक्स की प्रैक्टिस शुरू कर दी थी। उस समय भी सामाजिक सेवा इनका मूल ध्येय था। जज बनने के बाद तो उन्होंने समाज सेवा के लिए कमर ही कस ली और पूर्ण रूप से जैन जाति का उद्धार करने में लग गये। कभी-कभी तो सर्विस जीवन में इन सामाजिक कार्यों के करने से उन्हें सरकार से बहुत-सी झिड़कियां भी सहनी पड़ीं। पर उन्होंने इसकी परवाह नहीं की। उनका मूल मंत्र था समाज सेवा।

जहां कही भी कोई भी सामाजिक कार्य होता था, वहां आप खास आग्रह करके बुलाए जाते थे। परवार सभा आदि संस्थाओं के आप कर्मठ कार्यकर्त्ता रहे हैं। जैन परिषद् में अनेकों अच्छे-अच्छे कार्य किये हैं। शादी विवाह के समय की कुरीतियां दूर कीं। धार्मिक जलसे, रथ आदि का स्वरूप बदला। ऐसे अनेकों कार्य इन्होंने अपने जीवन में निस्वार्थ भाव से किये हैं। सैंकड़ों लोगों को सरकारी नौकरी दिलाने में मददगीर रहे हैं।

ऐसे कर्मनिष्ठ और कर्त्तव्यशील नेता की समाज सदा ऋणी रहेगी। इसी सामाजिक सेवा के फलस्वरूप उन्हें समय से पूर्व ही पेंशन पर बैठना पड़ा, परन्तु वे अन्तिम समय तक समाज सेवा करते रहे।

मुझे दुख है कि असमय में ही ऐसे समाज सेवी व्यक्ति का निधन हो गया, जिसकी पूर्ति नहीं हो सकती। मैं उनकी स्वर्गीय आत्मा को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

मानवता के प्रतीक

— चौ० राम चरणलाल, सागर —

बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी कलरैया के परिवार को मैं बचपन से ही जानता हूँ। इनके पिता श्री गुरई में श्रीमंत सेठ मोहनलाल जी व बाद में श्री सेठ डालचन्द धरमचंद मोदी सागर वालों के यहां मुनीम रहे। बैरिस्टर सा० की मां का देहान्त बचपन में ही हो जाने एवं परिवार की साधारण परिस्थितियों के कारण उन्हें अपनी पढ़ाई लिखाई में अत्यन्त कठिन स्थिति का सामना करना पड़ा। केवल अपनी सादगी, अध्यवसाय और स्वावलम्बी वृत्ति के कारण ही ये अपने जीवन को इतने उच्च स्तर पर ले जा सके, लेकिन तब भी दम्भ या अभिमान की छाया भी छू तक नहीं सकी। दूसरों की सहायता करने में उन्होंने सदैव ही आत्मिक संतोष का अनुभव किया। सभी समाजों के सैंकड़ों व्यक्तियों को उच्च पदों पर आसीन होने में बैरिस्टर सा० ने प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहायता दी। इस तरह मौन रहकर भी उन्होंने मानवता की जो बड़ी सेवा की है उनका मूल्यांकन सम्भव नहीं है।

बैरिस्टर सा० का जीवन एक ऐसे कर्मठ व्यक्ति का जीवन रहा जिसकी कोई दूसरी मिसाल नहीं मिल सकती। थोड़े समय को भी जो उनके सम्पर्क में आया वह जीवन भर को उनका हो रहा। ऐसा अद्भुत था उनका व्यक्तित्व! निस्वार्थ भाव से समाज की सेवा एवं व्यक्तिगत रूप से प्रत्येक व्यक्ति की सहायता करते रहना उनका अपना विशेष गुण रहा है।

एक न्यायाधीश होते हुए भी समाज के उद्धार का निरन्तर चिन्तन करते रहकर उसे मूर्त रूप देने का प्रयत्न करते रहने वाले श्री बैरिस्टर सा० का सम्पूर्ण जीवन उनके अपने लिए नहीं समाज के लिए, समाज के व्यक्तियों के लिए रहा है। वे जहाँ भी गये वहां समाज के वैमनस्य को दूर करने का प्रयत्न किया, नये कार्यकर्त्ताओं को प्रेरणा दी। स्नेह और कर्मठता की प्रतिमूर्त्ति श्री बैरिस्टर सा० के निधन से देश व समाज की जो क्षति हुई है, उसकी पूर्ति असम्भव है।

जीवन के निचोड़

— श्रीमती नन्दनकुमारी जैन —

[यहां स्व० बैरिस्टर साहब द्वारा अपने जीवन में व्यवहृत ध्येयों और सिद्धांतों का उल्लेख किया गया है जिन पर चलकर उन्होंने जीवन के आदर्शों की स्थापना की थी। —सम्पादक]

आपको बचपन से ही शिक्षा से बड़ा प्रेम था। आप बड़ी लगन से पढ़ाई करते थे। हमेशा वाचनालयों में जाकर घन्टों वहां पढ़ते थे। प्रत्येक व्यक्ति की विद्वत्ता का पूरा-पूरा लाभ उठाते थे। आपने दूसरों के अनुभवों से खूब लाभ उठाया। जीवन के अन्तिम दिनों में भी सिकन्दराबाद में अच्छे-अच्छे लेखकों की सैकड़ों पुस्तकें पढ़ीं।

आपको दूसरों को पढ़ाने का बड़ा शौक था। अपने लड़के-बच्चों को पढ़ाने में तो प्रसन्नता का अनुभव करते ही थे, परन्तु दूसरों के बच्चों को पढ़ाने में बेहद सुख मानते थे।

आपने अपने जीवन का एक मिनट भी व्यर्थ नहीं गंवाया। इसीलिए वे रात-रात में ट्रेनों का सफर करते थे और दिन में अपना काम करते थे। उनके दौरे भी तूफानी दौरे हुआ करते थे। रास्ता चलते-चलते कई काम निपटाते थे।

भोजन के पीछे अपना अमूल्य समय नष्ट नहीं करते थे। समय पर चने खाने से भी नहीं हिचकते थे। इनका भोजन बहुत सादा था। इंग्लैंड जाने पर भी आपने कभी मांसाहारी चीजों को हाथ नहीं लगाया। आपको दूसरों को खिलाने में ज्यादा संतुष्टि मिलती थी। सैकड़ों बार उन्होंने अपने हिस्से के भोजन में से दूसरों को खिलाया होगा।

बात के बड़े पक्के थे या यों कहें कि हठी थे। जो बात एक बार मन में ठान ली, लाख विपत्तियां आएँ, पर वे उसे पूरी करके ही छोड़ते। जगदलपुर की प्रथम यात्रा (उनके जीवन चरित्र में पढ़िए) इसी का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। एक ही रात्रि में इंग्लैंड जाने का पक्का इरादा कर लिया। आर्थिक कठिनाई और घर की परिस्थितियां भी उन्हें नहीं रोक सकीं। पैसा न होने से पत्नी का जेवर गिरवी रखा, कुछ उधार लिया और अपने तीन बच्चों और पत्नी को छोड़कर इंग्लैंड गये।

हर काम वे समय से करते थे। बैरिस्टर होने के नाते वे कानून के हर पहलू से अच्छी तरह परिचित थे। बाहर से आये हुए लोगों की कठिनाइयों को समझते थे, इससे कोर्ट में कभी पेशी नहीं बढ़ाते थे। जल्दी से जल्दी रात-रात भर जागकर केसों की तैयारियाँ

करते और उनको निपटाते थे। खासकर फांसी के आए हुए केसों में तो रात दिन एक करके बहुत परिश्रम के साथ उन केसों के अभियुक्तों को बचाने की पूरी पूरी कोशिश करते थे। स्त्रियों के फांसी के मामले बड़ी सोच समझदारी के बाद समय लेकर करते थे।

सफर करते समय अगर गाड़ी चूक भी जायें, तब भी वे नहीं रुकते थे। रेलगाड़ी चूकने पर मालगाड़ी, मोटर या बैलगाड़ी से जाते थे और अगर ये साधन भी न मिलें तो पैदल ही सैंकड़ों मील चले जाते थे, पर जहां पहुँचना था, वहां पहुँचकर ही रहते। हर गाँव में घूम-घूमकर वहां के लोगों की कठिनाइयों को हल करते थे। हर आदमी से प्रसन्नतापूर्वक मिलते, चाहे वह गरीब हो चाहे अमीर। मिलनसारिता इनका सबसे बड़ा गुण था।

ईमानदारी इनका सबसे बड़ा गुण था। यह विरासत इन्होंने अपने ईमानदार बाप से ही पाई थी। इसी ईमानदारी के कारण उन्हें जज का पद त्यागना पड़ा, पर वे अपने कर्त्तव्यों से च्युत नहीं हुए। सदा रिश्वतखोरी से बचे रहे। आपमें धैर्य अपूर्व था। चित्रकूट में बह जाने के समय आपका धैर्य देखने लायक था। जीवन में हजारों विपत्तियां आई पर आपने धैर्य कभी नहीं खोया। आप सदा प्रसन्न चित्त रहते थे। आपकी हँसी प्रसिद्ध थी। मिलनसार ये इतने थे कि दो मिनट के अन्दर ही अपरिचित के साथ भी इस तरह घुल-मिल जाते थे कि मानों सदा से उसे जानते हों। वे धार्मिक प्रवृत्ति के भी बहुत अधिक थे। मंदिर भी जाते, घर में दर्शन रोज करते थे और अपने बच्चों को भी धार्मिक बनाने का प्रयत्न करते थे।

जाति पांति का बंधन नहीं मानते थे। इसीलिए एक अजैन विद्यार्थी के कारण इन्हें बहुत अधिक विपत्ति का सामना करना पड़ा था, पर वे पीछे नहीं हटे।

वे स्वयं अपने लिए बेहद कंजूस थे, पर अपने बच्चों और दूसरों के लिए नहीं। उनका रहन-सहन इतना सादा था, कि कोई भी नहीं कह सकता था कि वे इतने उच्च पद पर हैं।

परोपकारी तो बहुत अधिक थे। इनके सैंकड़ों रिश्तेदारों ने तो इनके यहाँ शिक्षा पाई ही है, इसके अलावा दूसरी जाति के व्यक्तियों ने भी इनके घर रहकर शिक्षा पाई है। इन्हीं की बदौलत श्री जे० पी० भट्ट आज हाईकोर्ट जज हो सके और श्री के० एल० बंदोवार इनकमटैक्स कमिश्नर बन सके। रिश्तेदारों ने केवल शिक्षा ही नहीं पाई, उनके शादी विवाह भी इन्होंने ही कराये और अपने घर से कराये। विद्या प्रेमी होने के नाते हजारों विद्यार्थियों को स्कालरशिपें दिलवाई, सर्टीफिकेट दिए और नौकरी दिलवाई।

आप बहुत बड़े समाज सुधारक थे। आपने अनमेल और वृद्ध विवाह रोके, मरण भोज बंद कराया और विधवा विवाह शुरू करवाए। अन्तर्जातीय और आदर्श सामूहिक विवाह पद्धति के तो आप जन्म दाता हैं। आपने अनेक स्कूल, कालेज खुलवाये और धवला ग्रंथों का संपादन करवाया व हजारों घरेलू मामले आपस में तय करवाये।

समाज सेवा की तड़प अन्त तक उनके हृदय में रही। इसी कारण हृदय रोग से पीड़ित होने पर भी देहली जैन कन्वेंशन में शामिल हुए और प्राचीन मूर्त्तियों के विध्वंस का केस हाथ में लेकर चंदेरी, गोलाकोटा, पछार, भोपाल आदि का दौरा किया।

मेरे बाल सखा

— स्वामी सत्यभक्त, वर्धा —

स्वर्गीय जमनाप्रसाद जी कलरैया, जो जज साहब के नाम से ही ज्यादा प्रसिद्ध थे, मेरे बाल साथियों में से थे। हम दोनों ही गरीबी में पले और पनपे। मैं सागर में संस्कृत पढ़ता था, वे अंग्रेजी। मैं उम्र में कुछ बड़ा था इसलिये उनका बड़ा भाई बन बैठा था और उसीके अनुरूप स्नेह तथा आदर पाया था।

जीविका के क्षेत्र में आने पर हमारा कार्यक्षेत्र काफी अलग-अलग रहा। फिर भी स्नेह सम्बन्ध बना रहा, जो अन्त तक रहा। यद्यपि हम दोनों वर्षों में कभी एकाध बार मिलते थे, फिर भी प्रेम सम्बन्ध तथा एक-दूसरे की जानकारी जरूर रखते थे और एक-दूसरे की प्रगति से प्रसन्नता का अनुभव करते थे। जीवन के अन्तिम दिनों में जबकि वे मेरे विशेष सहयोगी बनने की तैयारी में थे, उनका इस प्रकार अकस्मात् चला जाना दिल को काफी चोट पहुँचाता है। उनके गुणों की बार-बार याद आती है। उनमें कुछ बातें तो सभी का ध्यान खींच सकती हैं, जैसे—

१—प्रारम्भ से ही काफी उच्च पद पर पहुँचने पर भी उनमें अभिमान बिल्कुल नहीं था। सबसे मिलना-जुलना और छोटे से छोटे व्यक्ति के काम में आना उनका स्वभाव था।

२—सामाजिक उन्नति के काम में वे काफी आगे बढ़ गये थे। जाति-पांति की उन्हें कोई परवाह नहीं थी। इसीलिए उन्होंने अपनी सन्तान का विवाह जाति-पांति के बन्धन तोड़ कर किया था।

३—सामाजिक रीति-रिवाजों को सुधारने या बदलने में वे बड़े पराक्रमी थे। जैन समाज में जो सामूहिक विवाहों की नई योजना चल पड़ी है उसके प्रवर्तक आप ही थे।

४—सर्वधर्म समभाव के कार्यक्रम को अमल में लाने के लिये वे प्रयत्नशील थे। उनने कई बार मुझसे यह प्रस्ताव किया था कि भोपाल में एक सत्याश्रम बनाने की कोशिश की जाय। उसके लिये वे वहाँ अपनी जमीन तथा मकान काफी समय तक के लिये दे देंगे और धीरे-धीरे वहां आश्रम को पनपाने की कोशिश करेंगे। इसी तरह अपनी सदर की इमारत की ऊपरी मंजिल में जी सभी धर्मों के प्रतीक रखकर सर्वधर्म समभावी मन्दिर का रूप देने की बात भी उन्होंने कही थी। प्रकार वे सत्यसमाज से तीनों रूप—धर्मसमभाव, जाति-

समभाव और समाजसुधार के कार्य में काफी आगे बढ़े थे तथा और भी आगे बढ़ने के लिये प्रयत्नशील थे ।

५—वे बुढ़ापे से परे थे । उनमें इतना उत्साह था, कर्मण्यता थी कि उनके पास बुढ़ापा फटक नहीं सकता था । वे सदा उत्साह मूर्ति थे । लड़के लड़कियों के विवाह हो जाने और नाती आदि हो जाने से भले ही उनकी गिनती बुजुर्गों में होने लगी हो परन्तु मन की कर्मण्यता तथा मन का उत्साह उनमें इतना अधिक था कि वे जीवन भर जवान ही रहे । यदि क्रूर काल ने उन्हें आकस्मात् कवलित न किया होता तो वे आगे भी इसी तरह जवान, कर्मण्य और उत्साही बने रहते ।

६—कौटुम्बिक जीवन में अनेक संघर्ष आये और उनसे लोग बिछुड़े भी, फिर भी जमनाप्रसाद जी ने स्नेह और शिष्टाचार में कमी नहीं की । यह कर्मयोगी मनोवृत्ति उनमें असाधारण मात्रा में थी ।

यह खेद की बात है कि जैन समाज ने उनके इन गुणों से उचित लाभ नहीं उठाया, न उचित मात्रा में कृतज्ञता प्रगट की ।

महिला जागरण के पोषक

— श्रीमती विद्यावती देवड़िया, नागपुर —

मुझे याद आता है कि इटारसी में एक दफा आल इंडिया दिगम्बर जैन परिषद का अधिवेशन हुआ था। उस समय स्त्रियों की परदा प्रथा के बारे में एक प्रस्ताव रखा गया था। कई विद्वान् सज्जनों के भाषण हुए थे। मैंने भी बड़े जोर से परदा प्रथा को दूर करने का समर्थन किया था। मैंने कहा था कि स्त्री को केवल स्त्री होने से ही कार्यशीलता के किसी विशिष्ट अंश के अनुपयुक्त न समझा जाय, अन्यथा अबलाएं कही जाने वाली भी पूर्णरूप से पराक्रम करने को कटिबद्ध हो जायेंगी। यदि आपने उन्हें परदे में रखकर उनके अधिकार उन्हें नहीं दिये, तो समय आने पर वे स्वयं अपने अधिकार छीन लेंगी इतना ही नहीं, वे एक कदम और आगे बढ़कर उच्छृङ्खल भी बन सकती हैं। पुरुष वर्ग अभी भी अपनी अर्धाङ्गिनियों को प्रकाश में आने का मौका दे, नहींतो बांध टूटने पर प्रवाह प्रबल रूप धारण कर लेगा। प्रकृति का यही नियम है।

श्रीयुत जज सा० उस समय परिषद के सभाध्यक्ष थे। सुनते ही खड़े होकर मुझ से कहने लगे—विद्यावती! जो यह चिकें पड़ी हुई हैं इन्हें तुम अपने हाथों से तोड़ डालो। ये परदे फाड़ डालो। मैं कुछ झिझकी परन्तु तुरन्त ही जज सा० बोले—क्या सोच रही हो? करनी और कथनी में तुम्हारे अंतर क्यों? मैंने कहा—मामा जी, समाज कुछ······। नहीं, तुम परवाह न करो। जाओ! शीघ्र ही चिकें उठा दो। मैंने उनकी आज्ञा पालन की और सारी चिकें उठा दीं। साथ ही बहिनों से भी मदद ली।

इसमें कोई शक नहीं कि आदरणीय श्री जमनाप्रसाद जी जैन एक कट्टर समाज सुधारक, जागृत भावना वाले, दृढ़निश्चयी, साहसी और न्याय के उपासक थे। उनमें नैतिक साहस पूर्ण रूप से विद्यमान था। जैन समाज में वे एक ऊँचे आदर्शवादी थे। जिन व्यक्तियों ने उनके जीवन का पास से अवलोकन किया है, कि वे इस बात को अच्छी तरह समझ सकते है कि समाज सेवा उनका मुख्य कर्तव्य था। समाज में प्रचलित कुरीतियों को दूर करना व मिथ्या आडम्बर को न पनपने देना एक उनकी अनोखी धुन थी। इसलिए वे समाज सुधारक गिने जाते थे। मैं उनकी पुण्य स्मृति में अपनी श्रद्धा और भावना के फूल चढ़ाकर श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ।

भाई जमनाप्रसाद : कुछ संस्मरण

— श्री गणेशप्रसाद भट्ट, सागर —

जब भी मुझे अपने छोटे भाई जमनाप्रसाद जी का स्मरण हो आता है, मेरा हृदय उनकी ओर श्रद्धा, भक्ति और कृतज्ञता से परिपूर्ण हो जाता है। उन्होंने मुझ से भाई का सम्बन्ध स्थापित किया था और उसे आजीवन खूब निभाया।

ईस्वी सन् १९२७ की बात है। उस समय मैं जबलपुर में वकालत करता था और भाई जमनाप्रसाद जी वहीं इनकम-टैक्स डिपार्टमेंट में काम करते थे। एक बार जब मैं दीवानी अदालत में बरांडे में खड़ा था, भाई जमनाप्रसाद जी आये और मुझसे पूछने लगे कि मैंने सिविल जजी के लिए अर्जी दी है अथवा नहीं। मुझे उस समय मालूम ही नहीं था कि ऐसी कई जगहें खाली हुई हैं और वे भरी जाने वाली हैं। मैंने आश्चर्य से पूछा कि कौन सी जगह और कैसी अर्जी ? इसपर वे मुझसे क्रोधित हुए और कहा कि मैं कैसा हूँ कि कभी गजट भी नहीं पढ़ता। उन्होंने चिंतित होकर कहा कि दूसरे दिन की अन्तिम अवधि है। अर्जी देने को और अब समय ही कहाँ है कि नागपुर से मेरे लिए अर्जी-पत्रिका बुलवाई जावे। कुछ देर के बाद उन्हों कहा कि कदाचित् उनके पास ऐसी दो पत्रिकायें आई थीं और वे जाकर घर में देखेगें कि उनमें से एक उनके पास पड़ी है अथवा नहीं। ऐसा कहकर वे साइकिल पर अपने घर चले गये।

भाग्यवशात् भाई जमनाप्रसाद जी को एक पत्रिका मिल गई और वे खुशी-खुशी मेरे पास आये। फिर मुझसे कहा कि बैठो ! और प्रेमपूर्ण रोब में कहा कि भैया, तुम तो बुद्धू हो। तुम से पत्रिका भरी भी न जायगी, इसलिए जैसा वे कहते जाते हैं वैसा मैं लिखता जाऊँ। प्रेम के ऐसे अटपटे व्यवहार के साथ वह पत्रिका समाप्त हुई।

फिर प्रश्न आया सर्टीफिकेट का। मैंने कभी ऐसे प्रमाणपत्र लिए नहीं थे क्योंकि मेरी भावना थी कि मैं ऐसे प्रमाणपत्रों के लायक नहीं था। तब मैंने कहा कि मेरे पास तो ऐसे कोई पत्र नहीं हैं, तब वे और भी क्रोधित हुए और कहा कि इसी वक्त हाई स्कूल और कालेज जाओ और अभी भी यदि मेरे कुछ शिक्षक हों तो उनसे प्रमाणपत्र ले आओ। मेरी हिम्मत न हुई। मेरे विचार ही में न आया मेरे शिक्षक, जिनसे मैं कभी मिला ही नहीं था, मेरा स्मरण रखते होंगे। इसी समय मेरे एक और मित्र और भाई आये और जब उन्हें बात मालूम हुई, तो उन्होंने मेरे शिक्षकों के पास जाना स्वीकार किया और मेरे लिए वे प्रमाण-पत्र

ले आये। उनका नाम है श्री ताराचंद जी श्रीवास्तव जो आजकल मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में न्यायाधीश हैं। इस प्रकार इन दो कृपालु भाइयों की सहृदयता और कृपा से मेरी अर्जी तैयार हुई और दूसरे दिन नियत समय पर वह दे भी दी गई।

आज जब मैं विगत दिनों की याद करता हूँ तो मुझे मालूम होता है कि भाई जमना-प्रसाद जी की उदारता और सहृदयता थी कि उन्होंने मेरी फिकर की। और कोई होता तो शायद यह विचार करता कि जितने कम अर्जीदार हों उतना ही अच्छा। उनकी इस कृपा का उल्लेख मैंने कई बार अपनी मित्रमंडली में किया है। आज भी मैं निःसंकोच भाव से कहता हूँ कि सांसारिक दृष्टि से जो कुछ मुझे प्राप्त हुआ है, वह मूलतः उनकी अमिट कृपा का फल है।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि भाई जमनाप्रसाद जी का प्रेम मेरे ऊपर निरन्तर ही रहा है। ईस्वी सन् १९५६ की बात है, जब प्रांत का पुनर्निर्माण होने वाला था। उस समय नागपुर के जैन समुदाय ने मिश्रित होने वाले प्रांतों के मुख्यमंत्रियों के सम्मानार्थ एक आयोजन किया। उस आयोजन में प्रमुख हाथ भाई जमनाप्रसाद जी का था। उन्होंने मुझे आमन्त्रण भेजा कि मैं उस आयोजन में सम्मिलित होऊँ। मैंने "हाँ हूँ" कहके उसे टालना चाहा क्योंकि ऐसे आयोजनों से मैं दूर ही रहना चाहता हूँ। उन्हें मेरी वृत्ति मालूम थी। उस समय तो वे मुझसे कुछ न बोले, पर जब आयोजन का समय निकट आया तब उन्होंने मुझसे फोन पर बातचीत की। बातचीत का ढंग भी उनकी प्रकृति के अनुकूल था। उन्होंने कहा—"देखो भैया, तुम्हें आना ही पड़ेगा। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि यह आयोजन मैं ही करवा रहा हूँ। यदि तुम न आओगे तो मैं आयोजन ही बंद करवा दूंगा।" ऐसे प्रेमपूर्ण आग्रह को भला कौन टाल सकता था। जब मैं आयोजन में पहुँचा तो मुझे आश्चर्य हुआ कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों में से केवल मुझे ही निमन्त्रण था। यह निश्चित है कि उन्होंने मुझे मेरे ओहदे के कारण नहीं वरन् प्रेम के नाते ही आमन्त्रित किया था।

ऐसी कृपा उन्होंने फिर मुझ पर की। वे अपने घर में एक नर्सरी स्कूल चला रहे थे जिनमें उनकी कन्या काम करती थी। जब एक बार स्कूल का आयोजन हुआ तो मुख्य अतिथि के रूप में उन्होंने मुझ ही निमंत्रित किया। मैंने विवाद किया कि मुझसे भी अधिक योग्य व्यक्ति हैं, उनको क्यों न बुलाया जाय। पर वे बोले कि उन्हें और किसी से क्या प्रयो-जन और फिर योग्यता और अयोग्यता का प्रश्न तो उनके लिए है, न कि मेरे लिए।

जब मैं अवकाश प्राप्त कर सागर विश्वविद्यालय में आया तो उसकी खबर भाई जमनाप्रसाद जी को देर से प्राप्त हुई। जब उन्हें मालूम हुआ तो उन्हें बड़ी खुशी हुई और एक व्यक्ति के हाथ उन्होंने मुझे बधाई का एक प्रेम-पत्र भेजा। उसमें उन्होंने अपनी हृदय की बीमारी का उल्लेख किया था और लिखा था कि उस बीमारी से अब उन्हें अधिक तक-लीफ हो रही है। उस सम्बन्ध में उनके उद्गार अमोल थे। उन्होंने लिखा था कि अन्तिम समय के लिए वे बिलकुल तैयार हैं। जीवन से उन्हें न कोई क्षोभ है और न मोह। मेरे लिए यह क्लेश का विषय हो गया है कि प्रेषक महोदय ने भाई जमनाप्रसाद जी का पत्र और उनके

निधन का दुःखद समाचार मुझे साथ ही साथ दिया। भाई जमनाप्रसाद जी ने मुझसे जो भाई का नाता जोड़ा था उसे अन्तिम समय में भी पूर्ण कर दिखाया।

जब मैं अपने प्रिय भाई का स्मरण करता हूँ तो मुझे मालूम होता है कि उनमें न मालूम कितने अलौकिक गुण थे। परदुःख में उन समान दुखी व्यक्ति संसार में क्वचित ही होते हैं। दूसरों की सहायता करने में वे आगा-पीछा न देखते थे और अपने स्वार्थ को भी तिलांजलि देने में हिचकते न थे। उनके हृदय में अपने समाज के हित की निरन्तर चिन्ता रहती थी—विशेषकर विधवाओं की दशा से वे सदा क्लेशित रहा करते थे। समाज सुधार के उन्होंने कई प्रयोग किये और उनमें उन्हें अत्यधिक सफलता ही प्राप्त हुई। वे निर्भीक कार्यशील व्यक्ति थे। फल की आशा से रहित उनका जीवन-व्यापार था। एक तरह से संसार में रहते हुए भी वे वस्तुतः उससे निलिप्त थे। इसमें संदेह नहीं कि वे मुक्तात्मा थे पर प्रेम का सम्बन्ध किस तरह निभाया जाता है, यह मैंने उनके जीवन से जाना।

मेरे पूज्य बड़े भैया : एक संस्मरण

— श्री कुन्दनलाल बेंदवार, वर्धा —

पूज्य (स्वर्गीय) श्री जमनाप्रसाद जी जैन मेरी मातृभूमि (खुरई, जिला सागर म० प्र०) के होने के नाते मेरे परम पूज्य बड़े भाई थे। खुरई के वे पहले ही लाल थे जिन्होंने उस समय आज से ४० साल पूर्व की उच्चतम शिक्षा—एम० ए० और एल-एल० बी० पास करके अपनी बस्ती में वकील बने और केवल अपना ही नाम ऊंचा नहीं किया, अपितु सारे क्षेत्र में एक ऐसी सनसनी फैला दी जिससे जैन समाज व अन्य सब वर्गों में नया जीवन संचार होने लगा। उन्होंने उस क्षेत्र खुरई की और आस-पास की सारी समाज के सब बालकवर्ग को बिना किसी जाति-पांति का भेदभाव किये सदैव अपनी तत्परता और हंस-मुख व्यवहार से पूरा-पूरा प्रोत्साहन देकर निश्चय ही आगे बढ़ाया और विशेषकर अपनी प्रिय खुरई की भावी पीढ़ी के उज्ज्वल भविष्य का द्वार हमेशा के लिए खोल दिया। ऐसे एकमात्र और सच्ची लगन के विशाल हृदय व्यक्ति को क्या खुरई निवासी, क्या सागर, क्या दमोह, जबलपुर, बुन्देलखण्ड, मध्य प्रदेश, मध्य भारत व सम्पूर्ण देश का कोई भी समाज कैसे भूल सकता है। पूज्य बड़े भैया की एक खूबी यह थी कि जहां किसी ने भी इनकी याद की व जब कभी कोई अवसर इनको ऐसा जान पड़ा कि जाने से भलाई का काम होगा तब तुरन्त ही आप वहाँ किसी भी तरह पहुँचते अवश्य थे। सामाजिक और जन-कल्याण के कामों से उन्हें विशेष प्रेम था और एक महापुरुष के रूप में उन्होंने अपना जीवन लक्ष्य यही बना रखा था कि जिस तरह से उन्होंने परिश्रम करके प्रगति की और उच्च शिखर पर पहुँचे, इसी मार्ग का दर्शन सबको कराते रहे और स्वयं व दूसरों की सहायता व दान से सबको उन्नत जीवन पर लावें। कई सभाओं व विशेष समारोहों से ऐसे समाचार सदैव मिलते थे कि स्वर्गीय श्री जैन साहब के वहाँ जाने से अद्भुत तरह से कार्य सम्पन्न होते व सब को सुविधा मिलने के साथ-साथ ऐसा वातावरण बनता था जिससे कार्यों में सफलता ही नजर आती थी। ऐसे समय 'पूज्य बड़े भैया' अपनी किसी भी कठिनाई व संकट पर ध्यान न देकर और सारी असुविधाओं को ताक में रखकर बड़े प्रेम से जा पहुँचते थे और इसी से सबके ऊपर एक ऐसी छाप पड़ गई थी कि उनके नाममात्र से ही बहुत से कार्य, असफल होने वाले भी, एक बड़ी विचित्रता से सफल हो जाते थे। विद्या-दान और दूसरों को आगे बढ़ाने में उनकी पहले ही से विशेष लगन थी। इसी के एक प्रत्यक्ष उदाहरण के

रूप से मैं अपने कुछ निजी संस्मरण लिख रहा हूँ जिनको पाठकगण सच्चे और सरल भाव से ही लेंगे।

मैं एक अजैन विद्यार्थी सन् १९२४ में मैट्रिक परीक्षा पास करके इंजीनियरिंग स्कूल, नागपुर जाने की सोच रहा था कि भाग्यवश मेरे पूज्य दादा जी से श्री जैन साहब ने मेरे पढ़ने के विषय में पूछा और उनको सलाह दी कि मुझे आगे पढ़ने होल्कर कालेज, इन्दौर में भेजा जावे। साथ ही मुझसे भी उन्होंने कालेज जाने को कहा और प्रोफेसर और प्रिंसिपल साहब को मेरे पास अपनी चिट्ठियां रख दीं। अपनी कालेज की शिक्षा का श्रेय तो मैं 'बड़े भैया' को ही दे सकता हूँ। सन् १९३० में मैंने भी एम० ए० और एल-एल० बी० की उच्च शिक्षा प्राप्त की और उनका मन बहुत प्रसन्न हुआ। उन्होंने इसके बाद मुझे अपने साथ नरसिंहपुर वकालत सीखने को रखा। उस समय वे वहां पर सब जज दीवानी कचहरी में थे। घर में सगे छोटे भाई सरीखा मैं उनके साथ रहा और मुझे अपने साथ सब जगह ले जाने और सब अफसरों व वकीलों आदि का साथ कराने में उनको जो खुशी होती थी सो मैं ही जानता था।

इसी साल दिवाली के शुभ अवसरपर उनके मामा जी जो जगदलपुर (भूतपूर्व बस्तर रियासत) के नगर सेठ थे, वहां नरसिंहपुर में मिलने आये। जब उन्हें यह मालूम हुआ कि मैं वकील बनने जा रहा हूँ तो बात ही बात में यह श्री जैन साहब ने तय कर लिया कि मैं जगदलपुर में वकालत करूँ और मैं मामा जी का सहारा पाकर वहाँ पहुँच गया। इसी बीच में इनकमटैक्स के कमिशनर सा० नागपुर जाते समय नरसिंहपुर ठहरे और श्री जैन सा० ने उनसे भेंट करते हुए मेरी बात भी छेड़ दी। जब उनको मालूम हुआ मुझे इनकमटैक्स में इन्स्पेक्टर की जगह मिल रही है तो तुरन्त मुझे तार भेजा कि मैं नागपुर जाकर इन्स्पेक्टर बन जाऊँ और इसमें कोई भी देर न करूँ। उनका यह आदेश पाकर मैं जगदलपुर छोड़कर नागपुर गया और इनकमटैक्स इन्स्पेक्टर का काम जनवरी सन् १९३१ से करने लगा। मुझे इन्हीं की कृपा से सरकारी नौकरी करने का अवसर प्राप्त हुआ और अपने कुटुम्बी जीवन पथ पर आने का सौभाग्य मिला। मेरे बारे में उनकी फिकर कुछ दूर हुई और तब से मैं उन्हीं का गुणगान करते-करते यह नौकरी करता हूँ।

संयोगवश, मैं सन् १९४२ में इनकमटैक्स आफीसर बनकर अकोला पहुँचा तो पूज्य बड़े भैया श्री जैन सा० भी वहां अडिशनल सेशन्स जज हो गये थे और हम दोनों के सरकारी अफसर के रूप में इकट्ठे होने से उनको बेहद खुशी हुई। वह मुझे सब आफीसर वर्ग में साथ-साथ ले जाते और सभी पर मेरे प्रति इतना प्रभाव, सत्कार व बड़प्पन दर्शाते कि मुझे सहम जाना पड़ता था। मैं उनके सामने से पीछे हटने का प्रयत्न भी करता तो हँसते और अलग से कहते कि भैया कुन्दन! तुमको कुछ मालूम नहीं हो सकता कि यह मेरी कितनी खुशी के दिन हैं कि जिससे मेरा दिल फूला नहीं समाता। मेरा छोटा भाई इतना बड़ा हो गया है और अभी उसको इससे भी ज्यादा बढ़ना है और मुझे उसको बढ़ाना है। मेरे जीवन में यह पहला प्रसंग था कि कौटुम्बिक सुख और शान्तिमय जीवन का उत्साह मैंने

उनके इस अकोला सहवास में पाया। उसे अभी तक हम लोग नहीं भूल पाते।

भाग्यवश, मैं सन् १६४४-४५ में सागर अपने ही जिले में इनकमटैक्स आफीसर होकर गया। यह जिला हम दोनों का ही था और बड़े भैया जैन सा० का आना-जाना वहाँ हुआ करता था। मेरे सागर आने से उनकी खुशीका वारा-पार नहीं था और वह जब-जब सागर आते मुझ अपने छोटे भाई को नहीं भूलते और अवश्य ही दर्शन देते। यहाँ से तो हम दोनों की प्रेम गाढ़ता इतना अधिक बढ़ गई कि मुझे उनके परिवार संबंधी कार्यों में घुसने की जगह मिल गई। यहां तक कि उनकी दो बड़ी पुत्रियों के विवाह संबंध में मुझे कुछ हद तक अग्र-सर भाग लेना पड़ा और उन्होंने अपने घर का छोटा भाई मानकर मुझे सब कार्यों में अपने साथ रखा। छिन्दवाड़ा में यह कार्य जिस हिम्मत, उत्साह और सूझ-बूझ से सम्पन्न हुए कि इसका प्रभाव सारे जैन जगत् में फैल गया और नई ब्याह पद्धति सुधार रूप में सब जगह अपनाई जाने लगी।

सागर से बदलकर जब मैं नागपुर सन् १६४६ में इनकमटैक्स आफीसर बनकर आया तो बड़े भैया की सन् १६३१ की याद आ गई जब कि उन्होंने मुझे इंस्पेक्टर की जगह पर भरती होने का आदेश दिया था। इस समय भी जब कभी वह नागपुर आते तो मुझ से बिना मिले नहीं रहते और मुझे उचित सिखावन भी बड़े प्रेम और उत्साह से देते।

नागपुर से मेरी बदली रायपुर के इनकमटैक्स आफीसर की जगह सन् १६४८ में हुई। अनायास सन् १६४६ में मुझे बस्तर रियासत विलीनीकरण होने से जगदलपुर के इन-कमटैक्स आफीसर का भी चार्ज लेना पड़ा जिससे मैं अपनी पहली पुरानी वकालत की जगह पहुँच कर प्रसन्न हुआ। यह खबर पाकर पूज्य बड़े भैया का मन फूला नहीं समाया। इसके पश्चात् ही ईश्वर ऐसा संयोग लाया कि वह भी जगदलपुर में अडिशनल सेशन्स जज होकर आये। हम दोनों फिर एक जगह आफीसर होकर मिल गए और मुझे अपने पूज्य बड़े भैया के संचित अनुभवों का प्रत्यक्ष लाभ मिलने लगा। यहाँ पर मुझे उनके अति निकट रहने का योग प्राप्त हुआ और यहाँ अपने घरू विशेष और रिश्तेदारी संबंधी झगड़े निपटाने का मौका मिला। इन सब में मैंने यह देखा कि बड़े भैया बहुत ही गूढ़ और पक्के इरादे के थे और अपनी बात पर अटल रहना उन्होंने जो शुरू से सीखा था उसे आखिर तक भी कायम रखा।

सन् १६५१ में पूज्य बड़े भैया की बदली नागपुर हुई और सन् १६५२ में मेरी भी बदली नागपुर मुख्य इनकमटैक्स आफीसर की जगह पर हुई। नागपुर में मैं सन् १६५२ तक रहा और फिर पूना, अकोला व नासिक रहकर नागपुर में छुट्टी व्यतीत कर रहा था जबकि ता० ४-१-६० को अचानक मेरे पूज्य बड़े भैया का स्वर्गवास हो गया। नागपुर में जब कभी कोई विशेष समस्या उनके पास आती तो वे कभी-कभी मुझे भी बुला लेते और अपनी गैर हाजिरी में मेरे ऊपर अपने घर की जिम्मेदारी छोड़ने को तैयार हो जाते थे। एक बार उनकी तबियत ठीक नहीं थी और उनका दिल अचानक बहुत घबड़ाने लगा। उन्होंने अन्त में मुझे बुलावा भेजा पर मैं नागपुर के बाहर दौरे पर था इससे मिलने नहीं जा सका। एकाएक

उन्होंने अपने भविष्य का लेखा-जोखा कर लिया और मुझे घर की जिम्मेदारी देकर सब कुछ करने वाले ही थे कि मैं आकर उनसे मिला। वह बहुत प्रसन्न हुए और अपनी सब व्यथाएँ भूल गए और हँसकर मुझ से कहने लगे कि मैंने तुमको यह यह काम सौंपा है। हम लोग बहुत ही नजदीक आ चुके थे। एक समय जब बड़े भैया मेरे घर बैठे थे तो कुछ चिंता ग्रसित से थे। मैंने पूछा कि बड़े भैया! क्या तबियत ठीक नहीं है। वह बोले—नहीं भैया कुन्दन, मैं सिर्फ सोच रहा था कि क्या गलती जीवन में हो गई। मैंने दूर तक विचार किया और कहा कि नहीं बड़े भैया! आपने कोई गलती नहीं की है। आपने अपने जीवन में जो काम किए हैं, वह दूसरे जानते हैं। अनगिनत व्यक्तियों का आपने अभी तक भला किया है। आप इन सब को तो भूल जाते हैं और यह सब आपको मालूम ही कहां से रहे क्योंकि आप सदा कामों में व्यस्त रहते हैं। हां, अगर इसको आप गलती कहें तो अवश्य मैं भी मानूंगा कि आपने गलती की। इस पर वह बहुत हँसे और कहने लगे कि ठीक है, ठीक है। अब मैं यह विचार नहीं करूँगा। आपने क्या नहीं किया! जो कुछ बना अवश्य किया है। अन्त समय में सिर्फ ३-४ दिन पहले उन्होंने मुझे फोन पर कहा कि कुन्दन भैया! कुछ तबियत ठीक नहीं सो मिलने आना। मैंने तुरन्त आश्वासन दिया कि आज ही मिलूंगा, जिस पर वह तैयार नहीं हुए और उन्होंने मुझे आदेश दिया कि तीन-चार दिन बाद सहूलियत से मिलना। कोई फिकर करने की बात नहीं है। मैं इस आदेश का पालन कर उनसे उस दिन नहीं मिला, पर यह क्या मालूम था कि यह आदेश अन्तिम था। मैं मिलने जाने की बाट में था कि एकाएक फोन पर शाम को खबर दी गई कि पूज्य बड़े भैया दिल का दौरा होने से चल बसे। उनकी दिव्य आत्मा को शान्ति मिले यही अब मेरी प्रार्थना रह गई है। ओम् शांति! ओम् शांति!! ओम् शांति!!!

असली और नकली चेहरे

— श्री फूलचन्द 'मधुर', सागर —

यह तो सभी जानते है कि श्री जमनाप्रसाद जी कलरैया जहाँ-जहां भी रहे, एक मिशनरी के ढंग से कार्य करते रहे। निरुद्देश्य अपने सारे जीवन में वे कहीं भी, कभी भी, एक-क्षण भी नहीं रह सके। कुछ न कुछ करते रहने की उन्हें हाबी थी। लेकिन इतने पर उन्होंने अपने उद्देश्य की सफलता के लिए कभी अपने सिद्धान्तों से, नैतिकता से, विश्वास से समझौता नहीं किया, भले ही उनको लक्ष्य प्राप्ति विलम्ब से हो अथवा नहीं हो।

बात सन् १९४६ के आस-पास की है। श्री कलरैया जी अमरावती में एडीशनल डिस्ट्रिक्ट जज थे। वहां हिन्दी की कोई शाला न होने के कारण हिन्दी भाषियों को अपने बच्चों को शिक्षा देने की असुविधा थी। यह ज्ञात होते ही उन्होंने वहाँ हिन्दी माध्यमिक कराने स्थापित शाला का प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया।

उसी दौरान मुझे अमरावती जाना पड़ा। उन्हीं के यहां उतरा। सायंकाल श्री कलरैया जी के साथ घूमने निकला। इसी विचार के एक प्रसिद्ध नेता के यहाँ भी हम लोग पहुँचे। बात-चीत के दौरान उक्त नेता जी ने श्री कलरैया जी द्वारा हिन्दी शाला की स्थापना के लिए किये जा रहे प्रयत्नों के सम्बन्ध में भी पूछा और कहा—इस कार्य में मैं आपकी मदद करना चाहता हूँ। यदि आप एक कार्य करा सकें तो शाला की स्थापना के लिए कम से कम पचास हजार रुपया एकमुश्त प्राप्त हो सकते हैं। यदि थोड़ी भी चेष्टा की जावे तो उक्त राशि एक लाख तक भी हो सकती है। "लेकिन वह कार्य कौन-सा है?" श्री कलरैया जी ने पूछा।

नेता जी बोले, "अत्यन्त ही साधारण बात है आपके लिए तो। जो आपको स्वयं करना भी नहीं है, दूसरों से करवा दीजिए। हैदराबाद निजाम के प्रधान मन्त्री अगले साल अमरावती आ रहे हैं। यदि उन्हें एक मानपत्र नागरिकों की ओर से दिलवा दें जिसमें यह वाक्य अवश्य हो कि "हम सब बरार निवासी सदैव से आपकी प्रजा रहे और आगे भी रहना चाहते हैं। तो उनसे पचास हजार से एक लाख रुपया तक का चेक दिलवाने का जिम्मा मेरा है।"

उन दिनों हैदराबाद निजाम रियासत का विकेन्द्रीकरण नहीं हुआ था और बरार पर भी कब्जा करने का षड्यन्त्र भीतर ही भीतर चल रहा था। नेता जी के इस प्रकार के

प्रस्ताव पर सहसा श्री कलरैया जी को विश्वास नहीं हुआ, लेकिन जब उन्होंने विश्वास दिलाया कि उनकी अमरावती यात्रा का कार्यक्रम उन्हीं के द्वारा बनाया जाना है तब कलरैया जी का मन घृणा और क्षोभ से भर उठा। यद्यपि हिन्दी शाला की स्थापना का स्वप्न उनका साकार होना था, लेकिन देश के लिए विश्वासघात कर अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकने का प्रस्ताव और वह भी नगर के ऐसे विशिष्ट व्यक्ति द्वारा प्राप्त होगा, इसकी उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी। शान्त और संयत शब्दों में उन्होंने उत्तर दिया "मैं तो केवल एक सरकारी कर्मचारी हूँ। यह कार्य तो जनता का है और जनता तक मेरी पहुँच नहीं है। मेरा तो इतना प्रभाव नहीं है।"

महान् व्यक्तित्व

— श्री यू० सी० जैन, खण्डवा —

हमारे लिए स्वर्गीय जमनाप्रसाद जी कलरैया एक अध्ययन हैं और हैं हमारे अपने समय के एक प्रश्न चिन्ह भी। मैंने उन्हें हर दृष्टि से देखा, समझा और सम्भवतः अनुसरण भी किया।

उनकी शीलता, उनका तारुण्य, उनका व्यक्तित्व और उनकी समय सूचकता ने समाज और कार्यकर्त्ताओं में सामंजस्य रखा है!

मुझे सन् १९३८ के खंडवा परिषद् अधिवेशन के प्रसंग का स्मरण है, जबकि मैं स्वतः इस अधिवेशन का स्वागत मंत्री था। महिला परिषद् के एक भयंकर प्रस्ताव से भयंकर तनाव बढ़ा था जिसे स्वर्गीय बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी व स्वर्गीय अर्जुनलाल जी सेठी ने अपने-अपने प्रयत्नों से ठीक किया था और वातावरण स्वच्छ किया था।

यहाँ से नजदीक ही हरदा शहर में सिविल जज रहने के कारण उनसे मेरा निकट सम्बन्ध रहा। सामाजिक समस्याओं को लेकर और हमारे अपने दृष्टिकोणों को लेकर पत्र व्यवहार भी होते रहे। वे सदैव सहकारिता व सामुदायिक ढंग से सामाजिक क्रांति चाहते थे वैयक्तिक ढंग से नहीं।

समाज में अन्तर्जातीय विवाह उन्होंने अपने सहयोग से करवाये और अपने कुटुम्ब में भी किये ताकि जैनियों की उप-जातियों में भेद-करण न रहे। इस मान्यता को जितनी शक्ति अथवा गति मिलना चाहिए थी, वह अभी प्राप्त नहीं हो पा रही है, बावजूद परिषद के प्रस्तावों के।

इस प्रश्न को अत्यधिक वेग से आगे बढ़ाना है, तभी संपूर्ण जैन समाज एकत्व का भाव निर्माण कर सकेगा।

सामूहिक विवाह प्रथा जारी करना स्वर्गीय बैरिस्टर साहिब की सूझ की देन है जिससे अति गरीब मध्यम, गरीब और बड़ा गरीब, बाह्याडंबर पर आवरण डालकर, सादगी से अपनी कन्या अथवा पुत्र का विवाह कर सकता है, बहुत कम खर्च से। इसमें निर्भीक कदम बढ़ाने की और भी आवश्यकता है।

स्वर्गीय बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी आज अगर जीवित रहते तो और कुछ उनके अपने संजोए सपने साकार करते। किन्तु वे जीवित नहीं हैं, इसलिए उनके शेष बचे कार्यों को हमें करना है और दृढ़तापूर्वक करना है।

मध्य प्रदेश की महान विभूति

— मास्टर उग्रसेन जैन काशीपुर —

संसार में हजारों मनुष्य रोजाना मरते हैं जिनको बहुत कम लोग जानते हैं। मगर कोई-कोई व्यक्ति ऐसे होते हैं कि जिनकी मृत्यु पर हजारों और लाखों मनुष्य रोते और उनकी याद करते है। बैरिस्टर जमनाप्रसाद जी रिटायर्ड जज उनमें से एक थे जिनका ४ जनवरी १९६० को नागपुर में दिल की गति रुक जाने से स्वर्गवास हो गया। उनका सारा जीवन विद्यार्थियों की सहायता करने, बेवाओं का जीवन सुधारने, अपने भाइयों के आपसी झगड़े निबटाने और बावजूद बहुत बड़ी सरकारी पोस्ट, यानी ऐडीशनल सेशन्स जज होते हुये, समाज की रूढ़ियों से टक्कर लेने और उनका सर्वनाश करने में बीता। कई बार उनको सरकार की तरफ से कहा गया कि आप पब्लिक से इतना ज्यादा न मिला-जुला करें। मगर उन्होंने कभी इसकी परवाह न की। पिछले पांच-छः वर्ष से उन्हें आदर्श सामूहिक शादियां कराने की धुन लगी हुई थी। मध्य भारत के छोटे से छोटे तीर्थ के मेले पर वे स्वयं पहुँच जाते और वहां १०, २०, ५०, १००, २०० सामूहिक शादियां ११-११ रुपयों में कराते। द्रोणगिरि पंचकल्याणक पर उन्होंने मुझे तार देकर काशीपुर से बुलाया। पंचकल्याणक की समिति कुछ लोगों के भड़काने से मेले पर आदर्श विवाह कराने के विरोध में हो गई। उन्होंने पुलिस में श्री जमनाप्रसाद जी और मेरे विरुद्ध रिपोर्ट कराई। पुलिस के सिपाही हम दोनों को पुलिस स्टेशन में ले गये और चार-पांच घंटे तक हम दोनों को वहाँ रहना पड़ा। थानेदार ने हरचन्द जमनाप्रसाद जी को समझाने की कोशिश की कि आप मेले के बाद यहीं पर आदर्श शादियां करा लें मगर अब मेले पर न करायें। इसमें झगड़े का अन्देशा है। उन्होंने कहा कि मैं और उग्रसेन आपके पास मेला खत्म होने तक रहेंगे। मगर जो आदमी अपने बच्चों का मेले पर विवाह करना चाहते हैं, आप किस कानून से उनको रोक सकते हैं। थानेदार समझता था कि आदर्श विवाह कोई जुर्म या बुराई नहीं है। इसलिये मजबूर होकर उसने कहा कि अच्छा तो आप आराम कीजिये। लोगों में पहले से ज्यादा जोश फैल गया और उसी रात को ८-१० शादियां ४-५ हजार आदमियों के बीच में बड़े ठाठ से हुई। मैंने वहां पर देखा कि नौजवान लड़के और लड़कियों के पिता जमनाप्रसाद जी के पीछे-पीछे फिरते और कहते—जज साहब हमारे बच्चों की आज जरूर शादियां करा दें।

जबलपुर में परिषद का अधिवेशन समाप्त हो रहा था कि श्री जमनाप्रसाद जी एक दम प्लेटफार्म पर आये और घोषणा की कि आज रात को इसी पण्डाल में ४ आदर्श विवाह और होंगे। वकिंग कमेटी के सब सदस्य वहां मौजूद थे। किसी को भी उनके प्रोग्राम का पता नहीं था। मगर उनकी बात का कौन विरोध कर सकता था। जलसा समाप्त हो रहा था। डेढ़-दो घण्टे बाद जबलपुर पंचायत का एक सन्देश मेरे पास आया कि अब परिषद का जलसा समाप्त हो चुका है, परिषद पण्डाल में और कोई कार्यक्रम न हो सकेगा। मैंने जमनाप्रसाद जी को खबर दी। उन्होंने कहा—"भैया! इन लोगों को कहने दो, हमारा प्रोग्राम अवश्य चलेगा" तुरन्त ही कुछ नौजवानों को बुलवाकर जैन स्कूल के सामने का मैदान साफ करने के लिये कहा। आधे घण्टे के अन्दर ५-६ हजार स्त्री-पुरुष जमा हो गये और पहली बार ३ आदर्श शादियां बड़ी शान के साथ हुई। साहू शान्तिप्रसाद जी और बाबू रतनलाल आदि ने तीनों जोड़ों को आशीर्वाद दिया और तिलक किया। इसके पश्चात् श्री अयोध्याप्रसाद जी गोयलीय और श्री कौशलप्रसाद जी ने एक बड़ा शानदार जलूस तीनों जोड़ों का निकाला।

एक बार ५० साल का एक सेठ १०-११ साल की लड़की से शादी करने जा रहा था श्री जमनाप्रसाद जी को किसी तरह उसका पता लग गया। उस वक्त वह वहाँ मुन्सिफ मैजिस्ट्रेट थे। फौरन १०-१२ नौजवानों को साथ लेकर स्टेशन पर पहुँच गये और जब गाड़ी चलने लगी तो उन्होंने सेठ जी को गाड़ी से जबरदस्ती नीचे उतार लिया और इस तरह विवाह को रोक दिया। उन्होंने एक बार मेरे साथ उत्तर भारत का टूर किया। एक स्थान पर उनको मालूम हुआ कि दो भाइयों में तकसीम का झगड़ा बहुत दिनों से चल रहा है। उन्होंने उनको बहुत समझाया मगर वे नहीं माने। जमनाप्रसाद जी मन्दिर में जाकर बैठ गये और मौन धारण कर लिया और कहा कि जब तक ये लोग आपस में फैसला नहीं करेंगे मैं यहीं बैठा रहूँगा। आखिर दोनों भाई आपके पास आए और जमनाप्रसाद जी ने थोड़ी देर में ही उनका फैसला करा दिया।

बावजूद बैरिस्टर और सेशन जज होने के वह पक्के धर्मात्मा भी थे। एक बार मैं उनके पास छिन्दवाड़ा मिलने गया। सुबह जब सोकर उठे तो वह मुझे एक बड़े कमरे में ले गये जहाँ उनकी स्त्री और सब बच्चे जमा थे और हम सबने मेरी भावना का पाठ किया। मालूम हुआ उनका यह दैनिक कार्यक्रम था। नहा-धोकर जब मैं फारिग हुआ तो मैंने मंदिर जी जाने की इच्छा की। उन्होंने हंस कर कहा—भाई! हम तुम्हें भगवान के दर्शन यहीं पर करा देंगे और वह मुझे अपने बंगले के एक कमरे में ले गए जहां भगवान की प्रतिमा विराजमान थी जिनकी वह रोजना प्रक्षाल और पूजन किया करते थे। जब कभी बहुत दिन बाद मिलते थे तो दूर से आकर बगलगीर हो जाते और कई मिनट तक नहीं छोड़ते थे। कभी-कभी ज्यादा खुशी से इनकी आँखों में आँसू आ जाते थे। मिलनसार इतने थे कि मध्य प्रदेश का हर गाँव और कस्बा उनका घर था। वह हर एक से भैया कहकर बोलते, उधर के भाई उन्हें कलरय्या जी कह कर सम्बोधित करते थे। वह बड़े आदमियों की निस्बत छोटे आदमियों से मिलकर ज्यादा खुश होते थे। जब कभी उनको गुस्सा आता तो वह किसी की मान नहीं सकते थे। उनके लड़के की बारात बिलारी गई थी। मैं भी बारात में गया हुआ

था। वहां पर किसी बात पर वह बिगड़ गए और गुस्से को बरदास्त न कर सके तो सो गए और फेरों पर भी न गए। अधिक गुस्सा करने से ही उनको दिल की बीमारी हो गयी थी। जब कभी किसी पर बिगड़ जाते तो थोड़ी देर बाद उसको जाकर समझाते। उनका दिल अन्दर से साफ था। उनके दिल में जैन समाज के लिए अगाध प्रेम था और वह अपना बाकी जीवन जैन समाज की सेवा में लगाना चाहते थे तथा देहली में रहकर परिषद के कार्य को व्यवस्थित करना चाहते थे।

डा० हीरालाल जी उनके बचपन के साथी हैं। उनको धवला की टीका लिखनी थी जिसके लिए काफी द्रव्य की जरूरत थी। इटारसी में परिषद का अधिवेशन था और जमनाप्रसाद जी अधिवेशन के सभापति थे। डा० हीरालाल जी भी वहां मौजूद थे। स्व० ब्र० शीतलप्रसाद ने वहां का क्षेत्र तैयार किया हुआ था। जमनाप्रसाद जी ब्रह्मचारी जी को अपना गुरु कहा करते थे। परिषद की मीटिंग होने वाली थी। मगर श्री जमनाप्रसाद जी के आने में बड़ी देर हो गई। जब वह आये तो बै० चम्पतराय जी ने कहा कि हम सब आपके इन्तजार में बहुत देर से बैठे हैं। बैरिस्टर साहब ने कहा—मैं सुबह से सेठ लक्ष्मीचन्द जी के साथ पूजन कर रहा था इसलिये देर हो गई। आज उनसे धवला के लिये १० हजार रुपया लेना है। चुनांचे परिषद का पहला प्रस्ताव धवला की टीका कराने का था जिसके लिये सेठ लक्ष्मीचन्द जी भेलसा वालों ने १० हजार रुपये के दान की घोषणा की। बा० रतनलाल जी, बा० लालचन्द जी और हम सब सेठ जी के पास बैठे हुये थे और उनके हाथों के सोने के कड़ों, गले में माला और कानों के कुण्डलों को देखकर मुस्करा रहे थे। हमें क्या मालूम था कि वे एक सच्चे जिन वाणी भक्त हैं।

जबलपुर में जो कि उस समय रूढ़िवादियों का गढ़ कहा जाता था, परिषद का अधिवेशन कराना उन्हीं का कार्य था। श्री जमनाप्रसाद जी की वीरता और समाज सेवा के ऐसे बहुत से कारनामे हैं जिनका मेरे जीवन पर गहरा असर पड़ा। नामालूम उन्होंने कितने गरीब भाइयों, विद्यार्थियों और बेवाओं का उपकार किया। उनका उसूल था कि नेकी कर और कुएँ में डाल। ऐसा निस्वार्थी कार्यकर्त्ता मैंने नहीं देखा। हम सबका उनसे सम्बन्ध इटारसी के अधिवेशन में हुआ और उन पर अटल विश्वास और श्रद्धा हो गई। मध्य भारत में परिषद का कोई कार्य बिना उनकी सलाह के नहीं होता। उनकी मृत्यु से जैन समाज और परिषद को जो क्षति पहुँची उसका पूरा होना असम्भव है। पिछले दिनों जैन कन्वेन्शन के समय में बीमार होने की हालत में भी वह देहली पधारे और जैन मूर्तियों के चोरी के मुकदमे की पैरवी करने का भार स्वयं उन्होंने अपने ऊपर लिया। उनकी इतनी सेवाएँ हैं कि जिनका लिखना बड़ा मुश्किल है। मैं मध्य भारत के नौजवानों और उनके साथी कार्यकर्त्ताओं से प्रार्थना करूँगा कि वे जल्द से जल्द ललितपुर, सागर, भेलसा या जबलपुर में इकट्ठे होकर उनके मिशन को पूरा करने की योजना बनाएँ ताकि उनकी आत्मा को सच्ची शान्ति मिले और आखिरी जीवन में उन्होंने तो तीर्थरक्षा और सामूहिक विवाह का कार्य अपने हाथ में लिया हुआ था उसको आगे बढ़ायें। हमारे समाज में यह एक बड़ी कमी है कि हम अपने

नेताओं को बहुत जल्द भुला देते हैं और केवल शोक प्रस्ताव पास करके चुप बैठ जाते हैं।

भाई जमनाप्रसाद जी से मेरा परिचय पहले-पहल परिषद के इटारसी अधिवेशन में हुआ था। वे एक बड़े कर्मठ, वीर, साहसी और सहनशील समाज सेवक थे। उनके हृदय में समाज सुधार तथा धार्मिक प्रचार की सच्ची और वास्तविक लगन थी। एक बार का जिक्र है कि एक कोई बूढ़ा व्यक्ति किसी नवयुवती से विवाह करना चाहता था। लड़की उस सम्बन्ध से सहमत नहीं थी। भाई जमनाप्रसाद जी उस समय इनकमटैक्स अफसर थे। उन्हें इस विवाह के सम्बन्ध में सूचना मिली। उन्होंने यह विवाह नहीं होने दिया। इनको मार भी पड़ी और बहुत सी गालियां सुननी पड़ीं। इन सब बातों के होते हुए भी वह घबराए नहीं और उस लड़की का किसी अन्य सुयोग्य वर के साथ विवाह करा दिया। यह घटना उनकी सहनशीलता, निर्भीकता तथा सुधारवादी होने की परिचायक है।

सतना अधिवेशन में, जो हमारे परम मित्र बा० लालचन्द जी जैन एडवोकेट रोहतक की अध्यक्षता में हो रहा था, उस समय कुछ विरोधी पक्ष के भाई लड़ने-मरने के लिए तैयार होकर मंच पर आना चाहते थे और एक प्रकार का उपद्रव खड़ा करना चाहते थे। उस समय में वीर और साहसी भाई जमनाप्रसाद जी ने ललकार कर बड़ी वीरता के साथ उनको चुनौती दी कि मेरा सिर फोड़कर और मेरी लाश पर से आप अन्दर जा सकते हैं। विरोधियों को साहस नहीं हुआ कि वे उनका मुकाबला करें। वे स्वयं ही तितर-बितर हो गए तथा परिषद का अधिवेशन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

भाई जमनाप्रसाद जी सुधारक भी उच्चकोटि के थे। सामूहिक विवाहों की प्रथा उन्होंने ही चालू की। मध्यप्रदेश में इस प्रथा को अच्छी सफलता प्राप्त हुई। फरवरी सन् १९५६ में उन्होंने अपने पुत्र का विवाह देहली में इसी विधि से किया और जैन जनता के सामने एक आदर्श रखा। यह विवाह एक अन्तर्जातीय विवाह भी था। मैं और मेरे आदरणीय मित्र बा० नानकचन्द जी इटारसी के अधिवेशन में गए थे। रात को मैं अपना भाषण दे रहा था कि पंडाल के जिस भाग में महिलाएँ पर्दे के अन्दर बैठी हुई थीं शोर-गुल की आवाज आ रही थी। मैंने कहा कि यदि महिलाओं के सामने से पर्दा हटा दिया जावे तो इतना शोर-गुल न हो। भाई जमनाप्रसाद जी ने अपने कुछ वालंटियरों को पर्दा उठाने तथा चिकों की रस्सियाँ काट देने की आज्ञा दी। उनके आदेश का शीघ्र पालन किया गया और इसी अधिवेशन में उनके प्रभाव तथा प्रेरणा से सेठ सिताबराय लक्ष्मीचन्द जी ने भेलसा में अपने खर्च से जैन कालेज खोलने की घोषणा की। इससे उनका विद्या-प्रेम तथा धार्मिक शिक्षा प्रचार की प्रबल इच्छा प्रकट होती है।

सरकारी नौकर होते हुए भी वे सही और सच्ची बात का प्रतिपादन करने में कभी नहीं डरते थे। इटारसी अधिवेशन में ही ह्वाइट पेपर के सम्बन्ध में एक विवाद-ग्रस्त प्रश्न पैदा हो गया जिसको उन्होंने बड़ी निर्भीकता और सुन्दरता के साथ सुलझाया।

बा० लालचन्द जी की अध्यक्षता में मध्यप्रदेश के दौरे में ललितपुर, भोपाल, इंदौर, उज्जैन आदि जाने में हमारा उनके साथ एक सप्ताह तक साथ रहा। उनकी सहायता

तथा प्रभाव से वह दौरा बड़ा सफल रहा। वे हँसमुख तथा हँसोड़ प्रवृत्ति के व्यक्ति थ। उनके चेहरे पर उदासी तथा तेवड़ी में बल मैंने कभी नहीं देखे। वे बच्चों में बच्चे तथा बूढ़ों में बूढ़े थे। बड़े दक्ष थे। गूढ़ से गूढ़ समस्या को भी अपनी बुद्धि के बल से हल कर देते थे।

बैरिस्टर तथा सेशन जज जैसे उच्च पद पर होते हुए भी उनमें तनिक भी अभिमान नहीं था। वे समानता का बर्ताव करते थे। यही बातें उनकी ऐसी थीं जिनसे जैन समाज में उनकी प्रतिष्ठा थी और जहां वे जाते थे वहां उनका बड़ा आदर तथा सम्मान होता था। पैंशन पाने के बाद हमें उनसे बड़ी भारी आशाएँ थीं कि वे समाज की सेवाएँ करने के लिए अधिक समय दे सकेंगे और समाज की उन्नति के और भी कार्य कर सकेंगे परन्तु मृत्यु के कठोर हाथों ने उनको हम से छीन लिया।

मेरे जीवन सहचर

— श्रीमती श्यामाबाई जैन, नागपुर —

हर सधवा हिन्दू स्त्री की यही आकांक्षा रहती है कि वह अपने पति के कन्धों पर चढ़कर ही उस स्थान पर पहुँचे, जहां कि प्रत्येक मनुष्य को अनन्त शान्ति की गोद में विश्राम करने के पश्चात् जाना पड़ता है। मेरी भी सदा यही आकांक्षा रही है, किन्तु निष्ठुर विधाता को शायद यह मंजूर नहीं था। जिस बात की मैंने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी, जब वही सामने आई तो मुझे इस संसार से विरक्ति पैदा हो गई। ईश्वर ने ४ जनवरी सन् १९६० को मुझसे मेरा सर्वस्व छीनकर मुझे सदा के लिए पातिव्रत धर्म से वंचित कर दिया। कितना अशुभ दिवस था ४ जनवरी, किन्तु मातृत्व का बंधन न टूट सका, वह आज भी मुझे इस संसार के झूठे माया-मोह के जाल में फंसाये हुए है। उनकी स्मृति हृदय में छुपाये आज भी उनकी फुलवारी के फूलों की रक्षा कर रही हूँ।

ग्यारह वर्ष की अवस्था में मेरा उनके साथ पाणिग्रहण संस्कार हुआ था और चौदह वर्ष की अवस्था में गौना होकर (जैसा कि उन दिनों में रिवाज था) मैं सदा के लिए इस घर में गृहवधू बनकर आ गई। उस समय मेरे पति इलाहाबाद के कालेज में विद्याध्ययन कर रहे थे। उनकी माता की मृत्यु तो उनकी बाल्यावस्था में ही हो गई थी। घर में केवल मेरे ससुर और पांच ननदें थीं। इकलौती बहू होने के नाते मेरा जितना लाड़ प्यार हुआ है, उतना शायद किसी का भी नहीं हुआ होगा।

मेरा ब्याह तो मेरे ससुर की पसन्दगी से ही हुआ था। उन दिनों लड़की देखने का कोई रिवाज भी नहीं था। मै दिखने में साधारण हूँ, इसलिए सब लोग यही कल्पना कर रहे थे कि मेरे पति मेरा त्याग कर अवश्य ही दूसरा ब्याह कर लेंगे। किन्तु यह मेरा सौभाग्य था कि उनके योग्य न होने पर भी उन्होंने मुझे केवल अपनाया ही नहीं, बल्कि सहधर्मिणी के नाते एक पत्नी के सारे अधिकार भी मुझे दिये।

मेरे पति बहुत अधिक पढ़े-लिखे थे। इंगलैंड से बैरिस्टरी पास करके आये थे। उच्च सरकारी पद पर न्यायाधीश थे। किन्तु फिर भी उन्होंने मुझ जैसी अनपढ़ के साथ अपना जीवन कितने स्नेह और प्रेम के साथ बिताया, यह याद आते ही हृदय टूक-टूक हो जाता है। जीवन तो संघर्ष है ही। कभी कभी जीवन में ऐसे भी मौके आये हैं, जब व मुझसे कई बातों

पर बहुत अधिक क्रोधित हुए हैं, किंतु बहुत कम। युवावस्था में ही ऐसे मौके आये, बाद में नहीं। जीवन के लम्बे ४० वर्ष जिनके साथ बिताये हैं, आज उनके अभाव में एक-एक पल कटना मुश्किल हो रहा है।

वे कितने महान् थे, यह जैन समाज अच्छी तरह जानती है। बचपन से ही समाज सेवा की उन्हें धुन थी। अपने स्वास्थ्य की परवाह न करते हुए भी उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश समय समाज सेवा में ही बिताया। अंतिम दिनों में हृदय रोग के कारण वे बहुत अधिक कमजोर हो गये थे, पर समाज सेवा के कार्य उनसे नहीं छूटे। उनका सदा यही कहना था—"नरेन्द्र की मां! भले ही शरीर मेरा साथ न दे, पर समाज-सेवा की तड़फ मेरे हृदय में अन्तिम क्षण तक रहेगी" और हुआ भी वही। उन्होंने अपने जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गंवाया। सदा दूसरों का परोपकार ही करते रहे। शिक्षा से तो उन्हें बहुत अधिक प्रेम था। जब मैं ब्याह कर आई थी, तब आपने मेरे लिए घर पर ही अंग्रेजी पढ़ाने के लिए एक मास्टर रख दिया था। उन मास्टर साहब के सामने एक हाथ लम्बा घूंघट निकाल कर मुझे अंग्रेजी की शिक्षा प्राप्त करनी पड़ी थी। इसके बाद उन्होंने लड़के-लड़कियों को भी ऊँची से ऊँची शिक्षा देने का पूरा-पूरा प्रयत्न किया। शिक्षा प्रेमी होने के कारण उन्होंने समाज के धनी-मानी व्यक्तियों का पैसा स्कूल और कालेज खुलवाने में लगवाया, धर्मशालाएँ बनवाईं, गरीब विद्यार्थियों को स्कालरशिपें दिलवाईं, उन्हें नौकरियां दिलवाईं और स्वयं भी आर्थिक मदद पहुँचाई। कभी-कभी मैं और मेरे बच्चे उनकी इस परोपकार-वृत्ति पर झुँझला पड़ते थे, पर उनके मुखपर कभी सिकुड़न नहीं आई और न ही वे अपने सत्कार्यों से पीछे हटे।

अब उनके बिना मेरा संसार सूना हो गया है; जीवन भारस्वरूप प्रतीत होने लगा है; किन्तु बच्चों का मोह भी शायद बहुत अधिक प्रबल होता है, जो कि मुझे आज भी जीवित रखे हुए है। अब तो इस संसार में जीवित रहने के लिए मुझे केवल ईश्वर ही शक्ति प्रदान कर सकता है, क्योंकि मेरी असली प्रेरणा तो सदा के लिए मेरा साथ छोड़ गई।

उत्साहमूर्ति बैरिस्टर जमनाप्रसाद

— डा० ए. एन. उपाध्ये, कोल्हापुर —

मुझे स्वर्गीय नाथूराम जी प्रेमी और अपने मित्र तथा साथी डा० हीरालाल जी जैन के जरिये बैरिस्टर जमनाप्रसादजी से परिचय हुआ था जो जज साहब के नाम से ज्ञात थे। जब १९४१ के ग्रीष्मकाल में गजपन्था में जीवराज जैन ग्रंथमाला के विषय में निश्चय हुआ था, उस समय मुझे श्री जमनाप्रसाद जी के साथ कुछ दिन रहने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। उनके व्यक्तित्व में अनेक विशेषताओं का मुझे परिचय मिला। जैन समाज के विकास और जैन साहित्य के अध्ययन के लिये वे विशेष प्रयत्नशील थे। धवला ग्रन्थ प्रकाशित होने का श्रेय तो उन्हीं को है। बड़े मिलनसार और प्रेमी थे और जीवन भर कुरीतियों और पाखण्ड का विरोध करते रहे। वे स्पष्टवादी और आत्मविश्वासी थे और साथ ही बड़े भावुक भी थे। इतने उत्साही समाजसेवी के उठ जाने से समाज की बड़ी क्षति हुई है। उनकी आत्मा को शान्ति प्राप्त हो।

अदम्य उत्साह और धैर्य के प्रतीक

— श्री हरिकिशोर दुबे, होशंगाबाद —

श्री जमनाप्रसाद जी जैन से मेरा घनिष्ट सम्बन्ध सन् १९५३ से उनकी मृत्यु पर्यन्त रहा। इस अरसे में मैंने उनसे अनेक गुण सीखे। निरन्तर हँसते रहना, कठिन से कठिन समस्याओं और परिस्थितियों में धैर्य्य तथा अदम्य साहस रखना, यही उनकी सफलता के मूल मंत्र थे।

उन्होने अपना कार्य करते हुए जैन समाज की सेवा करने का जो प्रयास किया और उसमें जो सफलता हासिल की वह स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है।

ऐसा ही एक प्रयास उन्होंने अपने होशंगाबाद के सेवा काल में किया था। चतराबाई जैन ट्रस्ट की जो स्थापना हरदा, (मध्य प्रदेश) में हुई, उसके फलस्वरूप उत्तराधिकार कानून की धारा १९२ के अन्तर्गत एक याचिका डिस्ट्रिक्ट जज होशंगाबाद के न्यायालय में प्रस्तुत की गई थी जो लगभग६ वर्ष चली। श्री जैन ट्रस्टी होने के नाते उसमें पक्षकार थे। उनके साथ मुझे भी इस मुकदमे में पैरवी करने का मौका आया। मुकदमे के लगभग अंत में विरोधी पक्ष ने एक आवेदन प्रस्तुत किया जिसमें कहा गया था कि चतराबाई ने जो अंगूठा ट्रस्ट कायम करने के समय लगाया था, वह उनके मरने के पश्चात् लगवाया गया और वह जाली है। श्री जैन पर यह आरोप लगा क्योंकि सब कार्रवाई चतराबाई ने उनकी उपस्थिति में ही की थी।

न्यायालय ने एक हेण्डराईटिंग एक्सपर्ट को आवेदक की ओर से साक्ष्य में लिया। हम लोग अत्यन्त घबड़ा गए, परन्तु श्री जैन किंचित् भी क्षुब्ध नहीं हुए और हमेशा हँसकर टाल देते। एक्सपर्ट से उन्होंने स्वयं जिरह की और उससे पूछा कि दाहने हाथ के अंगूठे की लकीरों की आकृति बाएं हाथ की लकीरों से भिन्न होती है। चतराबाई के अंगूठे की निशानी पर यह नहीं लिखा था कि वह किस अंगूठे की निशानी है। फलतः वादी के जाली अंगूठे का प्रश्न उठाना निरर्थक रहा और मुकदमे पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

इस प्रकार की अनेक घटनाएं हैं जो श्री जैन के धैर्य और साहस की परिचायक हैं। उन्होंने यह भी बतला दिया कि सरकारी सेवा में संलग्न व्यक्ति भी समाज की सेवा कर सकता है। ऐसे व्यक्ति बहुत कम होते हैं। उनकी असामयिक मृत्यु से सम्पूर्ण समाज को गहरी क्षति हुई है।

बैरिस्टर जमनाप्रसाद : एक देवोपम व्यक्तित्व

— श्री मनुज्ञानार्थी मानव —

लोक-व्यवहार में मनुष्य कहता है—समय की गति के अनुसार चलो। पर सुधारक और समय की गति में न कभी सामञ्जस्य हुआ है और न होगा। बुद्ध, महावीर, ईसा और गांधी समय की गति के अनुसार नहीं, अपने अनुसार समय को चलाने वाले थे। महर्षि दयानन्द और राजा राममोहन राय समय की गति में अपनी गति कभी न मिला सके। उन्होंने तो समय को ललकारा और अपने विचारों के अनुरूप समय के रथ को मोड़ दिया।

बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जैन समाज में भी एक ऐसे महापुरुष का उदय हुआ जिसने समय की गति को बड़ी दृढ़ता से ललकारा और सहस्रों विरोधों एवं वर्जनाओं का मुंह बन्द करके वह किया जो रूढ़िजर्जर समाज के लिए श्रेयस्कर था। वह महापुरुष थे, धुन के धनी, चिर-युवा बैरिस्टर जमनाप्रसाद।

मुझे स्मरण है, आज से लगभग २०-२२ वर्ष पहले मैंने उन्हें ललितपुर में देखा था। नगर की जैन-समाज में बड़ी हलचल थी उनके नाम को लेकर। मैं उन दिनों अध्ययन कर रहा था। प्रथम-दर्शन में मैं उनसे तनिक भी प्रभावित न हो सका। विशेषता कहीं से दीखी ही नहीं। सामान्य वेष-भूषा, सबसे आत्मीयतापूर्वक बात करते, सब में घुल-मिल जाते। अनेकों का उपकार करते पर ऐसे जैसे कुछ किया ही नहीं। बच्चों में बच्चों जैसी बातें और बड़ों में बड़प्पन का रौब न जताते हुए सामान्य व्यक्ति जैसे। भला, जो वेष-भूषा, बात-चीत और व्यवहार आदि में दूसरों से बड़ा अपने को प्रकट न करे वह बड़ा भी कैसा? व्यक्ति के बड़प्पन का मापदण्ड कुछ इसी ढंग का बना बैठा था मेरा किशोर-मन। और, बनाता भी क्यों नहीं। ऐसे व्यक्ति ही तो समाज में बड़े गिने जाते हैं। हाँ, उनका नपा-तुला गठीला शरीर, मुख की ताम्र-आभा और बिजली की चमक से भी अधिक चमकीली आंखें स्मृति में कुछ अटकी रहीं। पर ऐसे तो बहुत व्यक्ति दीख जाते हैं। भला, इन बातों में प्रभावित होने की बात ही क्या हो सकती थी।

धीरे-धीरे समाज की शिक्षण संस्थाओं में मेरा शिक्षण आगे बढ़ता रहा। संस्थाओं के मंत्रियों, सदस्यों और सामाजिकों की अहंमन्यता, धार्मिक अन्धविश्वास, अभिमान, छल-

प्रपञ्च, विद्वेष, लोलुपता और अनाचार एक-एक करके मेरे सामने आते रहे। विस्मृति के गर्भ में दबा हुआ वह गठीला शरीर, मुख की ताम्र-आभा और बिजली की चमक से भी अधिक चमकीली आंखें अनायास ही स्मृति-पटल पर तैरने लगीं। मैंने अनुभव किया कि अन्धविश्वासों और परम्पराओं की शृङ्खलाओं से मुक्त करने के लिए जितना सबल प्रहार बै० जमना प्रसाद कर रहे हैं, शायद किसी की पहुँच वहां तक है ही नहीं। यदि किन्हीं दो-चार की पहुँच रही भी है तो वे केवल सैद्धान्तिक प्रवक्ता मात्र थे।

बै० जमना प्रसाद थे क्रियात्मक व्यक्तित्व। वह व्यक्तित्व भी ऐसा प्रखर कि रूढ़िवादी तिलमिला उठते। यहां तक कि वे प्रतिक्रियावादी और हिंसक हो उठते। पर बैरिस्टर सा० प्रहार भी कैसा सशक्त करते कि गूढ़ियों का गढ़ बालू के ढेर-सा बिखर जाता। सचमुच, समय की गति अपने व्यक्तित्व में समेटने और उसे अपनी तर्जनी के संकेत पर चलाने की अद्भुत क्षमता थी उनमें।

पर अभी तक उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन अधूरा ही था मेरे मन में। ठीक २२ साल बाद, परिषद् के देवगढ़ अधिवेशन ने उसे पूर्णता प्रदान की। उन दिनों 'वीर' में मेरी "यह जैन समाज है" नामक लेख-माला चल रही थी। रूढ़ि के गढ़ में मैं आजीविका लिए बैठा था। रूढ़िवादियों को मेरे नाम का पता लग गया होता तो चींटी मारने का परहेज करने वाले, मुझ मानव-तन-धारी को मसलने में तनिक भी परहेज न करते। अप्रत्यक्ष रूप से कोप-भाजन तो बन ही गया था। उन्हीं दिनों परिषद् के मन्त्री का संदेश मिला और एक लेखक के नाते मैं भी सम्मिलित हुआ देवगढ़-अधिवेशन में। यहाँ मैंने बहुत पास से देखा इस युग-प्रवर्तक सुधारक को। वही गठीला शरीर, वही मुख की ताम्र-आभा और वही बिजली की चमक आँखों में। ऐसा पूर्ण मानव एक ही दीखा था जीवन में। मुझे ऐसा लगा या तो २०-२२ साल का लम्बा समय सिकुड़ कर २०-२२ माह के बराबर रह गया है या फिर इस धुन के धनी ने समय की गति को यहां भी मोड़ दिया है। मैंने देखा, लगभग ५४ वर्ष की आयु में वे युवा जैसे नहीं, परिपूर्ण यौवन लिए हुए युवा थे। रत्ती-माशे का अंतर भी न दीखा, उनके व्यक्तित्व में। कार्य की गति तो ऐसी जैसे हवा की गति। सामूहिक विवाह का आयोजन था वहाँ। उनके आदेश के सामने सारी अव्यवस्थाएँ व्यवस्थित होती जातीं और कार्य सहज सुन्दरता से होता जाता। जैसा तेज मस्तिष्क वैसी ही तेज वाणी और कदम। कार्य के आरम्भ में जोश और कार्य सफल होने पर विजय की गम्भीर मुस्कान। कितना अदम्य था वह देव-पुरुष! मुझे लगा, जैन समाज के आंगन में राजाराम मोहन राय का अवतरण हुआ है।

समाज सिद्धांत में अपरिग्रहवादी और व्यवहार में व्यापारिक है। विवाह भी यहाँ एक व्यापार है। वर यहाँ नीलाम की वस्तु है और कन्या है बेजुबान गाय। अन्तर्जातीय संबंधों से इसे संक्रामक रोगों से भी अधिक भय है। शिक्षार्थी का स्वाभिमान कुचलना इसका स्वभाव है। दान यहां अभिमान का पूरक है और नाम की भूख यहां बड़ी प्रबल है। मन्दिर जाना यहाँ फैशन है और धर्मपालन एक सुंदर प्रदर्शन है। यहां धर्म केवल शास्त्रों में है और व्यवहार

शास्त्रों से उल्टा है। यहाँ व्रती लेते बहुत हैं पर देते कुछ नहीं। यहाँ पंडित की पंडिताई लक्ष्मी ने बहुत सस्ती खरीद ली है। यहां सहधर्मी-वात्सल्य स्वार्थ और पैसे की सूली पर लटका हुआ है। यहाँ द्वेष और छल ने सज्जनता और धार्मिकता के कपड़े पहिन लिये हैं। ऐसे खोखले समाज के थे वे सुधारक। मैंने अनुभव किया, समाज रूढ़ियों से उठने को तैयार नहीं। पर इस व्यक्तित्व ने उसे रूढ़ि से उठने को बाध्य किया। समाज के बाल-सुलभ अज्ञान की उन्होंने कभी परवाह न की। सब सहकर भी उन्होंने सर्वस्व दिया, विष-पान किया, पर समाज को अमृत दिया।

आज गजरथ, प्रतिष्ठा, मरणभोज, अनमेल-विवाह, विधवा विवाह, अन्तर्जातीय अलगाव समझदारों की दृष्टि में उपहास मात्र रह गये हैं पर नई पीढ़ी को यह स्मरण रखना चाहिए कि इन गढ़ों का उन्मूलन करने के लिए उस देवोपम मानव ने अपने जीवन का सर्वस्व दिया है—मान और अपमान दिया, पद और प्रतिष्ठा दी, धन और यौवन दिया और महाबली कर्ण की भाँति लड़ते-लड़ते जीवन दिया।

आँधी की अवधि सीमित होती है। वह जितनी तेजी से आती है उतनी ही तेजी से चली भी जाती है। पर अपना प्रभाव जड़ और चेतन पर छोड़ जाती है। मैं बै० जमना प्रसाद को आँधी से कम नहीं मानता। उनका प्रभाव इतिहास के पृष्ठों में मिलते-जुलते इन्हीं शब्दों में आँका जाना चाहिए। इतिहास जो चाहे कहे, पर मेरी दृष्टि में तो धर्म रूपी सिक्के ने व्यवहार में अपना चलन बनाये रखने के लिए उनके व्यक्तित्व का आधार लिया था।